अकेले का नाच



अद्वैत भाव से कुंडलिनी जागरण

प्रेमयोगी वज्र

अकेले का नाच

अद्वैत भाव से कुंडलिनी जागरण

प्रेमयोगी वज्र

क्या आपने कभी खुद से, दुनिया से और ईश्वर से गहन संबंध की गहरी इच्छा महसूस की है? यह पुस्तक कुंडलिनी जागरण और अद्वैत जागरूकता के बीच सुंदर अंतर्संबंध की खोज करती है, जो उसी अनुभव की ओर एक परिवर्तनकारी मार्ग प्रदान करती है।

अकेले का नाच इन दो प्राचीन ज्ञान परंपराओं के बीच एक शक्तिशाली तालमेल को उजागर करता है। कुंडलिनी, अर्थात रीढ़ के आधार पर कुंडलित ऊर्जा, आध्यात्मिक जागरण के लिए अपार क्षमता रखती है। दूसरी ओर, अद्वैत सभी अस्तित्वों की आवश्यक एकता की ओर इशारा करता है। यह पुस्तक आपको वास्तविकता को अद्वैत रूप में मानते हुए कुंडलिनी की परिवर्तनकारी शक्ति का उपयोग करने के तरीके के बारे में मार्गदर्शन करती है। व्यावहारिक अभ्यास, ध्यान और व्यावहारिक व्याख्याओं के माध्यम से, आप सीखेंगे कि कैसे:

• अपनी कुंडलिनी ऊर्जा को सुरक्षित और प्रभावी ढंग से सक्रिय करें

• अपने और दुनिया के बीच अलगाव के भ्रम को दूर करें

• आंतरिक शांति, आनंद और प्रेम की गहन अवस्थाओं का अनुभव करें

• प्रामाणिकता और जुड़ाव से भरा जीवन जीएं

चाहे आप एक अनुभवी आध्यात्मिक साधक हों या अभी-अभी अपनी खोज शुरू कर रहे हों, अकेले का नाच दिव्य एकता के प्रति जागृति के लिए एक शक्तिशाली और व्यावहारिक मार्गदर्शिका प्रदान करता है जो पूरे अस्तित्व में व्याप्त है।

***इस पुस्तक के सभी अध्याय मूल रूप से हमारे पिछले काम का हिस्सा थे; जो है, 'कुंडलिनी विज्ञान' श्रृंखला की 'आध्यात्मिक मनोविज्ञान' पुस्तकें। अगर आपको यह पसंद आई, तो आपको पूरे संकलन में और भी बहुत कुछ मिलेगा। ***

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर)

इस तंत्र-सम्मत पुस्तक को किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

कुण्डलिनी का पुरातन जीवनशैली से सम्बन्ध

कुण्डलिनी-विषय को पुरातन-पंथी कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। "कुण्डलिनी" शब्द भी संस्कृत भाषा का है। संस्कृत भाषा को पुरातन पंथी वैसे भी कहा जाता है। मन में निरंतर बस रही सबसे प्यारी छवि को ही कुण्डलिनी कहा जाता है। वह छवि देवता की भी हो सकती है, किसी प्रेमी / प्रेमिका की भी हो सकती है, गुरु की भी हो सकती है, और यहाँ तक कि शत्रु की भी हो सकती है। बिना प्रेम किए ही शत्रु की छवि मन में बस जाती है। कंस के मन में कृष्ण की छवि बस गई थी। इसी तरह, शिशुपाल के मन में भी भगवान् श्रीकृष्ण की छवि बस गई थी। यह अपवाद-स्वरूप है। इसी तरह, तांत्रिक आकर्षण से निर्मित मानसिक छवि बिना प्रेम के या कम प्रेम के साथ भी मन में बस सकती है। अधिकाँश मामलों में परम प्रेमी लोगों की छवि ही मन में बसी होती है। फिर भी, छवि को मन में बसाने वाले मूल साधन के रूप में तांत्रिक आकर्षण (यिन-याँग आकर्षण) ही प्रतीत होता है। ओशो महाराज भी ऐसा ही कहते हैं। कृष्ण के प्रेम में दीवानी मीरा के मन में कृष्ण की छवि बस गई थी। इसी तरह, गोपियों के मन में भी कृष्ण की छवि बस गई थी। रांझा के मन में हीर की छवि बस गई थी, और हीर के मन में रांझा की छवि बस गई थी। लैला के मन में मजनू की, व मजनू के मन में लैला की छवि बस गई थी। इसी तरह से रोमियो के मन में जूलियट की छवि बस गई थी, व जूलियट के मन में रोमियो की छवि बस गई थी। यदि पहाड़ों के प्रेम-प्रसंगों को लें, तो रान्झू के मन में फूलमाँ की, व फूलमाँ के मन में रान्झू की छवि बस गई थी। दुर्योधन के मन में उसके मित्र कर्ण की छवि बस गई थी, व कर्ण के मन में दुर्योधन की। योगी श्री रामकृष्ण परमहंस के मन में माता काली की छवि बस गई थी। इसी तरह, स्वामी विवेकानंद के मन में उनके अपने गुरु व योगी श्री रामकृष्ण परमहंस के रूप वाली कुण्डलिनी-छवि बस गई थी। भक्त हनुमान के मन में भगवान राम के रूप की कुण्डलिनी बस गई थी।

तो क्या प्रेम का नाम ही कुण्डलिनी है? हाँ, प्रेम ही कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी कोई विशेष नाड़ी, विशेष हड्डी या कोई अन्य भौतिक वस्तु नहीं है। हाँ, विभिन्न भौतिक वस्तुओं से कुण्डलिनी को पुष्ट करने में, व उसे जागृत करने में सहायता अवश्य मिलती है। मन में निर्बाध रूप से बनी हुई प्रेमी की छवि ही कुण्डलिनी है। जब कभी भी कोई आदमी उस छवि में कुछ क्षणों के लिए इतना अधिक खो जाता है कि उसे अपने पृथक अस्तित्व का बोध ही नहीं रहता, और वह कुण्डलिनी के साथ एकाकार हो जाता है, तब उसे ही कुण्डलिनीजागरण या पूर्ण समाधि कहते हैं। तो फिर हठयोगी की कुण्डलिनी कैसे विकसित होती है? हठयोगी तो किसी से प्रेम नहीं करता।

हठयोगी योग के निरंतर अभ्यास से अपने मन में कुण्डलिनी को पुष्ट करता है। जो काम प्रेम के कारण स्वयं होता है, वही काम वह योग के बल से करता है। तभी तो वह अपने मन में वैसी कुण्डलिनी छवि को भी जागृत कर सकता है, जिसके प्रति आमतौर पर प्रेम नहीं पनपता। उदाहरण के लिए, वह सूर्य की छवि को, वायु-स्पर्श की अनुभूति की छवि को, ध्वनि की छवि आदि-2 किसी भी प्रकार की छवि को अपने मन में जागृत कर सकता है। यद्यपि उसके लिए प्रेमी मनुष्य की छवि को जागृत करने के लिए लगाए जाने वाले योगबल की तुलना में कहीं अधिक योगबल लगाने की आवश्यकता होती है। वैसा प्रचंड योगबल केवल पहुंचे हुए योगी ही उत्पन्न कर सकते हैं, जो बहुत विरले होते हैं। सबसे सुगम तरीका यह होता है कि पहले अनन्य प्रेमी की छवि को प्रेम-व्यवहार से मन में पुष्ट किया जाए, फिर अतिरिक्त योगबल की सहायता से उसे जागृत किया जाए। प्रेमी मनुष्य की कुण्डलिनी-छवि सर्वाधिक मानवतापूर्ण भी है, क्योंकि उससे मानवमात्र के प्रति आदरबुद्धि व प्रेम अत्यधिक रूप से बढ़ जाते हैं।

अब पुरातन व आधुनिक पक्ष की बात करते हैं। किसी व्यक्ति के साथ लम्बे समय तक परस्पर सद्भाव, सद्व्यवहार, सहयोग, मेल-मिलाप, निःस्वार्थ भाव व तारतम्य को बनाए रखकर ही उसके प्रति प्रेम उपजता है। ऐसा करने को पुरातन पंथ कहा जाता है, और ऐसा करने वाले को पुरातनपंथी। अवसरवाद को आधुनिकता कहा जाता है। अवसरवाद से प्रगाढ़ प्रेम-सम्बन्ध को बनने का अवसर ही नहीं मिल पाता है, साथ में उससे बना-बनाया प्रेम-सम्बन्ध भी नष्ट हो जाता है। जब तक दूसरा व्यक्ति अपने लिए हितकारक लगेगा, तभी तक उससे प्रेमसम्बन्ध बना रहेगा। जैसे ही वह अहितकारक लगने लगेगा, वैसे ही बना-बनाया प्रेमसम्बन्ध टूट जाएगा। इसे ही अवसरवाद कहते हैं। अपने मन में किसी व्यक्ति की छवि को स्थिर कुण्डलिनी का रूप प्रदान करने के लिए, अपने हित-अहित को दरकिनार करते हुए उससे लम्बे समय तक प्रेमसम्बन्ध बना कर रखना पड़ता है। इसे पुराना फैशन कहा जाता है। तभी तो मैंने कुण्डलिनी को पुरातन-पंथी कहा है।

आत्मज्ञान व अद्वैतभाव भी पुरातन-पंथी ही हैं। आत्मज्ञान कुण्डलिनी से ही उपलब्ध होता है। आत्मज्ञान के बाद भी कुण्डलिनी मन में निरंतर बसी रहती है। इसी तरह, पिछली पोस्टों में सिद्ध किया गया है कि अद्वैत व कुण्डलिनी एक-

दूसरे को बढ़ाते रहते हैं। इसी तरह, सभी धार्मिक क्रियाकलाप भी पुराने तौर-तरीके के रूप में जाने जाते हैं, क्योंकि सभी का एकमात्र उद्देश्य कुण्डलिनी ही है।

अतः सिद्ध होता है कि जीवन की पुरानी शैली कुण्डलिनी-सम्मुखता के रूप में है, जबकि तथाकथित आधुनिक शैली कुण्डलिनी-विमुखता के रूप में है। पुराने और नए तौर-तरीकों के बीच में कोई भी भौतिक विभिन्नता नहीं है। केवल दृष्टिकोण, विचारधारा, व जीवन-व्यवहार का ही अन्तर है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि जीवन के नए तौर-तरीके से आध्यात्मिक उन्नति बहुत दुर्लभ है। आजकल सर्वाधिक व्यावहारिक तरीका यह है कि आधुनिक व पुराने तौर-तरीकों को मिश्रित रूप में अपनाया जाए। यही तंत्रात्मक जीवन-पद्धति प्रेमयोगी वज्र द्वारा रचित “शरीरविज्ञान दर्शन” का मुख्य आधार है।

कुण्डलिनी का यिन-यँाँग से संबंध

कुण्डलिनी के लिए यिन-यांग आकर्षण बहुत आवश्यक है। चुम्बक के विपरीत ध्रुव एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। घनात्मक विद्युत् आवेश ऋणात्मक विद्युत् आवेश को आकर्षित करता है, तथा ऋणात्मक घनात्मक को। प्रकाश अन्धकार को आकर्षित करता है, और अन्धकार प्रकाश को। भाव व अभाव एक-दूसरे को आकर्षित **करते हैं। इसी तरह, स्त्री व पुरुष एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। विपरीत भावों के बीच में परस्पर आकर्षण को यिन-यांग आकर्षण कहते हैं, और यह कुण्डलिनी के विकास में अहम् भूमिका निभाता है।**

प्रेमयोगी वज्र अपने बचपन में एक गंभीर, निर्बल सा, रोगग्रस्त सा, गहरे रंग वाला, लम्बे शरीर वाला, आलसी सा, व छोटी नाक वाला बालक था। वह एक एक ऐसे बालक के प्रति आकर्षित हो गया था, जो चंचल, चुस्त, बलवान, नीरोग, हलके रंग वाला, लम्बी-तीखी नाक वाला, व छोटे शरीर वाला था। वह बालक उसका दूर-पार का रिश्तेदार भी था, व मित्र भी था। वह उम्र में कुछ बड़ा था। दोनों एक ही परिवार में निवास करते थे। यह यिन-यांग आकर्षण का एक अच्छा उदाहरण था। सभी गुण उन दोनों में एक-दूसरे के विपरीत प्रतीत होते थे, फिर भी दोनों के बीच में प्यार था। प्यार के साथ हल्का-फुल्का झगड़ा, या हलकी-फुल्की नोंक-झोंक तो चलती ही रहती है। पर वे दोनों क्षणिक कटुता को भूलकर एकदम से सामान्य हो जाया करते थे। कई बार तो लम्बे समय के लिए भी मनमुटाव हो जाता था, यद्यपि अनासक्ति व अद्वैत के साथ। यह अनासक्ति व अद्वैत परिवार के आध्यात्मिक माहौल के कारण था। इस तरह से, प्रेमयोगी वज्र के मन में उस बालक की छवि एक मजबूत कुण्डलिनी के रूप में प्रतिष्ठित हो गई थी।

कुछ बड़े होने पर दोनों का वियोग हो गया। प्रेमयोगी वज्र को शून्यता का पहला चरण महसूस हुआ। वास्तव में उसके मन के सभी भाव उस कुण्डलिनी के साथ जुड़ गए थे, और कुण्डलिनी के क्षीण होने से वे भी क्षीण जैसे हो रहे थे। उसी दौरान उसे एक अन्य समाज के साथ रहने का मौका मिला। उस समाज में एक देवीरानी ऐसी थी, जो प्रेमयोगी वज्र को उस बालक के जैसी लगी। अतः बालक के रूप वाली मानसिक कुण्डलिनी के साथ लगने वाली उसकी समाधि देवीरानी के रूप को स्थानांतरित होने लगी। देवीरानी-निर्मित कुण्डलिनी बालक-निर्मित कुण्डलिनी का स्थान लेने लगी। यह समाधि-स्थानान्तरण पतंजलि योगसूत्र के भाष्य (संभवतः शंकराचार्य-कृत) में भी उल्लिखित है। वह समाधि पहले वाली समाधि से भी मजबूत थी, क्योंकि उसमें स्त्री-पुरुष आकर्षण भी पहले से विद्यमान यिन-यांग आकर्षण के साथ जुड़ गया था। इसलिए वह समाधि दो सालों में ही शिखर-स्तर तक पहुँच गई।

फिर दोनों प्रकार के समाजों का वियोग हो गया। इससे प्रेमयोगी वज्र को शून्यता का दूसरा चरण महसूस हुआ। वह पहले वाले चरण से भी बहुत मजबूत था। उन्हीं वृद्ध आध्यात्मिक पुरुष (वैबसाईट में वर्णित) के सान्निध्य से उसे उसी चरण के दौरान क्षणिक आत्मज्ञान हो गया।

कहने का तात्पर्य है कि स्त्री-पुरुष आकर्षण ही यिन-यांग आकर्षण का शीर्ष स्तर है। समाज में अन्य स्तरों के यिन-यांग आकर्षण पर तो कुछ जोर दिया भी जाता है, परन्तु स्त्री-पुरुष आकर्षण की उपेक्षा की जाती है। अगर स्त्री-पुरुष आकर्षण एक-दूसरे के रूप की कुण्डलिनी को पुष्ट न भी कर सके, तो भी यह किसी तीसरे व्यक्तित्व (गुरु, देव या अन्य प्रेमी) के रूप की कुण्डलिनी को शक्ति देता है, और उसे जागृत भी कर सकता है। यही वाक्य तंत्रयोग का सार है। यहाँ तक कि अन्य स्तरों के यिन-यांग आकर्षण भी इसी प्रकार का अप्रत्यक्ष रूप का कुंडलिनी-वर्धक प्रभाव पैदा कर सकते हैं, मस्तिष्क के आध्यात्मिक केन्द्रों को क्रियाशील करके। दरअसल, यिन-यांग घटना द्वैत पैदा करती है। यह जल्द ही अद्वैत के द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है, खासकर के आध्यात्मिक (नॉनडुअल) वातावरण में। अद्वैत के साथ कुंडलिनी विकास होता है, क्योंकि दोनों एक साथ रहते हैं।

अधिकाँश समाजों में, विभिन्न सामजिक पहलुओं का हवाला देते हुए साधारण प्रकार के यिन-यांग आकर्षण को भी हतोत्साहित किया जाता है। उन पहलुओं में मुख्य है रूढ़ीवाद। रूढ़ीवाद में जातिवाद, नस्लवाद, अर्थवाद, व्यवसायवाद, लिंगवाद आदि विभिन्न भेदभावकारी वाद आते हैं। भेदभाव तो वैसे यिन-यांग आकर्षण के लिए आवश्यक हैं, परन्तु यह प्रेमभाव पर हावी नहीं होना चाहिए। भेदभाव व प्रेमभाव, दोनों भाव एकसाथ होने चाहिए। यही तो द्वैताद्वैत है। यिन-यांग आकर्षण द्वैत का प्रतीक है, और प्रेम अद्वैत का। द्वैताद्वैत ही सत्य है। खाली अद्वैत तो अधूरा है। यदि प्रेमभाव ही नहीं होगा, तो भेदभाव से उत्पन्न यिन-यांग आकर्षण का लाभ कैसे मिल पाएगा?

कुण्डलिनी व साँसों पर ध्यान के बीच में संबंध

कुण्डलिनी-ध्यान में साँसों का बहुत महत्त्व है

कुण्डलिनी के ध्यान से साँसें भी खुलकर चलने लगती हैं, व शरीर का मैटाबोलिजम भी सुधर जाता है। इसी तरह, गहरी व नियमित साँसों पर (उससे गति कर रहे शरीर के साथ) ध्यान देने से शरीर के चक्रों पर (विशेषकर अनाहत व मणिपुर चक्र पर), व नासिकाग्र पर कुण्डलिनी प्रकट हो जाती है। नासिकाग्र पर विशेषतः तब प्रकट होती है, जब नासिकाग्र का स्पर्श करती हुई साँसों की हवा का ध्यान किया जाता है। यही बात गीता में भी लिखी है। उसमें "नासिकाग्र पर ध्यान" नामक एक विषय आता है। कई विद्वान इसे भौहों के बीच का आज्ञाचक्र मानते हैं, अर्थात वे नासिका के शुरू के भाग को आज्ञाचक्र बताते हैं, क्योंकि उनकी दृष्टि में नाक वहां से शुरू होती है। पर वास्तव में नासिका का अग्र होठों के साथ लगा होता है, जहां से नाक शुरू होती है। मैं इसे प्रमाण के साथ कह सकता हूँ। मैं जब सुबह की सैर पर जाता हूँ, और नाक के शुरू के संवेदनशील भाग का स्पर्श सुबह की ठंडी हवा के साथ अनुभव करता हूँ, तो मेरे नासिकाग्र पर, नाक की शिखा (टिप) पर या उसके थोड़ा बाहर मेरी कुण्डलिनी प्रकट हो जाती है। जब मैं उस सांस के ध्यान के साथ पांच बार पूरी सांस (अन्दर व बाहर दोनों तरफ की) को एक से पांच तक की गिनती के साथ गिनता हूँ (अधिकाँश तौर पर कदमों को भी साँसों के साथ मिलाकर), तथा पांच बार सांस बिना गिनती के लेता हूँ, और इस तरह के क्रम को बार-२ दोहराता हूँ, तब कुण्डलिनी और भी अधिक स्थिर व स्पष्ट हो जाती है।

इसी प्रकार, साँसों के ध्यान के साथ "सोऽहम" का भी मन में उच्चारण कर सकते हैं

इससे ॐ की शक्ति भी प्राप्त हो जाती है। संस्कृत शब्द "सो" का उच्चारण सांस भरते समय, व "हम" का उच्चारण सांस छोड़ते समय करें। "सो / सः" का अर्थ है, "वह (ईश्वर)"। संस्कृत शब्द "हम / अहम्" का अर्थ है, मैं। अर्थात मैं ही वह ईश्वर / ब्रम्ह हूँ। योग में हर प्रकार की साँसों का महत्त्व है। यदि साँसें उथली हो, तो नासिकाग पर उनका ध्यान आसान होता है। कुछ अधिक गहरी होने पर विशुद्धि चक्र पर, उससे अधिक गहरी होने पर अनाहत चक्र पर, उससे भी अधिक गहरी होने पर मणिपुर चक्र पर व सर्वाधिक गहरी होने पर स्वाधिष्ठान-मूलाधार चक्र पर उन साँसों का ध्यान करना आसान होता है। पेट से सांस लेते हुए, नाभि चक्र पर साँसों का ध्यान करना सर्वाधिक आसान व प्रभावशाली प्रतीत होता है।

अद्वैत और साँसें

देहपुरुष की तरह अद्वैतभाव को धारण करने से कुण्डलिनी भी उजागर हो जाती है, तथा साँसें (मैटाबोलिजम के साथ) सुधर जाती हैं। साँसें नियमित व गहरी हो जाती हैं। साँसों की हवा मीठी लगने लगती है, व उससे संतुष्टि महसूस होने लगती है। तनाव समाप्त होने लगता है। शरीर की कार्यप्रणालियाँ तनावमुक्त हो जाती हैं। हृदय की गति सुधर जाती है। हृदय का बोझ कम हो जाता है। मन में एक शान्ति सी छा जाती है, आनंद के साथ।

साँसों से शीघ्र और दोगुना साधना-लाभ

दोहरा तरीका भी अपनाया जा सकता है। इसमें अद्वैतभाव (मुख्यतः शरीरविज्ञान दर्शन की सहायता से) को धारण करके साँसों को किंचित गहरा व नियमित किया जाता है। फिर उन साँसों पर ध्यान देते हुए, और अधिक लाभ प्राप्त किया जाता है। अद्वैतभाव के अतिरिक्त कुण्डलिनी के सीधे ध्यान से भी साँसों को सुधारा जा सकता है। अद्वैतभाव व कुण्डलिनी-ध्यान, दोनों की एक साथ सहायता भी ली जा सकती है। अद्वैतभाव से तो कुण्डलिनी वैसे भी प्रकट हो ही जाती है। उस उजागर हुई कुण्डलिनी पर अतिरिक्त ध्यान भी दिया जा सकता है। फिर लम्बे समय तक साँसों पर ध्यान देने से कुण्डलिनी, ध्यान के अंतर्गत स्थिर व स्पष्ट जैसी हो जाती है। वह कुण्डलिनी फिर पूरे शरीर को तरोताजा, तनावमुक्त, व रोगमुक्त कर देती है।

साँसों से उत्पन्न गति साधना-ध्यान को बल देती है

साँसों पर ध्यान देते हुए, सांस से गति करते हुए शरीर के भागों पर स्वयं ही ध्यान चला जाता है। शरीर के लगभग सभी मुख्य भाग सांस के साथ गति करते हैं। इस तरह से पूरा शरीर ही ध्यान में आ जाता है। पूरा शरीर अद्वैतपूर्ण पुरुषों से भरा हुआ है। अतः उनके अप्रत्यक्ष ध्यान से मन स्वयं ही अद्वैतभाव से भर जाता है। "शरीरविज्ञान दर्शन" के अनुसार ये देहपुरुष शरीर की कोशिकाओं, व शरीर के जैव-रसायनों के रूप में विद्यमान हैं। ये देहपुरुष प्राणियों की तरह ही समस्त व्यवहार करते हैं। क्योंकि अद्वैतभाव रखने वाला कोई प्राणी एक मनुष्य ही हो सकता है, अन्य जीव

नहीं। अन्य जीवों में तो भावों की भी न्यूनता होती है, द्वैत-अद्वैत का तो प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए देहपुरुष के ऊपर एक मनुष्य का रूप आरोपित होने लगता है। क्योंकि एक योगी ने एक मनुष्य (गुरु या प्रेमी) को अपनी कुण्डलिनी बनाया हुआ होता है, इसलिए वह उसी मनुष्य के रूप का सर्वाधिक अभ्यस्त होता है। इससे उस विशेष मनुष्य का रूप अर्थात उस ध्यान करने वाले योगी की कुण्डलिनी देहपुरुष के ऊपर आरोपित हो जाती है। योग-प्राणायाम के अभ्यास से भी साँसें कुण्डलिनी के साथ जुड़ जाती हैं। इससे भी साँसों के ध्यान से कुण्डलिनी स्वयं ही प्रकट हो जाती है। इस तरह से, विभिन्न प्रयासों से कुण्डलिनी लगातार पुष्ट होती रहती है, जिससे मन व शरीर, दोनों हृष्ट-पुष्ट बने रहते हैं। कालान्तर में कुण्डलिनी जागृत भी हो सकती है। इन सभी प्रयासों में शरीरविज्ञान दर्शन की एक अहम भूमिका होती है।

प्राणोत्थान- कुण्डलिनी जागरण की शुरुआत

प्राण क्या है

प्राण शरीर की शक्ति को कहते हैं। यह जीवनी शक्ति है, जो जीवन को चलायमान रखती है। प्राणवायु शक्ति को बना कर रखती है। इसी तरह, खाया-पिया हुआ अन्न-जल भी इस शक्ति को बना कर रखता है। शरीर का हिलना-डुलना, काम-काज व योग-व्यायाम भी इस शक्ति को बना कर रखते हैं। काम, क्रोध आदि मानसिक विकार, एवं विभिन्न रोग इस शक्ति को घटाते रहते हैं।

प्राण का ऊर्ध्वगमन (ऊपर जाना) व अधोगमन (नीचे गिरना)

साधारण, संतुलित, व आदर्श मानवीय अवस्था में प्राण पूरे शरीर में समान रूप से व्याप्त रहता है। उसका प्राण मन-मस्तिष्क में व बाह्य इन्द्रियों में समान रूप से कार्य करता है। जब व्यक्ति आदर्श मानवीय अवस्था से नीचे गिरने लगता है, तब उसका प्राण बाह्य इन्द्रियों की तरफ ज्यादा प्रवाहित होने लगता है। उसी अनुपात में उसके मस्तिष्क में प्राण कम होने लगता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि उसका प्राण शरीर के निचले चक्रों में केन्द्रित होने लगता है। जब उसके प्राण का अधिकाँश भाग बाह्य इन्द्रियों में समाहित हो जाता है, तब वह दानव या पशु जैसा बन जाता है। इस स्थिति को हम कह सकते हैं कि उसका प्राण पूरी तरह से नाभिचक्र से नीचे केन्द्रित हो गया है। इससे आदमी द्वैतवादी, आसक्त, व मन के दोषों से युक्त हो जाता है। ऐसा व्यक्ति जब ऐसे जीवन की उलझनों से थक जाता है या उनसे ऊब जाता है, तब वह एकांत व शान्ति की खोज में निकल पड़ता है। वह बाह्य इन्द्रियों से उपरत हो जाता है। ऐसे में उसके दुनियादारी से प्रचंड बने हुए प्राण के पास ज्यादा शारीरिक काम नहीं रहता। इसलिए वह मस्तिष्क की तरफ चढ़ने लगता है, और वहां अपना असर दिखाता है। इसे ही प्राणोत्थान कहते हैं। इससे मस्तिष्क में चित्र-विचित्र व पुरानी यादें आनंद के साथ उमड़ने लगती हैं। इससे वे शान्ति के साथ आत्मा में लीन होने लगती हैं। मन में चारों ओर शान्ति छा जाती है। मन का कचरा साफ होने लगता है। इस तरह से महामानव या देवता का प्राण ऊपर वाले चक्रों में अधिक केन्द्रित होता है।

पाचन तंत्र एक दूसरे मस्तिष्क के रूप में

मैंइस उपरोक्त तथ्य को एक उदाहरण से स्पष्ट करना चाहता हूँ। व्रत-उपवास वाले दिन मन-मस्तिष्क में स्वयं ही ध्यान होता रहता है। पाचन प्रणाली को दूसरा मस्तिष्क भी कहते हैं, क्योंकि वह बहुत अधिक प्राण-ऊर्जा का भक्षण करती है। व्रत से इस प्रणाली को आराम मिलने के कारण वहां की प्राण-ऊर्जा मस्तिष्क को उपलब्ध हो जाती है।

वैज्ञानिक भी इस बात की पुष्टि कर चुके हैं कि मानव-मस्तिष्क के विकास में आग की खोज के साथ तेज गति आई। उसके पाचन तंत्र का अधिकाँश काम आग ने कर दिया। इससे पाचन तंत्र की अधिकाँश प्राण-शक्ति मस्तिष्क को उपलब्ध होने लगी।

प्राणोत्थान से कुण्डलिनी का पोषण

यदि मस्तिष्क में पहुंचे हुए प्राण से कुण्डलिनी (एक विशेष मानसिक चित्र) को पुष्ट न किया जाए, तो उससे कुण्डलिनी जागृत नहीं हो पाएगी। इसकी बजाय उससे विभिन्न प्रकार के मानसिक चित्र एकसाथ पुष्ट होते रहेंगे, जिससे प्राणशक्ति सब के बीच में बंट जाएगी। उससे पर्याप्त बल के अभाव में कोई भी मानसिक चित्र जागृत नहीं हो पाएगा। अतः प्राणोत्थान के साथ कुण्डलिनी-ध्यान भी आवश्यक है। यदि पहले से ही कुण्डलिनी-ध्यान किया जा रहा है, तब तो और भी अच्छा है। ***इसीलिए प्राणोत्थान को कुण्डलिनी उत्थान भी कहते हैं।***

मस्तिष्क के साथ प्रत्येक चक्र पर कुण्डलिनी-ध्यान सहायक है, क्योंकि सभी चक्रों पर बहुत सी प्राण-शक्ति जमा होती है, जो कुण्डलिनी को पुष्ट करती है। वास्तव में कहीं पर भी ध्यान की गई कुण्डलिनी मस्तिष्क में ही पुष्ट होती है, क्योंकि अंततः मस्तिष्क ही सभी अनुभवों का स्थान है।

प्राणोत्थान का सबसे श्रेष्ठ तरीका

वास्तव में प्राणोत्थान की बहुत सी विधियां हैं। यद्यपि तंत्र का यौनयोग (सेक्सुअल योगा) इसके लिए सबसे श्रेष्ठ व व्यावहारिक तरीका है। इससे दुनियादारी के झमेले में फंसे हुए आदमी का भी एकदम से प्राणोत्थान हो जाता है। आदमी अचानक ही चमत्कारिक रूप से अपने आप को रूपांतरित सा महसूस करता है। यौनयोग दिन के समय पूर्ण

चेतना की अवस्था में व पूर्ण निष्ठा-समर्पण से किया जाए, तो सर्वोत्तम है। हालांकि इसको पूर्ण सामाजिक व मानवीय उत्तरदायित्वों के साथ करना चाहिए।

प्राणोत्थान के लक्षण

मन में कुण्डलिनी का ध्यान निरंतर व स्वयं ही होता रहता है। शान्ति, आनंद, हल्केपन, सात्विकता, संतुष्टि आदि दिव्य गुणों का अनुभव होता है। योगसाधना करने में बहुत मन लगता है। संसार के प्रति लिप्सा (क्रेविंग) नहीं रहती, हालांकि सामान्य इच्छाएँ नहीं रुकतीं। किसी भी चीज में आसक्ति नहीं रहती है। हो जाए या मिल जाए, तो भी ठीक, और न होए या न मिले, तो भी ठीक। सभी कुछ एकसमान सा लगता है। यह अद्वैत है। चिंता व तनाव समाप्त हो जाते हैं। भूख अच्छी लगती है। अच्छा स्वास्थ्य महसूस होता है। भ्रमण के लिए मन करता है। अवसाद समाप्त हो जाता है। उत्तम मानसिकता अपने चरम के आसपास होती है। किसी से वैर-विरोध नहीं रहता। व्यक्ति सहनशील, हंसमुख, आकर्षक, सर्वप्रिय व मिलनसार बन जाता है। क्षमा भाव बना रहता है। काम, क्रोध अदि मन के विकार गायब हो जाते हैं। भारी, अस्त-व्यस्त व तेज-तर्रारी वाले शारीरिक कामों में मन नहीं लगता, क्योंकि शरीर की अधिकाँश प्राणशक्ति मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होती रहती है। जरूरत पड़ने पर आदमी ऐसे काम कर भी लेता है, यद्यपि उससे उसका प्राणोत्थान नीचे गिरने लगता है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए प्राणोत्थान बहुत जरूरी

इसी प्राणोत्थान की अवस्था में अनुकूल परिस्थितियाँ मिलने पर कुण्डलिनी-जागरण होता है। प्राणोत्थान के बिना कुण्डलिनी-जागरण नहीं होता।

कुण्डलिनी-जागरण शिखर-बिंदु तक पहुंचे हुए प्राणोत्थान के रूप में

प्राणोत्थान व कुण्डलिनी-जागरण के बीच में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है। दोनों के बीच में केवल अभिव्यक्ति के स्तर का ही अंतर है। इसीलिए कई अति महत्त्वाकांक्षी लोग प्राणोत्थान को ही कुण्डलिनी जागरण समझ लेते हैं। पूर्णता को प्राप्त प्राणोत्थान ही कुण्डलिनी जागरण कहलाता है। प्राणोत्थान तो लम्बे समय तक भी रह सकता है। यहाँ तक कि यह कई सालों तक भी रहता है, विशेषतः यदि कुण्डलिनी तांत्रिक प्रकार की हो। कुण्डलिनी के साथ प्राणोत्थान ही आत्मज्ञान करवाता है। कुण्डलिनी जागरण तो केवल इसे अतिरिक्त रूप में पुष्ट ही करता है, अन्य कुछ नहीं। किताबों के अध्ययन व अन्य गहन दिमागी कार्यों से भी प्राणोत्थान होता है, यद्यपि इसे तीव्रता, आध्यात्मिकता व लम्बे समय तक स्थिरता कुण्डलिनी से ही मिलती है। प्राणोत्थान के विपरीत कुण्डलिनी जागरण क्षणिक होता है। इसका अनुभव आधा या एक मिनट से अधिक नहीं रहता। अधिकाँश लोग तो विलक्षणता के डर से इसे कुछ ही सेकंडों में नीचे उतार देते हैं, जैसा ही इस वेबसाईट के नायक प्रेमयोगी वज्र के साथ भी हुआ था।

गुरु के बारे में एक आधारभूत रहस्योद्घाटन

गुरु क्या है

गुरु वह विलक्षण व्यक्तित्व है, जिस पर विश्वास है, जिससे प्रेम है, और जो अपने से कहीं अधिक महत्त्वशाली प्रतीत होते हैं। संस्कृत शब्द "गुरु" का अर्थ ही भारी या बड़ा है।

क्या एक प्रेमी गुरु का रूप ले सकता है

काफी हद तक एक प्रेमी गुरु का रूप ले सकता है, यद्यपि अधिकाँश मामलों में पूर्णरूप से गुरु नहीं बन सकता। वैसे कुछ अपवाद तो हर जगह ही देखने को मिल जाते हैं। अधिकांशतः प्रेमी के प्रति आदरभाव कम होता है, और उसके प्रति महत्त्वबुद्धि भी कम होती है। उससे प्रेमी का चित्र मन में अच्छी तरह से नहीं बैठता। गुरु के प्रति तो प्रेम के साथ आदरभाव व महत्त्वबुद्धि दोनों का होना आवश्यक है। इसीलिए गुरु अधिकांशतः आयु में वृद्धावस्था के करीब होते हैं। इससे वे ज्ञानी, ध्यानी, सम्मानित व योगसाधक होते हैं। वे आध्यात्मिक कर्मकांड करने वाले, व देवता के पुजारी होते हैं। वे साधारण व सात्विक जीवन जीने वाले होते हैं। वे सर्वप्रिय, मृदुभाषी, संतुलित, अहिंसक व कट्टरता से रहित होते हैं। उनके मन-मंदिर में सभी सद्‌गुणों का वास होता है। वे मन के दोषों से रहित, अनासक्त व अद्वैतशील होते हैं। गुरु के प्रति उपरोक्त आदरबुद्धि व महत्त्वबुद्धि के कारण उनका लीलामय रूप शिष्य के मन में पक्की तरह से बैठ जाता है, और लम्बे समय तक बना रहता है।

गुरु में दिव्य गुणों का होना आवश्यक है

ऐसा इसलिए है क्योंकि कुंडलिनी स्वयं दिव्य है और दिव्य गुणों का उत्पादन करती है। इसलिए, गुरु की दिव्यता एक व्यक्ति के दिमाग में कुंडलिनी को मजबूत करने में बेहतर रूप से मदद करती है। इसके अलावा, देवत्व भगवान के अनुग्रह को भी आकर्षित करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भगवान भी देवत्व से भरे हुए हैं। भगवान की कृपा भी कुंडलिनी वृद्धि में एक महत्वपूर्ण कारक है।

गुरु व प्रणय-प्रेमी एक दूसरे के पूरक के रूप में

गुरु व प्रणय-प्रेमी की जुगलबंदी तंत्र का एक अभिन्न व आधारभूत हिस्सा है। तंत्र के अनुसार, गुरु व प्रणय-प्रेमी/प्रेमिका के बीच में किसी भी प्रकार से सम्बन्ध या संपर्क बना रहना चाहिए। कई आध्यात्मिक आकांक्षी प्रेमी के साथ भी और गुरु के साथ भी एकसाथ मजबूत संबंध (मानसिक या शारीरिक या दोनों) बना कर रखते हैं। यह भी स्वयं ही प्रेमी और गुरु की मानसिक छवियों के परस्पर मिलन का कारण बनता है। उससे गुरु के प्रति बनी हुई आदरबुद्धि प्रणय-प्रेमी के ऊपर स्थानांतरित हो जाती है, और प्रणय-प्रेमी के प्रति किया गया प्रणय-प्रेम गुरु के ऊपर शुद्ध प्रेम के रूप में स्थानांतरित हो जाता है। यह ऐसे ही होता है, जैसे एक अँधा और एक लंगड़ा एक-दूसरे की सहायता करते हैं। आमतौर पर गुरु की वृद्धावस्था के कारण उनके प्रति उतना मजबूत व आकर्षण से भरा हुआ प्रेम पैदा नहीं होता, जितना कि एक यौनप्रेमी के प्रति होता है। इसी तरह, एक यौनप्रेमी के प्रति उतनी आदरबुद्धि नहीं होती, जितनी एक वृद्ध गुरु के प्रति होती है। इसका कारण यह है कि अधिकांशतः प्रणय-प्रेमी भौतिकवादी, कम आयु वाला, कम अनुभव वाला, कम योग्यता वाला, कम योगसाधना करने वाला, कम गुणों वाला, मन के दोषों से युक्त व द्वैतशील होता है।

दो कुण्डलिनियों का एकसाथ निर्माण, व विकास

गुरु व प्रेमी के निरंतर संपर्क से, दोनों के लीलामय रूपों की कुण्डलिनियां (स्पष्ट व स्थायी मानसिक चित्र) एकसाथ विकसित होती रहती हैं। वे दोनों एक-दूसरे को शक्ति देती रहती हैं। भौतिक माहौल में प्रेमी की व अध्यात्मिक माहौल में गुरु की कुण्डलिनी अधिक विकसित होती है। अनुकूल परिस्थितियों के अनुसार, दोनों में से कोई भी कुण्डलिनी पहले जागृत हो सकती है। अधिकाँशतः गुरु के रूप की कुण्डलिनी ही जागृत होती है, प्रणय-प्रेमी की कुण्डलिनी तो उसकी सहायक बन कर रह जाती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पूर्ण मानसिक मिलन तो गुरु के साथ ही संभव है। प्रणय-प्रेमी से सम्बंधित शारीरिक उत्तेजना उसके रूप की कुण्डलिनी से एकाकार होने (कुण्डलिनी जागरण) की राह में रोड़ा बन जाती है। यह सारा कुछ ठीक इसी तरह ही प्रेमयोगी वज्र के साथ भी हुआ, जो इस वेबसाईट का नायक है

अवसादरोधक दवा से कुण्डलिनी लाभ

अवसादरोधक दवा कैसे काम करती है

प्रेमयोगी वज्र प्रचंड दुनियादारी में उलझा हुआ व्यक्ति था। उससे उसका मन बहुत अशांत हो गया था। यद्यपि वह शरीरविज्ञान दर्शन की सहायता से उसे काफी हद तक काबू कर रहा था। परन्तु फिर भी वह पूरी तरह से काबू नहीं हो पा रहा था। एक बार वह गंभीर गैस्ट्राइटीस के वहम से एंडोस्कोपी करवाने गया। चिकित्सक ने उसकी मनोदशा को समझते हुए उसे डेढ़ महीने की अवसादरोधक व क्रोधनाशक दवा (नाम याद नहीं) प्रेस्क्राईब कर दी। उसे उसको खाते हुए अपने अवसाद व क्रोध में काफी कमी महसूस हो रही थी। उसने गूगल पर पढ़ लिया था कि एक महीने तक रोजाना खाने पर ही इस दवा का प्रभाव स्थाई बन पाता है। अतः वह दवा को खाता रहा। उसे लग रहा था कि जो काम आध्यात्मिक पुस्तक शरीरविज्ञान करती थी, वही काम वह दवा भी कर रही थी। यद्यपि दवा का काम कुछ ज्यादा ही जड़ता, उग्रता, स्मरणशक्ति की कमी, और कृत्रिमता से भरा हुआ था। उसे आत्मजागरण व कुण्डलिनीजागरण का अद्वैतकारक प्रभाव भी अवसादरोधी दवा के अद्वैतकारक प्रभाव से मिलता-जुलता लगा, यद्यपि शुद्धता और स्तर में अंतर के साथ। एकहार्ट टोल्ले ने भी लगभग ऐसा ही बयान किया है कि अवसादरोधी दवा का प्रभाव आत्मजागरण के प्रभाव जैसा होता है, यद्यपि तुलनात्मक रूप से बहुत निम्न दर्जे का और उग्रता के साथ।

वह लम्बी खांसी से परेशान था

उसने बहुत सी एंटीबायोटिक दवाइयां खाईं, पर खांसी ठीक नहीं हुई। वह समझ रहा था कि एंटीबायोटिक दवाइयाँ काम नहीं कर रही थीं, जीवाणुओं के प्रतिरोध के कारण। वास्तव में उसकी खांसी की वजह क्रोनिक गेस्ट्राइटीस थी। जब उसने 1 महीने तक पेंटोपराजोल और डॉमपेरिडोन दवाइयां खाईं तथा योग करने के साथ कुछ सावधानियां बरतीं; तब उसकी खांसी जड़ से ख़त्म हो गई। आजकल के तनाव भरे जीवन में यह समस्या विकराल हो गई है, जिस बारे में अधिकाँश लोग गलतफहमी का शिकार हो जाते हैं।

मस्तिष्कप्रभावी दवाओं से रूपांतरण

शरीरविज्ञान दर्शन एक अद्वैतवादी सोच है। इससे सिद्ध होता है कि वह दवा अद्वैत को उत्पन्न कर रही थी। माईंड अल्टरिंग ड्रग्स भावनाओं को नियंत्रित करने के लिए पावर ब्रेक की तरह काम करती है, जिससे मस्तिष्क के सॉफ्ट टिशू को नुक्सान पहुँच सकता है। उसे अपनी स्मरणशक्ति कम होती हुई महसूस हो रही थी। क्रोध के समय तो उसका मस्तिष्क जवाब देने लगता था, इसलिए वह क्रोध कर ही नहीं पाता था। क्रोध से उसका मस्तिष्क दबावयुक्त, भारी, सुस्त, और अंधकारमय सा हो जाता था। शारीरिक रूप से भी वह शिथिल व कमजोर जैसा रहने लग गया था। उसकी कार्यक्षमता काफी घट गई थी। वह अपने अचानक हुए परिवर्तन को देखकर हैरान था। इसलिए उसने 30-35 दिन के बाद वह दवा बंद कर दी, और बची हुई दवा कूड़ेदान में डाल दी। यद्यपि उसका रूपांतरण स्थायी रूप से हो गया था। वह पिछली अवस्था में कभी भी वापिस नहीं लौट पाया।

अवसादरोधक दवा आनंद व अद्वैत को कैसे उत्पन्न करती है?

इससे व्यक्ति किसी के भी बारे में गहराई से नहीं सोच पाता, और न ही ढंग से विश्लेषण या जजमेंट कर पाता है। इससे सभी वस्तु-विचारों के प्रति स्वयं ही साक्षीभाव पैदा हो जाता है। उससे आनंद पैदा होता है। साथ में, विश्लेषण व जजमेंट की कमी से सभी वस्तु-विचारों के बीच का अंतर मिटने लगता है, जिससे सभी कुछ एक जैसा लगने लगता है। यही तो अद्वैत है। यह सब ऐसे ही होता है, जैसे शराब के हल्के नशे में होता है। सीधा सा मतलब है कि मेडीटेशन बुद्धि-शक्ति को बढ़ा कर अद्वैतभाव को उत्पन्न करती है, जबकि मस्तिष्क-परिवर्तक दवाएं बुद्धि-शक्ति को घटा कर। फिर भी ये दवाएं आध्यात्मिक जागरण की झलक तो दिखा ही देती हैं। उस झलक का पीछा करते हुए आदमी वास्तविक आत्म-जागरण को भी प्राप्त कर सकता है।

मस्तिष्क-परिवर्तक दवाओं से ध्यान लगाने में कैसे सहायता मिलती है?

अपनी मानसिक गतिविधियों के अचानक ही बहुत धीमा पड़ने से प्रेमयोगी वज्र को आश्चर्य भी हुआ, और कुछ दुःख भी। वह अपनी पूर्ववत मानसिकता को प्राप्त करने के उपाय सोचने लगा। वह मानसिकता उसकी याददाश्त से जुड़ी हुई थी, जो ड्रग के प्रभाव से काफी कम हो गई थी। उसे कुछ समय के लिए एक ऐसे व्यक्ति की संगति मिल गई, जो नियमित रूप से योगासन करता था। उसे देखकर वह भी करने लगा। धीरे-२ उसे अभ्यास हो गया। वह इंटरनेट व

पुस्तकों की मदद भी लेने लगा। उसमें मानसिक शक्ति तो पहले की तरह प्रचुर थी, परन्तु वह कहीं लग नहीं रही थी। इसका कारण यह था कि वह दवा के प्रभाव से उन पिछली बातों व घटनाओं को भूल गया था, जिनसे उसकी मानसिक शक्ति जुड़ कर क्षीण होती रहती थी। दवा से उसका पिछला संसार मिट जाने से उसकी प्रचंड मानसिक शक्ति उससे मुक्त हो गई थी। इसीलिए उसे महसूस नहीं हो रही थी। योग की सहायता से वह छुपी हुई व भरपूर मानसिक शक्ति उसकी कुण्डलिनी को स्वयं ही लगने लगी। इससे वह समय के साथ जागृत हो गई।

दुनियादारी की मानसिकता का कुण्डलिनी-मानसिकता के रूप में प्रकट होना

कुण्डलिनीयोग से उसे अपनी खोई हुई पुरानी मानसिकता प्राप्त हो गई। यद्यपि वह पहले की तरह अद्वैतपूर्ण दुनियादारी के रूप में नहीं थी, अपितु वह अकेली कुण्डलिनी के रूप में थी। समस्त मानसिक शक्ति एकमात्र कुण्डलिनी को लगने से वह जागृत हो गई।

प्रबल मानसिकता की प्राप्ति केवलमात्र अद्वैतभाव से संभव

यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रबल, अविरल व स्थायी मानसिकता केवल अद्वैतपूर्ण दुनियादारी से ही संभव है। द्वैतपूर्ण व्यवहार से मानसिकता चरम के निकट पहुँचने से पहले ही क्षीण होती रहती है। इससे सिद्ध होता है कि प्रेमयोगी वज्र का अद्वैतपूर्ण जीवन-व्यवहार (geetaa-ukt karmayoga) भी उसके कुण्डलिनी-जागरण में सहायक बना।

कुण्डलिनी के प्रति समर्पण ही असली समर्पण है

सभी धर्मों में ईश्वर के प्रति समर्पण/सरेंडर पर बहुत जोर दिया गया है। वास्तव में कुण्डलिनी के प्रति समर्पण ही ईश्वर के प्रति समर्पण है। ईश्वर निराकार है। उसे कोई देख नहीं सकता, जान नहीं सकता, और न ही उसे कोई अनुभव कर सकता है। जिसका कोई अता-पता ही नहीं है, उसके प्रति कोई कैसे समर्पित हो सकता है? वास्तव में कुण्डलिनी ही ईश्वर का छोटा रूप है, जो जानने में आ सकता है। यह कुण्डलिनी क्राइस्ट के मानसिक चित्र के रूप में हो सकती है, भगवान् राम के मानसिक चित्र के रूप में हो सकती है, किसी के मन में उसके अपने गुरु/मित्र/प्रेमी के चित्र के रूप में हो सकती है आदि-2।

अद्वैत के प्रति समर्पित होने का अर्थ भी कुण्डलिनी के प्रति समर्पित होना ही है

जैसा कि हमने पहले भी बताया है की अद्वैत और कुण्डलिनी साथ-2 रहते हैं । एक के बढ़ने से दूसरा स्वयं ही बढ़ जाता है। अनासक्ति भी अद्वैत का ही रूप है। इसका सीधा सा अर्थ है की ईश्वर सीधे नहीं, अपितु अद्वैत/अनासक्ति/साक्षीभाव {साक्षी भाव से अद्वैत व अनासक्ति बढ़ते हैं}/कुण्डलिनी के रूप में रहता है। ये चारों भाव एकसमान ही हैं, क्योंकि एक के भी बढ़ने से अन्य भाव स्वयं बढ़ने लगते हैं। यदि सभी भाव एकसाथ बढ़ाए जाएं, तब तो और भी अच्छा, क्योंकि तब बहुत तेज आध्यात्मिक प्रगति होती है।

प्रेमयोगी वज्र ने जब शरीरविज्ञान दर्शन के माध्यम से अद्वैत को लम्बे समय तक अपनाया, तब उसमें बहुत से आध्यात्मिक गुण बढ़ोत्तरी को प्राप्त हुए, और कुण्डलिनी भी परिवृद्ध हुई, जो अंततः जागृत हो गई।

ईश्वर के प्रति समर्पण से कुण्डलिनी के प्रति समर्पण स्वयं ही हो जाता है

वास्तव में भगवान् के ध्यान से भी कुण्डलिनी का ही ध्यान होता है। निराकार भगवान् के ध्यान से अद्वैत का ध्यान स्वयं ही हो जाता है, क्योंकि भगवान् सभी स्थितियों में एकसमान हैं। और यह निर्विवाद सत्य है कि अद्वैत के ध्यान से कुण्डलिनी का ध्यान स्वयं ही होने लगता है। इससे भी सिद्ध हो जाता है कि ईश्वर के प्रति समर्पण स्वयं ही अप्रत्यक्ष रूप में कुण्डलिनी के प्रति समर्पण बन जाता है। फिर क्यों न सीधे ही कुण्डलिनी-साधना की जाए।

इसीलिए कहा जाता है कि गुरु भगवान् से बढ़कर हैं

गुरु गोबिंद दोनों मिले, काके परूं पाए।
बलिहारी गुरु आपकी, गोबिंद दियो मिलाए।।

तुलनात्मक रूप से गुरु को भगवान् से बढ़कर बताया गया है, क्योंकि भगवान की प्राप्ति गुरु से ही तो होती है। कुण्डलिनी वास्तव में गुरु/प्रेमी की मन में बसी हुई छवि/कुण्डलिनी ही तो है। इससे भी सिद्ध होता है कि कुण्डलिनी के प्रति समर्पण अधिक आसान, मानवीय, व्यावहारिक व कारगर होता है।

हिंदु धर्म और इस्लाम एक ही बात बोलते हैं

इस्लाम धर्म में अल्लाह/निराकार ईश्वर के प्रति समर्पण पर जोर दिया गया है। इसके विपरीत, हिन्दू धर्म में मुख्यतः साकार ईश्वर/मूर्ति/कुण्डलिनी के प्रति समर्पण पर अधिक जोर दिया गया है। ऊपर हमने यह भी सिद्ध कर दिया है कि निराकार ईश्वर के ध्यान से कुण्डलिनी का ध्यान स्वयं होने लगता है। इसी तरह, कुण्डलिनी/मूर्ति का ध्यान करने से निराकार ईश्वर/अल्लाह का ध्यान स्वयं ही हो जाता है। साथ में, इससे यह भी स्वयं सिद्ध हो जाता है कि इस्लाम में मूर्ति/कुण्डलिनी-पूजा का विरोध वास्तविक नहीं, अपितु काल्पनिक है, जो किसी गलतफहमी के कारण पैदा हुआ है।

पहाड़ों में कुण्डलिनी

मित्रो, पहाड़ों का अपना एक अलग ही आकर्षण है। वहां पर मन प्रफुल्लित, साफ, हल्का, शांत व आनंदित हो जाता है। पुराना जीवन रंग-बिरंगे विचारों के रूप में मस्तिष्क में उमड़ने लगता है, जिससे बड़ा ही आनंद महसूस होता है। चिंता, अवसाद व तनाव दूर होने लगते हैं। गत जीवन के मानसिक जख्म भरने लगते हैं। प्रेमयोगी वज्र को भी अपने व्यावसायिक उत्तरदायित्वों के कारण कुछ वर्षों तक ऊंचे पहाड़ों में रहने का मौक़ा मिला था। उसे वहां के लोगों से व प्राकृतिक परिवेश से भरपूर प्यार, सहयोग व सम्मान मिला।

पहाड़ों में अपने आप विपासना साधना होती रहती है

उपरोक्त तथ्यों से जाहिर है कि पहाड़ों में विपासना के लिए सर्वाधिक अनुकूल परिस्थितियाँ मौजूद होती हैं। यदि आदमी योग आदि के माध्यम से अपना बल भी लगाए, तब तो शीघ्र ही आध्यात्मिक सफलता मिलती है। प्रेमयोगी वज्र को भी उपरोक्त मानसिक सद्प्रभावों का अनुभव पहाड़ों के इसी गुण के कारण हुआ।

कुण्डलिनी ही पहाड़ों में स्वयम्भूत विपासना को पैदा करती है

आश्चर्य की बात है कि प्रेमयोगी वज्र की मानसिक कुण्डलिनी, जो पहले दब जैसी गई थी, वह पहाड़ों में बहुत मजबूत हो गई थी। वह तांत्रिक कुण्डलिनी थी, और उसकी मानसिक प्रेमिका के रूप में थी। उसके साथ ही उसकी मानसिक गुरु के रूप वाली कुण्डलिनी भी वहां पर ज्यादा चमकदार बन गई थी। पर उसने देखा कि पहाड़ों के लोग प्रेमिका के रूप वाली कुण्डलिनी को बहुत ज्यादा महत्त्व दे रहे थे, गुरु के रूप वाली कुण्डलिनी की अपेक्षा। गुरु के रूप वाली कुण्डलिनी को वहां के पंडित वर्ग के आध्यात्मिक लोग ज्यादा महत्त्व दे रहे थे, यद्यपि प्रेमिका की कुण्डलिनी के साथ ही, अकेली गुरु के रूप वाली कुण्डलिनी को नहीं। इसका कारण यह है कि पहाड़ मन के काम-रस या श्रृंगार-रस को उत्तेजित करते हैं। इसी वजह से तो काम शास्त्रों में ऊंचे पहाड़ों का सुन्दर वर्णन बहुतायत में पाया जाता है। उदाहरण के लिए विश्वप्रसिद्ध साहित्यिक रचना "मेघदूत"।

दूसरा प्रमाण यह है कि मैदानी भागों में कुण्डलिनी योग साधना के बाद जब प्रेमयोगी वज्र पर्वत-भ्रमण पर गया, तब पहाड़ों में उसकी कुण्डलिनी प्रचंड होकर जागृत हो गई, जैसा कि इस वैबसाईट के "गृह-2" वैबपेज पर वर्णित किया गया है। इसके अतिरिक्त, प्रेमयोगी वज्र को क्षणिक आत्मज्ञान का अनुभव भी पहाड़ों में ही हुआ था, जो उसने इस वैबसाईट के "गृह-2" वेबपेज पर वर्णित किया है । इसी वजह से तो अनादिकाल से लेकर योग साधक शीघ्र सिद्धि के लिए मैदानों से पहाड़ों की तरफ पलायन करते आए हैं।

पहाड़ों में कुण्डलिनी क्यों चमकने लगती है?

वास्तव में, पहाड़ देवता की मूर्ति की तरह काम करते हैं। तभी तो कई धर्मों में पहाड़ को देवता माना गया है। एक प्रकार से देवता की मूर्ति पहाड़ के रूप में प्रतिक्षण आँखों के सामने विद्यमान रहती है। पहाड़ मैं विद्यमान अद्वैत तत्त्व आदमी के मन में भी अद्वैतभाव पैदा कर देता है। उस अद्वैत के प्रभाव से कुण्डलिनी मन-मंदिर में छा जाती है।

यदि किसी के मन में कुण्डलिनी न भी हो, तो भी अद्वैतभाव से बहुत से आध्यात्मिक लाभ मिलते हैं। साथ में, उससे धीरे-२ कुण्डलिनी भी बनना शुरू हो जाती है।

यह बात इस वैबसाईट में पहले भी सिद्ध की जा चुकी है कि सृष्टि के कण-कण में अद्वैत तत्त्व विद्यमान है। वास्तव में, वही भगवान् है। इसे समझने के लिए सबसे बढ़िया पुस्तक "शरीरविज्ञान दर्शन" है।

बच्चों में कुण्डलिनी

कहते हैं कि बच्चे भगवान् का रूप होते हैं। इसके पीछे बहुत से कारण हैं। परन्तु सबसे प्रमुख व मूल कारण कुण्डलिनी से सम्बंधित है। कुण्डलिनी बच्चों का मूल स्वभाव है। वास्तव में, कुण्डलिनी की खोज बच्चों ने ही की है। बड़ों ने तो उस खोज को केवल कागज़ पर उकेरा ही है। बड़ों ने बच्चों के इस मूल स्वभाव की नक़ल करके बहुत सी मैडिटेशन तकनीकों को ईजाद किया है। बड़ों ने बच्चों के इस मूल स्वभाव की नक़ल करके बहुत सी योग-सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। परन्तु हैरानी की बात यह है कि बच्चों के इस मूल स्वभाव को बहुत कम श्रेय दिया जाता है। अहंकार के आश्रित अधिकाँश लोग सारा श्रेय स्वयं बटोरना चाहते हैं। आज हम इस ब्लॉग पोस्ट के माध्यम से बच्चों को उनका असली हक़ दिलाने की कोशिश करेंगे।

बच्चे स्वभाव से ही अद्वैतवादी होते हैं

बच्चे केवल अनुभव करना जानते हैं। वे अनुभव का पूरा मजा लेते हैं। वे गहराई में नहीं जाते। वे जजमेंट नहीं करते। इसलिए उन्हें सभी कुछ एक जैसा ही प्रतीत होता है। उनकी नजर में लोहा, पत्थर व सोना एकसमान हैं। विपासना साधना के ये मूलभूत गुण हैं। इससे सिद्ध होता है कि बच्चों में स्वयं ही विपासना होती रहती है। विपासना उनका स्वभाव है।

बच्चे स्वभाव से ही कुण्डलिनी प्रेमी होते हैं

यह हम पहले भी विविध प्रमाणों से अनेक बार सिद्ध कर चुके हैं कि विपासना (साक्षी भाव)/अद्वैत व कुण्डलिनी साथ-२ रहते हैं। क्योंकि बच्चे स्वभाव से ही अद्वैतवादी होते हैं, अतः यह स्वयं ही सिद्ध हो जाता है कि बच्चे स्वभाव से ही कुण्डलिनी योगी होते हैं। इसी वजह से ही तो बच्चे किसी एक चीज के दीवाने हो जाते हैं। यदि वे किसी ख़ास खिलौने को पसंद करते हैं, तो रात-दिन उसी के पीछे लग जाते हैं। इसी तरह, यदि बच्चे किसी एक आदमी के दीवाने हो जाते हैं, तो उसी पर अपना सब कुछ लुटाने को तैयार हो जाते हैं। हालांकि इससे वे कई बार बड़ों के धोखे का शिकार भी बन जाते हैं। योग-ऋषि पतंजलि भी तो यही कहते हैं कि "यथाभिमतध्यानात् वा"; अर्थात अपनी किसी भी मनपसंद चीज के निरंतर ध्यान से योग सिद्ध होता है।

सर्वप्रिय वस्तु के रूप में कुण्डलिनी

यही सबसे पसंदीदा चीज ही तो कुण्डलिनी है, जो निरंतर मन में बसी रहती है। एक बात और है। जब बच्चा कोई नयी चीज पसंद करने लगता है, तब वह अपनी पुरानी पसंदीदा चीज को छोड़ देता है। फिर वह उसी एक नयी चीज का दीवाना बन जाता है। वह एक से अधिक चीजों या लोगों से एकसाथ प्यार नहीं कर पाता। कुण्डलिनी योगी का भी यही प्रमुख लक्षण है। योगी भी लम्बे समय तक, यहाँ तक कि जीवनभर भी एक ही चीज का ध्यान करते रहते हैं, जो उनकी कुण्डलिनी बन जाती है।

प्रेम कुण्डलिनी की खुराक के रूप में

प्रेम से कुण्डलिनी को बल मिलता रहता है। तभी तो देखने में आता है कि बच्चे प्रेम की ओर सर्वाधिक आकृष्ट होते हैं।

बच्चों का मोबाईल फोन-प्रेम भी कुण्डलिनी-प्रेम ही है

आजकल बच्चे हर समय मोबाईल फोन से चिपके रहते हैं। यह बच्चों का दोष नहीं है। यह उनका कुण्डलिनी-स्वभाव है, जो उन्हें एक चीज से चिपकाता है। उन्हें अच्छे-बुरे का भी अधिक ज्ञान नहीं होता। इसलिए बच्चों की भलाई के लिए समाज को ऐसी चीजें बनानी चाहिए, जो पूरी तरह से दुष्प्रभाव से मुक्त हों। एक उपाय यह भी है कि बच्चों को प्रेम से ऐसी चीजों के दुष्प्रभाव के बारे में बाताया जाए। उन्हें प्यार से समझाना चाहिए या अपने साथ दूसरे कामों/खेलों/घूमने-फिरने में मित्र की तरह व्यस्त रखना चाहिए। यदि बच्चों के सामने नफरत से भरा हुआ द्वैतभाव प्रकट किया जाएगा, तब तो उनका कुण्डलिनी-गुण नष्ट ही हो जाएगा, और साथ में उनका बचपन भी।

बच्चे मन के भावों को पढ़ लेते हैं

बड़े लोग चाहे जितना मर्जी छुपाने की कोशिश कर लें, बच्चे उनके मन के भाव को पढ़ ही लेते हैं। यह शक्ति कुदरत ने उन्हें आत्मरक्षा के लिए दी है। इसी शक्ति से तो वे किसी आदमी को अच्छी तरह से पहचान कर उसके जी-जान से दीवाने हो जाते हैं, जिससे कुण्डलिनी विकास होता है। वैसे भी बच्चों में कुण्डलिनी आसानी से बन जाती है, क्योंकि

उनका दिमाग खाली होता है। तभी तो देखा जाता है कि कई बार अच्छे-खासे घर के बच्चे बिगड़ जाते हैं। वास्तव में, उस घर के लोग बाहर से तो अच्छे होते हैं, पर उनके मन के भाव अच्छे नहीं होते। बच्चे उन मनोभावों से गलत आदतें सीख लेते हैं। इसके उलट, कई बार बुरे घर के बच्चे बहुत अच्छे बनते हैं। वास्तव में, उस घर के लोग बाहर से बुरे प्रतीत होते हैं, पर उनके मन के भाव अच्छे होते हैं। सबसे बेहतर यह है कि मन के अन्दर व बाहर, दोनों स्थानों पर अच्छे बन कर रहा जाए। यदि अपने काम में उन्हें भी भागीदार बनाया जाए, तो वे स्वयं ही सीख जाते हैं। कई बार वे सीखने-सिखाने के नाम से ही चिढ़ जाते हैं।

बच्चों में कुण्डलिनी सक्रिय होती है, पर वे उसे जागृत नहीं कर पाते

कुण्डलिनी को जागृत करने के लिए बच्चों को कम से कम किशोरावस्था का इन्तजार करना ही पड़ता है। उस आयु में शरीर को यौनशक्ति मिलनी शुरू हो जाती है। यदि उस यौनशक्ति का प्रबंधन सही ढंग से हो जाए, तो वह कुण्डलिनी को मिलने लग जाती है, जिससे कुण्डलिनी आसानी से जाग सकती है। कईयों को दिव्य व अनुकूल परिस्थितियाँ मिलने से यह काम स्वयं हो जाता है, जैसा कि प्रेमयोगी वज्र के साथ हुआ। कईयों को विशेष प्रयास करना पड़ता है।

प्रेमयोगी वज्र का कुण्डलिनी अनुभव

बचपन में वह कुण्डलिनी के प्रति तो आम बच्चों की तरह ही आकृष्ट होता था। यद्यपि किशोरावस्था में उसे दिव्य व अनुकूल परिस्थितियाँ मिलीं, जिनसे उसकी यौनशक्ति उसकी कुण्डलिनी को मिलती रही। वह यौनशक्ति इतनी अधिक मजबूत थी कि उसकी कुण्डलिनी ने जागृत हुए बिना ही उसे क्षणिक आत्मज्ञान करा दिया। उसके बाद तो वह पूरी तरह से एक बच्चे के जैसा बन गया। हर समय उसके मन में कुण्डलिनी वैसे ही बसी रहती थी, जैसे कि एक बच्चे के मन में कोई खिलौना या विशेष प्रेमी। अधिकाँश लोग उसका मजाक जैसा बनाया करते थे। कई तो कभी-२ दुर्व्यवहार पर भी उतर आते थे। वास्तव में, सभी लोग अपने झूठे अहंकार पर लगी चोट को बर्दाश्त नहीं कर पाते।

दूसरी बार उसने क्षणिक कुण्डलिनी जागरण को कृत्रिम योग तकनीक से प्राप्त किया, कुछ यौनयोग की सहायता लेकर। यह सारा वृत्तांत हिंदी में बनी पुस्तक “शरीरविज्ञान दर्शन” में, व अंग्रेजी में लिखी पुस्तक “love story of a Yogi” में वर्णित है, जो इस वैबसाईट के पेज “शॉप” पर उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त, यदि कोई कुण्डलिनी प्रेमी इस वैबसाईट की सभी कुण्डलिनी से सम्बंधित ब्लॉग पोस्टों को किनडल ईबुक के रूप में आसानी से व एकसाथ पढ़ना चाहे, तो सभी का संग्रह भी पुस्तक रूप में इसी वैबपेज पर उपलब्ध है। उसके हिंदी-रूप का नाम “कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान” व अंग्रेजी-रूप का नाम “kundalini science- a spiritual psychology” है।

कुण्डलिनी से पर्यावरण-सुरक्षा

हमारे पर्यावरण का मौजूदा हाल

आजकल पर्यावरण तेजी से विनाश की तरफ जा रहा है। हर जगह पर्यावरण को प्रदूषित किया जा रहा है। हरेक व्यक्ति पर्यावरण को प्रदूषित करने में लगा हुआ है। आदमी की इच्छाओं पर लगाम ही नहीं लग रही है। भौतिक वस्तुओं का अंधाधुंध निर्माण हो रहा है, जिसके लिए पर्यावरण का व्यापक दोहन किया जा रहा है। हरेक वास्तु आज विषैली हो गई है। प्राकृतिक आपदाओं व प्रदूषण से लोग असमय मौत के शिकार हो रहे हैं।

प्राचीन जनजीवन में पर्यावरण-सुरक्षा

हमारा प्राचीन जनजीवन एक पर्यावरण-मित्र जनजीवन था। पर्यावरण को देवताओं की तरह पूजा जाता था। पर्वतों, नदियों, सागरों, वृक्षों, वनों समेत सभी वस्तुओं को देवता मानकर पूजा जाता था। कई तथाकथित आधुनिक लोग कहते हैं कि पुराने समय के लोगों में दिमाग की कमी होती थी, इसलिए वे तकनीक में पिछड़े हुए थे। परन्तु वास्तविकता यह है कि वे दिमाग के मामले में आज के लोगों से भी ज्यादा तेज होते थे। तभी तो वे स्वावलंबी होकर अपना जीवन जंगल में भी सुखपूर्वक बिता लेते थे। आज के अधिकाँश लोग तकनीक के बिना अपना जीवन जी ही नहीं सकते। प्राचीन लोग तकनीक का इस्तेमाल इसलिए नहीं करना चाहते थे, क्योंकि उससे पर्यावरण को नुक्सान पहुंचता था।

प्राचीन युग में पर्यावरण की सुरक्षा में कुण्डलिनी का योगदान

जैसा कि हमने ऊपर कहा है कि पुराने जमाने के लोग सभी वस्तुओं को देवता मानते थे। उदाहरण के लिए, आर्यों को ही देख लें। वे प्रकृति के पुजारी थे। सृष्टि की प्रत्येक वस्तु को उन्होंने सुन्दर देवता का रूप दिया हुआ था, जैसे कि वायु देव, जल देव, सूर्य देव, अग्नि देव आदि। आज भी वैदिक अनुष्ठानों में इन सभी देवताओं के पूजन की परम्परा है। इसी तरह की परम्परा प्राचीन मिस्र व सेल्टिक समाज में भी थी। लगभग सभी देशों में यह परम्परा किसी न किसी रूप में रही है। इससे पर्यावरण को लम्बे समय तक बचाने में काफी मदद मिली।

प्राकृतिक वस्तुओं की पूजा का अर्थ ही अद्वैत की पूजा है। क्योंकि तनिक चिंतन करने पर सभी वस्तुओं की आत्मा अद्वैत ही प्रतीत होती है। वे हैं भी, और नहीं भी हैं। वे काम करती भी हैं, और नहीं भी करती हैं। उन्हें फल मिलता भी है, और नहीं भी मिलता है। वे प्रकाश-रूप भी हैं, और अन्धकार-रूप भी, और दोनों से रहित भी हैं। इसका अर्थ है कि प्राचीन लोगों के मन में कुण्डलिनी का निवास हुआ करता था, क्योंकि अद्वैतभाव और कुण्डलिनी मन में साथ-२ रहते हैं। तभी तो प्राचीन युग में कुण्डलिनी का बहुत बोलबाला हुआ करता था, और विश्व के सभी धर्मों में किसी न किसी रूप में इसका जिक्र जरूर मिलता है।

कुण्डलिनी पर्यावरण को कैसे बचाती है

अधिकाँश लोग अपने मन के वश में होते हैं। मन तो बन्दर की तरह होता है। वह अपने साथ उनको भी नचाता रहता है। वे मन के गुलाम होते हैं, और मन का साथ नहीं छोड़ सकते। उनकी सत्ता मन की सत्ता के साथ जुड़ी होती है। मन के नष्ट होने से वे भी अपने को नष्ट महसूस करते हैं। उनका मन भौतिक दुनिया के आश्रित होता है। यदि मन को भौतिक काम-धंधे न मिले, तो वह मरने लगता है। इसलिए वह बिना जरूरत के ही नए-२ काम-धंधे ढूँढता रहता है। वह पर्यावरण को हानि पहुंचाने से भी नहीं कतराता, क्योंकि द्वैतभाव के कारण उसे पर्यावरण में देवता/कुण्डलिनी नहीं दिखाई देती। उसे पर्यावरण में केवल अन्धकार दिखाई देता है। इस तरह से पर्यावरण को क्षति पहुँचती है।

इसके विपरीत, एक कुण्डलिनी योगी का मन कुण्डलिनी के आश्रित रहता है। वह कुण्डलिनी से जीवन-शक्ति लेता रहता है। उसे भौतिक काम-धंधों से जीवन-शक्ति लेने की कोई जरूरत नहीं होती। इसलिए वह अपनी जरूरत के कम से कम काम-धंधों में ही मस्त रहता है, और फालतु के काम-धंधों में नहीं उलझता। अपनी जरूरत के काम भी वह पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना निपटाता है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उसकी नजर में हर जगह कुण्डलिनी है। यह तो सिद्ध ही है कि सृष्टि में हर जगह अद्वैत तत्त्व विद्यमान है, और यह भी कि अद्वैत के साथ कुण्डलिनी भी रहती है।

प्रेमयोगी वज्र का अपना अनुभव

क्षणिक आत्मज्ञान के बाद वह अकर्मक जैसा बन गया था। हर समय वह कुण्डलिनी के ध्यान में मस्त रहता था। उसे कुण्डलिनी से भरपूर जीवन मिलता रहता था। उसे कोई काम करने की जरूरत ही महसूस नहीं होती थी। काम करने से तो उसकी कुण्डलिनी को नुक्सान भी पहुँचता था। बहुत जरूरी होने पर ही वह काम करता था। काम को वह अद्वैत के साथ करता था, ताकि उसकी कुण्डलिनी को कम से कम नुकसान पहुंचता। वह पर्यावरण के प्रति काफी सचेत व प्रकृति-प्रेमी बन गया था। अधिकाँश समय वह प्रकृति के बीच में बैठकर अकेले ही गुजारता था। औरों के, बिना जरूरत के काम उसे पागलपन की तरह लगते थे। यद्यपि कई ऐसे काम मजबूरी में उसे भी करने पड़ते थे, ताकि वह सभी के साथ चल सकता। इससे जाहिर है कि एक कुण्डलिनी योगी से समाज की व्यवस्था पर विशेष फर्क नहीं पड़ता। पर्यावरण संरक्षण के लिए यह जरूरी है कि अधिकाँश लोग कुण्डलिनी योगी बनें।

कुण्डलिनी के साथ संगीत

संगीत के लाभदायक प्रभाव सभी जानते हैं। भौतिक रूप से तो संगीत लाभदायक है ही, आध्यात्मिक रूप से भी इसका प्रमुख योगदान है। कुण्डलिनी और संगीत का आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध है।

संगीत से साक्षीभाव का विकास

संगीत से हमारे मन में चित्र-विचित्र व नए-पुराने विचार चित्रों के रूप में मन में उभरने लगते हैं। इसमें विशेष बात यह है कि उन चित्रों के साथ साक्षीभाव या अनासक्ति का भाव विद्यमान रहता है। वे कुछ-२ स्पष्ट व सुखपूर्ण स्वप्न के चित्रों की तरह प्रतीत होते हैं। इससे मन की निर्मलता में इजाफा होता है, और साथ में आनंद भी प्राप्त होता है। संगीत से आनंद मिलने की मुख्य वजह यही है। वास्तव में, संगीत प्रत्यक्ष रूप से आनंद नहीं देता, अपितु उन चित्रों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से ही देता है। एक बात और है। जो संगीत हमें अधिक रोचक लगता है, वह हमें अधिक आनंद प्रदान करता है। वास्तव में, वह संगीत अधिक मात्रा में स्पष्ट मानसिक चित्र उत्पन्न करता है, और उनमें अधिक मात्रा में साक्षीभाव भी पैदा करता है। तभी तो किसी एक को उबाऊ लगने वाला संगीत किसी दूसरे को बहुत रोचक लगता है। यदि आनंद संगीत में होता, तब तो कोई भी संगीत हर किसी को रोचक लगा करता। ऐसा भी होता है कि कभी कोई संगीत रोचक लगता है, तो कभी कोई दूसरा। मन की भावावस्था के अनुसार ही संगीत के प्रति पसंद भी बदलती रहती है। इसका यही अर्थ है कि संगीत में अपना आनंद नहीं होता, अपितु यह मन के भावों से ही आनंद उपलब्ध करवाता है। यह सभी को पता है कि अनासक्ति या साक्षीभाव के साथ ही मन के भावों से आनंद पैदा होता है।

संगीत से कुण्डलिनी का विकास

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि संगीत से साक्षीभाव पैदा होता है। साक्षीभाव अद्वैत का ही दूसरा नाम है। यह भी अक्सर अनुभव में आता ही रहता है कि अद्वैत व कुण्डलिनी साथ-२ रहने का प्रयास करते हैं। अद्वैतभाव से कुण्डलिनी मानसपटल पर उभर आती है, तथा कुण्डलिनी के विचार से अद्वैत उत्पन्न हो जाता है। इससे स्वयं ही सिद्ध हो जाता है कि संगीत से कुण्डलिनी का विकास होता है। जब संगीत से कुण्डलिनी बारम्बार मानसपटल पर आती रहेगी, तब उससे उसका निरंतर विकास तो होगा ही।

कुण्डलिनी के बारे में प्रेमयोगी वज्र का अपना अनुभव

उसके घर में रेडियो, कैसेट प्लेयर आदि का संगीत अक्सर बजता ही रहता था। आते-जाते, बस के अन्दर भी गाने सुनने को मिलते रहते थे। उन गानों से उसके मन में चमकती हुई स्पष्ट कुण्डलिनी प्रकट हो जाया करती थी। रोमांटिक गानों से उसके मन में तांत्रिक प्रेमिका के रूप की कुण्डलिनी उमड़ा करती थी, जबकि गंभीर व आध्यात्मिक गानों से गुरु के रूप की। ज्यादातर समय प्रेमिका की कुण्डलिनी ही बलवान रहती थी, क्योंकि उसमें यौनाकर्षण विद्यमान होता था, और वह स्वयं भरी जवानी में भी था। इसकी दूसरी वजह यह थी कि उस समय उसके मन में गुरु के रूप की कुण्डलिनी जागृत नहीं हुई थी।

कई वर्षों के बाद, जब उसके मन में गुरु के रूप की कुण्डलिनी जागृत हुई, तब वह ज्यादा प्रभावशाली बनने लगी। फिर उसके सामने प्रेमिका के रूप की कुण्डलिनी गौण पड़ने लगी। उससे हर प्रकार के संगीत के समय उसके मन में गुरु की ही कुण्डलिनी प्रकट होती थी। देवीरानी के रूप की कुण्डलिनी भी कभी-कभार प्रकट हो जाती थी, यद्यपि बहुत हलके रूप में। यह सिलसिला यूं ही चलता रहा, और गुरु के रूप की कुण्डलिनी उत्तरोत्तर बलवान होती गई। इसका कारण यह भी है कि वह प्रतिदिन की सुबह-शाम की एक-२ घंटे की कुण्डलिनीयोग साधना में गुरु के रूप की कुण्डलिनी का ध्यान करता था। इससे उत्साहित होकर वह दिन-रात ब्लूटुथ पोर्टेबल स्पीकर पर इंटरनेट के माध्यम से रंग-बिरंगे गाने सुनता रहता था। इससे उसे और भी बहुत से लाभ मिलते थे। ध्यान रहे कि लगातार लम्बे समय तक ऊंची आवाज में संगीत सुनना कानों के लिए नुकसानदायक है।

संगीत के विभिन्न स्वरों से विभिन्न चक्र जागृत होते हैं

ऐसा योग चर्चा में अक्सर कहा जाता है, और यह स्वाभाविक भी है। प्रत्येक स्वर एक भाव को पैदा करता है। किसी स्वर से उत्पन्न भाव मूलाधार चक्र के भाव से मेल खाते हैं, तो किसी से उत्पन्न भाव स्वाधिष्ठान से या हृदय चक्र से आदि। बच्चों के गानों से सबसे अधिक प्रभाव हृदय पर पड़ता है, तो रोमांटिक गानों का सर्वाधिक प्रभाव यौनचक्रों पर पड़ता है। वास्तव में, कुण्डलिनी तो मन में ही बन रही होती है, चाहे कोई भी चक्र क्रियाशील हो रहा हो। इसीलिए

तो कहते हैं कि हर प्रकार का संगीत लाभदायक ही होता है। इसी तरह, सृष्टि की प्रत्येक ध्वनी में संगीत है, क्योंकि सभी प्रकार की ध्वनियाँ कुण्डलिनी को उत्तेजित करती हैं।

कुण्डलिनी के साथ पशु-प्रेम

यह सर्वविदित है कि कुण्डलिनी प्रेम का प्रतीक है। कुण्डलिनी समर्पण का प्रतीक है। कुण्डलिनी श्रद्धा-विश्वास का प्रतीक है। कुण्डलिनी स्वामीभक्ति का प्रतीक है। कुण्डलिनी सेवाभाव का प्रतीक है। कुण्डलिनी परहितकारिता का प्रतीक है। कुण्डलिनी आज्ञापालन का प्रतीक है। कुण्डलिनी सहनशक्ति का प्रतीक है। ये कुण्डलिनी के साथ रहने वाले मुख्य गुण हैं। अन्य भी बहुत से गुण कुण्डलिनी के साथ विद्यमान रहते हैं। यदि हम गौर करें, तो ये सभी मुख्य गुण पशुओं में भी विद्यमान होते हैं। इनमें से कई गुण तो उनमें मनुष्यों से भी ज्यादा मात्रा में प्रतीत होते हैं। इससे यह अर्थ निकलता है कि पशु कुण्डलिनी-प्रेमी होते हैं। आइये, हम इसकी विवेचना करते हैं।

कुण्डलिनी स्वामीभक्ति का प्रतीक है

आजतक कुत्ते से ज्यादा स्वामीभक्ति किसी प्राणी में नहीं देखी गई है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं, जब कुत्ते ने अपने मालिक के लिए जान तक दे दी है। इसका अर्थ है कि कुत्ते के मन में अपने मालिक के व्यक्तित्व की छवि स्थाई और स्पष्ट रूप से बसी हुई होती है। वह छवि कुत्ते के मन के लिए एक खूंटे की तरह काम करती है। इससे कुत्ता आपने विचारों और क्रियाकालापों के प्रति अनासक्ति भाव या साक्षी भाव प्राप्त करता रहता है। उससे कुत्ते को आनंद प्राप्त होता रहता है। उस कुण्डलिनी छवि के महत्त्व को वह कभी नहीं भूलता, यहाँ तक कि उसके लिए जान तक दे सकता है। इसके विपरीत, बहुत से मनुष्य अपने मालिक के प्रति वफादारी नहीं निभा पाते। इससे सिद्ध हो जाता है कि कुत्ता मनुष्य से भी ज्यादा कुण्डलिनी प्रेमी होता है।

कुण्डलिनी सेवा भाव का प्रतीक है

उदाहरण के लिए, गाय को ही लें। वह हमें दूध देकर हमारी सेवा करती है। अधिकतर गौवें अपनी देख-रेख करने वाले मालिक के पास ही दूध देती हैं। दूसरा कोई जाए, तो वे जोर की लात भी टिका सकती हैं। इसका सीधा सा अर्थ है कि गाय के मन में अपने मालिक की छवि बस जाती है, जो उसके लिए कुण्डलिनी का काम करती है। एक आदमी तो अपने मालिक को कभी भी छोड़ सकता है, परन्तु गाय ऐसा कभी नहीं करती है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि पशु मनुष्य से भी ज्यादा नैष्ठिक कुण्डलिनी भक्त होते हैं।

यह अलग बात है कि दिमाग की कमी के कारण पशु मनुष्य की तरह मालिक (कुण्डलिनी) को बारम्बार बदल भी नहीं सकता। अधिकाँश मनूश्य तो अपने दिमाग पर इतना घमंड करने लग जाते हैं कि कुण्डलिनी के परिपक्व होने से पहले ही उसे बदल देते हैं। ऐसी स्थिति से तो पशु वाली स्थिति ही बेहतर प्रतीत होती है। एक बात और है। पालतु पशु को जब आदमी द्वारा संरक्षण व भोजन प्राप्त होता है, तभी उसे कुण्डलिनी को ज्यादा बढ़ाने का अवसर मिलता है।

कुण्डलिनी परहितकारिता का प्रतीक है

इसी तरह, विभिन्न पशु-पक्षी विभिन्न प्रकार के उत्पाद देकर मनुष्य का भला करते रहते हैं। ऐसा उनके मनुष्य के प्रति प्रेम से ही सम्भव हो सकता है। माता प्रेम के वशीभूत होकर ही अपने बच्चे को दूध पिलाती है। यह भी सत्य है कि प्रेम केवल कुण्डलिनी से ही होता है। यह अलग बात है कि पशु उसे बोलकर बता नहीं सकता। यदि प्रेम न भी हो, तो भी किसी का हित करते हुए स्वयं ही उससे प्रेम हो जाता है। यहाँ तक कि पेड़-पौधे भी कुण्डलिनी-प्रेमी होते हैं, क्योंकि वे भी सदैव परहित में लगे रहते हैं।

कुण्डलिनी आज्ञापालन का प्रतीक है

हम उसी की आज्ञा का पालन सबसे अधिक तत्परता के साथ करते हैं, जो हमारे मन में सबसे अधिक बसा होता है, जो हमें सबसे अधिक महत्त्वशाली लगता है, और जिस पर हमें सबसे अधिक विश्वास होता है। वही हमारी कुण्डलिनी के रूप में होता है। वही आनंद का स्रोत भी होता है। अपनी मालिक की आज्ञा का पालन कुत्ते बहुत बखूबी करते हैं। कुत्ते में तो दिमाग भी इंसान से कम होता है। इसका सीधा सा अर्थ है कि कुत्ता केवलमात्र कुण्डलिनी से ही आज्ञापालन के लिए प्रेरित होता है, अन्य लॉजिक से नहीं। आदमी तो दूसरे भी बहुत से लॉजिक लगा लेता है। इसका सीधा सा अर्थ है कि एक कुत्ता भी कुण्डलिनी की अच्छी समझ रखता है।

इन बातों का उद्देश्य मनुष्य को गौण सिद्ध करना नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मनुष्य जीव-विकास की सीढ़ी पर सबसे ऊपर है। यहाँ बात केवल कुण्डलिनी के बारे में हो रही है।

कुण्डलिनी कर्तव्यपालन का प्रतीक है

एक बैल यदि अस्वस्थ भी हो, तो भी वह खेत में हल चलाने से पीछे नहीं हटता। इसी तरह, यदि उसका मूड ऑफ़ हो, तो भी वह अपने कदम पीछे नहीं हटाता। यह अलग बात है, यदि वह हल चलाते-२ हांफने लगे या नीचे गिर जाए। इसका सीधा सा अर्थ है कि बैल भी कुण्डलिनी प्रेमी होता है। उसका रोजमर्रा का काम व उसके मालिक का व्यक्तित्व उसके मन में एक मजबूत कुण्डलिनी के रूप में बस जाता है, जिसे वह नजरअंदाज नहीं कर पाता। अपने आनंद के स्रोत को भला कौन बुद्धिमान प्राणी छोड़ना चाहे। इसी तरह, सहनशक्ति के मामले में बभी समझ लेना चाहिए।

पशुओं के कुण्डलिनी प्रेम के बारे में प्रेमयोगी वाज्र का आपना अनुभव

उसका ब्बच्पन पालतु पशुओं से भरे-पूरे परिवार में बीता था। पशुओं के मन के भाव पढ़ने में उसे बहुत मजा आता था। जंगल में बैलों का खेल-२ में आपस में भिड़ना उसे रोमांचित कर देता था। मवेशियों का जंगल के घास से पेट भर जाने के बाद अपने बाड़े की तरफ दौड़ लगाना एक अलग ही रोमांच पैदा करता था। एक गाय बड़ी नटखट, चंचल व साथ में दुधारू भी थी। वह एक नेता की तरह सभी मवेशियों के आगे-२ चला करती थी। सभी मवेशी उसे सींग मारने को आतुर रहते थे, इसलिए वह अकेले में ही चरा करती थी। वह जंगल के डर से उनकी नजरों से दूर भी नहीं जाती थी। उसकी बछिया भी वैसी ही निकली। वह देखने में भी बहुत सुन्दर थी। जंगल से बाड़े की तरफ पहाड़ी से नीचे उतरते समय वह पूंछ खड़ी करके बड़ी तेजी से कुदकते हुए भागती, और कुछ दूर जाकर पीछे से आने वाले मवेशियों का इन्तजार करते हुए खड़ी होकर बार-२ गर्दन मोड़कर पीछे देखने लग जाती। जब वे नजदीक आते, तब फिर से दौड़ पड़ती।

जब प्रेमयोगी वज्र की कुण्डलिनी बलवान होती थी, तब सभी मवेशी उसके आसपास चरने के लिए आ जाया करते थे। कोई मवेशी उसे कान टेढ़े करके बड़े आश्चर्य से व प्रेम से देखने लग जाते थे। कई तो उसे चाटने भी लग जाते थे। वे उसे बार-२ सूंघते, और आनंदित हो जाते। शायद उन्हें कुण्डलिनी के साथ विद्यमान सबलीमेटिड वीर्य की खुशबू भी उसके रोमछिद्रों से निकली हुई महसूस होती थी। कुण्डलिनी जागरण के आसपास (प्राणोत्थान के दौरान) भी पशुओं के संबंध में उसका ऐसा ही अनुभव रहा। कई बार तो खूंटे से बंधीं कमजोर दिल वाली भैंसें उसे अचानक अपने पास पाकर डर सी भी जाती थीं, और फिर अचानक प्यार से सूंघने लग जाती थीं। ज्यादातर ऐसा उन्हीं के साथ होता था, जो क्रोधी, सींग मारने वाली, और दूध देने में आनाकानी करने वाली होती थीं। इसका सीधा सा मतलब है कि वे कुण्डलिनी से कम परिचित होती थीं।

पशुओं के बीच में रहने से कुण्डलिनी विकास

प्रेमयोगी वज्र ने यह महसूस किया कि पशुओं, विशेषकर जंगल में खुले घूमने वाले, पालतु, व गाय जाति के मवेशियों के बीच में रहकर कुण्डलिनी ज्यादा स्पष्ट रूप से विकसित हो जाती थी। पशु स्वभाव से ही प्रकृति प्रेमी होते हैं। प्रकृति में तो हर जगह अद्वैतरूपा कुण्डलिनी विद्यमान है ही। इसलिए कुण्डलिनी प्रेमी को पशुओं से भी प्रेम करना चाहिए।

कुण्डलिनी से कौशल विकास एवं रचनात्मकता

आजकल का युग वैज्ञानिक युग है। कौशल व विज्ञान एक दूसरे के प्रमुख सहयोगी हैं। कुशलता के बिना विज्ञान अधूरा है, और विज्ञान के बिना कुशलता अधूरी है। किसी भी काम में वैज्ञानिक तकनीकें भी नाकामयाब या नुकसानदेह/जानलेवा हो जाती हैं, यदि कौशलता का अभाव हो। विज्ञान आज लगभग हर जगह विद्यमान है, परन्तु कुशलता हर जगह विद्यमान नहीं है। अविकसित देशों में अधिकाँश स्थानों पर कुशलता का अभाव होता है। इसी तरह, विकसित देशों के दूर-दराज के व जनजातीय क्षेत्रों में भी कुशलता का भाव होता है। हर रोज जब मैं आसपास नजर दौड़ाता हूँ, तो मुझे कौशल की भारी कमी महसूस होती है। उदाहरण के लिए, मेसनरी वर्क को ही लें। यह मुझे कहीं पर भी गुणवत्तापूर्ण नहीं दिखता। छोटी-२ बातों का ध्यान नहीं रखा जाता, जिससे बड़े-२ नुक्सान हो जाते हैं। अधिकाँश मिस्त्री वैज्ञानिक तथ्यों से परिचित नहीं होते। जो परिचित होते हैं, वे उन्हें व्यावहारिक रूप में लागू करने में आलस करते हैं। कई तो उन्हें लागू करने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाते। कईयों को प्रशिक्षण का अभाव खलता है। कई रूढ़ीवादी सोच के कारण उन्हें जानबूझ कर लागू नहीं करते।

कुण्डलिनी से कौशल विकास कैसे होता है

यह तो सर्वविदित ही है कि अद्वैतभाव के साथ मन में बसी रहने वाली छवि को ही कुण्डलिनी कहते हैं। यह गुरु की, प्रेमी-प्रेमिका की, पुत्र की, माता-पिता की, दादा-दादी की, मित्र की, किसी मनपसंद स्थान या वस्तु आदि किसी की भी हो सकती है।

किसी के मन में कुण्डलिनी के बारम्बार प्रकट होने का सीधा सा अर्थ है कि वह किसी भी चीज की गहराई तक जाता है, और उसे ऊपर-२ से जानकार छोड़ नहीं देता। इससे गहराई तक जाने का उसका स्वभाव स्वयं ही बन जाता है। इस धीर स्वभाव से यह होता है कि जब वह कोई भी काम करता है, तब उसे पूरे विस्तार के साथ सम्पादित करता है। वह उसमें कोई कमी नहीं रहने देना चाहता। वह उस काम से लम्बे समय तक चिपका रहता है। इससे उसे उस काम के बारे में ज्यादा से ज्यादा ज्ञान व अनुभव प्राप्त करने का मौक़ा मिल जाता है। इससे उसकी कुण्डलिनी भी मजबूत होती रहती है, क्योंकि कुण्डलिनी को भी तो चिपकू स्वभाव की ही जरूरत होती है। इससे दोनों सिद्धियाँ एकसाथ प्राप्त हो रही होती हैं। एकतरफ उसे कौशल विकास के साथ भौतिक काम की उच्च गुणवत्ता के रूप में भौतिक सिद्धि प्राप्त हो रही होती है, तो दूसरी तरफ कुण्डलिनी विकास के रूप में आध्यात्मिक सिद्धि भी।

कुण्डलिनी व कौशल विकास के आपसी रिश्ते के बारे में प्रेमयोगी वज्र का अपना अनुभव

जब प्रथम देविरानी के रूप की कुण्डलिनी उसके मन में फुली ब्लोन अप थी, तब वह सभी काम बड़ी बारीकी से करता था। वह अपना अकादैमिक अध्ययन बहुत गहरी व स्पष्टता से करता था। वह हरेक विषय की जड़ तक चला जाता था। उसे औरों के द्वारा ऊपर-२ से किया गया काम पसंद नहीं आता था। वह उसके लिए उन्हें कई बार ताने भी मार देता था, जिससे बहुत से लोग उसे अव्यावहारिक, आलोचक, नकारात्मक, बड़ी-२ बातें बनाने वाला, व घमंडी मानने लग गए थे। परन्तु वह औरों की सहायता के बिना कैसे बदलाव ला सकता था। अकेला चना भांड नहीं फोड़ सकता। अतः उसे अनेकों बार परिस्थिति के साथ समझौता करना पड़ता था।

कालान्तर में जब उसके मन में गुरु के रूप की कुण्डलिनी चमकने लगी, तब वह बहुत ज्यादा व्यावहारिक व स्वावलंबी बन गया। तब उसने जो भी काम किए, वे पूरी गुणवत्ता के साथ किए। वह छोटे-२ सभी काम स्वयं कर लेता था, क्योंकि उसकी बारीक और गहरी नजर को कोई समझ ही नहीं पाता था। जब लोगों ने उसके चमत्कारिक परिणाम देखे, तब लोगों को असलियत का पता चला, और वे उसकी तारीफ करने लगे।

सौहार्दपूर्ण वातावरण में कौशल अधिक विकसित होता है

ऐसे वातावरण में लोग एक-दूसरों को वस्तु-सेवाओं व व्यावहारिक जानकारियों का आदान-प्रदान करते रहते हैं। कुण्डलिनी विकास के लिए भी सौहार्दपूर्ण वातावरण की आवश्यकता होती है। इससे भी यही सिद्ध होता है कि कुण्डलिनी कौशल विकास में मदद करती है।

कुण्डलिनी योग को कौशल विकास के प्रशिक्षण में शामिल किया जाना चाहिए

प्रेमयोगी वज्र को प्राकृतिक रूप से इतना अधिक प्यार मिला कि उसके मन में स्वयं ही कुण्डलिनी विकसित हो गई। उसे योग करने की जरूरत ही नहीं पड़ी। यह अलग बात है कि उसने बाद में दूसरों के लाभ के लिए कुण्डलिनी योग से

भी कुण्डलिनी जागरण प्राप्त किया, ताकि सभी लोगों को कुण्डलिनी की उपलब्धि हो सके। सभी लोग उसकी तरह तो खुशकिस्मत नहीं होते।

सबसे प्रिय वस्तु को ही कुण्डलिनी कहते हैं। जब कौशल प्रशिक्षण कुण्डलिनी के साथ जुड़ जाता है, तब वह भी कुण्डलिनी की तरह ही सर्वाधिक प्रिय बन जाता है। यही कौशल व कुण्डलिनी के आपसी गठजोड़ का मूलभूत सिद्धांत है। इससे कौशल व कुण्डलिनी आजीवन एक-दूसरे को एकसाथ बढ़ाते रहते हैं, और एकसाथ बुलंदियां छूते रहते हैं।

कुण्डलिनी से सुहाने सपने

दोस्तों, अब मुझे हर हफ्ते नई पोस्ट लिखने के लिए खुद ही हिंट मिल जाती है, और नई घटना भी। आज रात को मैंने एक तंत्र से सम्बंधित स्वप्न देखा। वह जीवंत, स्पष्ट व असली लग रहा था। वह स्वप्न सुबह के समय आया। ऐसा लग रहा था कि वह मेरी किसी पूर्वजन्म की घटना पर आधारित रहा होगा। तभी तो मैं उसमें भावनात्मक रूप से बहुत ज्यादा बह गया था, और मुझे आनंद भी आया। उस स्वप्न से प्राचीनकाल के तंत्र के बारे में मेरे मन में तस्वीर स्पष्ट हो गई। वैसे भी एक कुण्डलिनी योगी का पुरानी या अपने पूर्वजन्मों की घटनाओं से सामना उसके स्वप्न में होता ही रहता है। वे सारे स्वप्न बहुत मीनिंगफुल होते हैं।

प्राचीनकाल में तंत्र बहुत उन्नत था

उस सपने में मैंने देखा कि मैं अपने परिवार सहित एक ऊंचे पहाड़ के किसी पर्यटक स्थल जैसे स्थान पर था, जहां पर चहल-पहल थी, व बहुत आनंद आ रहा था। कुछ पुराने परिचितों से भी वहां मेरी मुलाक़ात हुई। उस पहाड़ की तलहटी एक मैदानी जैसे भूभाग से जुड़ी हुई थी। उस जोड़ पर एक विशालकाय मंदिर जैसा स्थान था। हम नीचे उतर कर उस मंदिर परिसर में प्रविष्ट हो गए। चारों और बहुत सुन्दर चहल-पहल थी। बहुत आनंद आ रहा था। परिसर में एक प्रकाशमान गुफा जैसी संरचना भी थी, जिसके अन्दर भी बाजार सजे हुए थे। मेरी पत्नी उसमें घुमते-फिरते और शौपिंग करते हुए कहीं मुझसे खो गई थी। मैं उसे भी खोज रहा था। उस खोजबीन में मैंने मंदिर के बहुत से कमरे देखे, जो लाइन में थे. हालांकि कुछ कमरे सीढ़ियों से कुछ ऊपर चढ़कर भी थे। ऐसा लग रहा था, जैसे कि सारा मंदिर परिसर किसी विशालकाय छत के नीचे था। नीचे की पंक्ति के एक कमरे में मैं घुस गया। वहां पर बहुत से लोग नीचे, एक दरी पर बैठे थे। वहां पर बीच में जैसे मैंने अपना बैग पीठ से उतार कर रख दिया, और मैं भी बैठ गया। तभी एक महिला अन्दर आई, और मुझे बड़े प्यार व अपनेपन से अपने साथ, गलियों से होते हुए, सीढ़ियों के ऊपर के एक कमरे तक ले गई। उससे कुछ पुरानी जान-पहचान भी महसूस हो रही थी, पर वह स्पष्ट नहीं थी। शायद इसीलिए मुझे उसके साथ आनंद आ रहा था। एक-दो स्थान पर उसने मुझे अपना स्पर्श भी करवाया। वह उस कमरे में एक कुर्सी पर बैठ गई। उसके सामने मेज पर बहुत से कागजात पड़े थे। उसके समीप ही दो-चार पुरुष लोग भी कुर्सियों पर बैठे हुए थे। महिला ने किसी बीमा जैसी योजना के कुछ कागजात जैसे दिखाए, और मुझसे कहा कि मेरी पत्नी ने उस योजना के लिए हामी भरी थी। मैं मुकरने लगा, तो उसके चेहरे पर कुछ हलकी मायूसी जैसी दिखी। तभी वे लोग कुछ अन्य ग्राहकों का काम निपटाने लगे, जिससे मैं मौक़ा पाकर वहां से खिसक गया। मैं वापिस उसी कमरे में आ गया, जहां पहले बैठा था, क्योंकि मैं अपना बैग वहीं भूल गया था। पर मुझे अपना बैग वहां नहीं मिला। मैं काफी उदास हुआ, क्योंकि उसमें कुछ अन्य जरूरी चीजों के साथ मेरा महँगा किन्डल ई-रीडर भी था। मैं बहुत निराश होकर बैग खोजने लगा। मैंने कई कमरों में तलाश की, यह सोचकर कि कहीं मैं दूसरे कमरों में तो नहीं बैठा। मैं फिर बीच वाली खुली लॉबी में गया, जिसके अन्दर वे कमरे खुलते थे। वह एक रेलवे स्टेशन की तरह बहुत खुली-डुली जगह थी, जहाँ पर काफी चहल-पहल थी। वहां एक-दो पुलिस वाले भी सीमेंट के बेंच पर बैठे हुए थे। उनसे पूछा, तो उन्होंने लापरवाही से व मुझसे पीछा छुड़ाने के लिए कहा कि मेरा बैग कभी नहीं मिलेगा, और उसे किसी ने उठा लिया होगा। मैंने फिर से उसी कमरे का दरवाजा खोला, जहां मैं बैठा हुआ था। वहां पर दो भद्र पुरुष नाईट सूट में मदिरा पीने का आनंद ले रहे थे। वे दोनों पालथी लगा कर आराम से बैठे फुए थे। वे मध्यम कद-काठी के और कुछ सांवले लग रहे थे। मदहोशी की ख़ुशी की मुस्कान उनके चेहरे पर साफ झलक रही थी। पूछने पर उन्होंने मुझे बताया कि मेरा बैग वहीं कमरे में पड़ा था। मैं बहुत खुश हुआ और उनसे कहा कि शराब से आपके अन्दर ज्ञान की आँख खुली, जिससे आप मेरा बैग ढूंढ सके। वे बहुत खुश होकर मुस्कुराने लगे, और एक पेग हाथ में पकड़ कर मुझसे बोले कि मैं भी उसे देवी माता के नाम पर पी लेता। मैंने उन्हें मुस्कुराते हुए धन्यवाद कहा, और चल दिया। यद्यपि मेरा मन लगातार कर रहा था कि मैं एक पेग देविमाता के नाम पर लगा लेता। परन्तु मैं उन्हें मना कर चुका था, इसलिए वापिस नहीं मुड़ना चाहता था। परिसर से बाहर निकल कर ही दुकानों की एक कतार लगी हुई देखी। मैं एक मिठाई की दुकान में कुछ मिठाई खरीदने के लिए घुस गया। वहां पर दुकान के शुरू में ही खड़े मुझे कुछ चिर-परिचित दोस्त मिले, जो ख़ुशी के साथ शराब के बारे में कुछ आपसी बातें करने लगे। मैंने कहा कि ऐसी बातें न करो, नहीं तो मेरा मन भी देवी माता के नाम पर एक पेग लगाने का कर जाएगा। ऐसा सुनकर सब हंसने लगे। उन दुकानों की कतार वाली सड़क चढ़ाई की दिशा में बाहर जा रही थी। कुछ चढ़ाई चढ़ कर मैं निचले तरफ की एक दुकान के सीमेंट से बने पक्के प्लेटफोर्म पर चढ़ गया। तभी मुझे विचित्र व दिल को छूने वाले गाजे-बाजे/संगीत की आवाजें सुनाई देने लगीं। वह सजे हुए रथ पर देवी माता की झांकी निकल रही होगी। मैं देवी माता के प्यार मैं इतना बह गया कि मेरी आँखों में प्रेम के आंसुओं की बाढ़ आ गई, और मैं हलकी आवाज में रुक-२ कर रोने लगा। मैं बार-बार अपनी दाहिनी बाजू को फोल्ड करके, उससे अपनी आँखों को

पोंछ रहा था, और आँखों को ढक भी रहा था। वह मैं इसलिए कर रहा था, ताकि कोई मुझे रोता हुआ जानकार अजीब न समझे, और उससे मेरे प्यार की भावना में बहने में रुकावट न पैदा हो। फिर मैंने सोचा कि उस अजनबी स्थान पर मुझे कोई नहीं पहचानता होगा। इसलिए मैं खुले दिल से जोर-जोर से रोने लगा। तभी मुझे एक लेटा हुआ भक्त सड़क पर दिखा, जो रोल होकर ऊपर की तरफ आ रहा था। वह देवी माता का कोई महान भक्त होगा। वह भी मध्यम से सांवले रंग का था। उसने खड़े होकर मुझे बड़ी-बड़ी व भावपूर्ण आँखों से देखा, और वह भी मानो भावना में बह गया। तभी मैंने देखा कि एक सांवले व ताकतवर आदमी ने एक बकरी के बच्चे को एक हाथ से सीधा अपने सिर से भी ऊपर, गले से पकड़ कर उठाया हुआ था, और उसे देवी माता की भक्ति के साथ मिश्रित क्रोध व हिंसक भाव के साथ देख रहा था। किड मिमिया रहा था। उसका दूसरा हाथ सीधा नीचे की ओर था, जिसमें उसने एक बड़ा सा खंजर पकड़ा हुआ था। वह बार-बार देवी माता का नाम ले रहा था। मैं पीछे हट कर दुकान की ओट में आ गया, ताकि वह निर्दयी दृश्य मुझे न दिखता। थोड़ी देर बाद, मैं आगे को खिसका ताकि मैं देख सकता कि क्या वहां पर किड के जुदा किए हुए धड़ और सिर थे, और चारों तरफ फैला हुआ खून था। परन्तु वहां पर सभी किड पहले की तरह ज़िंदा थे, और ख़ुशी से हिल-डुल रहे थे। उससे मैंने चैन की सांस ली, और ख़ुशी महसूस की। शायद सांकेतिक रूप में ही देवी माता को भेंट चढ़ा दी गई थी। तभी अलार्म बजा, और मेरा स्वप्न टूट गया।

उस स्वप्न से मुझे प्राचीनकाल के उन्नत तंत्र, विशेषकर काले तंत्र के बारे में स्पष्ट अनुभूति हुई। प्राचीनकाल में तंत्र एक उन्नत विज्ञान के रूप में था, और जन-जन में व्याप्त था। परन्तु उसके साथ हिंसा, व्यभिचार आदि के बहुत से दोष भी बढ़ जाते थे, विशेषतः जब उसे उचित तरीके से नहीं अपनाया जाता था। तंत्र के दुरूपयोग के कारण ही इसकी अवनति हुई। इस्लाम भी एक प्रकार का अतिवादी तंत्र ही है। यह इतना कट्टर है कि लोग इस बारे बात करने से भी कतराते हैं। इसीलिए यह जस का तस बना हुआ है। हिन्दु तंत्र में भी प्राचीनकाल में नरबली की प्रथा था, परन्तु उसका व्यापक विरोध होने पर उसे बंद कर दिया गया।

प्रेमयोगी वज्र का तंत्र सम्बंधित अपना अनुभव

उसने कुण्डलिनी के विकास के लिए किसी विशेष तंत्र का सहारा नहीं लिया। उसने वही काम किए, जो दूसरे सामान्य लोग भी करते हैं, पर उसने उन कामों को अद्वैतपूर्ण/तांत्रिक दृष्टिकोण के साथ किया। यही तरीका उचित भी है। इससे तंत्र का दुरुपयोग नहीं होता।

कुण्डलिनी द्वारा सुरक्षा की भावना के विकास के माध्यम से दंगों की रोकथाम

आजकल अधिकाँश लोगों में जरुरत से ज्यादा असुरक्षा की भावना बढ़ गई है। जो लोगों के पास है, उसका वे पूरा आनंद उठा ही नहीं पाते हैं। इसका कारण यही है कि वे भविष्य की चिंता अधिक करते हैं। लोगों के अन्दर भविष्य के मामले में असुरक्षा की भावना इस कदर बढ़ गई है कि वे हिंसक होकर अपने वर्तमान को बिगाड़ने पर तुल गए हैं। उदाहरण के लिए, भारत की संसद से पारित किए गए एक बिल को ही लें। इस बिल का नाम नागरिकता संशोधन विधेयक / सीएए (citizen amendment act/ CAA) है। इस बिल में पड़ौसी देशों में प्रताड़ित धार्मिक अल्पसंख्यकों को भारत में नागरिकता देने का प्रावधान है। ये पड़ौसी देश वही हैं, जो धर्म के नाम पर भारत से अलग हुए थे। वे देश तो इस्लामिक राष्ट्र बन गए, पर भारत धर्मनिरपेक्ष (यद्यपि मुस्लिम तुष्टिकरण के साथ) देश बना रहा।

उपरोक्त बिल के विरोध के लिए भारत के मुस्लिम भाइयों को स्वार्थपरक राजनेताओं व बुद्धिजीवियों द्वारा धर्म के नाम पर भड़काया जा रहा है। वे इसके विरोध में हिंसक प्रदर्शन कर रहे हैं। उनका मानना है कि वर्तमान में तो यह बिल उचित और मानवतावादी है। उनके मन का डर तो केवल अनजाने भविष्य के प्रति आशंकाओं (एनआरसी / NRC बिल आदि) को लेकर है। ऐसे लोग क़ानून से बच नहीं पाएंगे।

भविष्य से सम्बंधित सुरक्षा की भावना के मामले में पशु मनुष्य से बेहतर हैं

मैंपिछले गर्मी के मौसम में अपनी पत्नी के साथ सायं भ्रमण कर रहा था। वहां हम एक घास के मैदान में बने एक बैंच पर बैठ गए। वहां पर एक गाय बैठी थी, जो बड़े आराम से जुगाली कर रही थी। ऐसा लग रहा था कि दुनिया के सारे सुख उसे उस समय मिले हुए थे। वह प्रसन्न थी। उसके चेहरे पर अपने निकट भविष्य की चिंता जरा भी नजर नहीं आ रही थी। कुछ ही महीनों में कड़ाके की ठण्ड पड़ने वाली थी। वह बेघर थी, इसलिए स्वाभाविक था कि दो महीने की सर्दियों की रातों का ख्याल ही उसके होश उड़ा देता। पर वह उससे बेखबर होकर अपनी मौजूदा स्थिति का भरपूर लुत्फ़ उठा रही थी। कोई आदमी होता, तो पूरा गर्मियों का मौसम डर-२ के गुजरता। वह आने वाली सर्दियों की चिंता में डूबा रहता, और गर्मियों की सुहानी रातों का जरा भी आनंद न ले पाता। अपने विश्लेषण करने वाले दिमाग पर जरूरत से ज्यादा भरोसा करने से ऐसा ही होता है। ऐसे झूठे दिमागी जंजालों से बचने के लिए अद्वैत और कुण्डलिनी का सहारा लेना चाहिए।

कुण्डलिनी से सुरक्षा की भावना कैसे बढ़ती है?

कुण्डलिनी योग से मन की कुण्डलिनी मजबूत होती है। उससे अद्वैत भाव मजबूत होता है। अद्वैत भाव के मजबूत होने से आदमी को सभी कुछ एकसमान लगता है। इससे उसके मन में किसी ख़ास चीज के प्रति आसक्ति नहीं रहती। वह किसी ख़ास चीज को प्राप्त करने के लिए छटपटाता नहीं है। इसी वजह से वह किसी भी परिस्थिति का विरोध नहीं करता। यदि कभी करता भी है, तो शांतिपूर्वक ढंग से करता है। मानवता, अहिंसा, और शांति तो कुण्डलिनी योगी के अन्दर सबसे प्रमुख गुण होते हैं। **कुण्डलिनी इंसान को इंसान बनाती है।**

कुण्डलिनी समस्याओं से कैसे बचाती है?

कुण्डलिनी आदमी को नियंत्रित रखती है। वह आदमी को भड़कने नहीं देती। वह आदमी के धीरज को बढ़ाती है। उससे अद्वैत व शान्ति का अनुभव होता है। उससे दिमाग अच्छी तरह से व सकारात्मक रूप से काम करने लगता है। उससे समस्या को सुलझाने में मदद मिलती है। कुण्डलिनी पूरे शरीर में घूमती रहती है, जिससे पूरा शरीर स्वस्थ रहता है। उससे आदमी का शरीर बलवान और मेहनती बनता है। उससे भी समस्याएँ सुलझने लगती हैं।

यह सत्य सिद्धांत है कि कर्म का फल अवश्य मिलता है। कुण्डलिनी से आदमी बुरे काम कर ही नहीं पाता। उससे उसे भविष्य में बुरे फल मिलने की सम्भावना नहीं रहती। उससे भविष्य की समस्याएँ रुक जाती हैं।

कुण्डलिनी योग एक वैज्ञानिक और प्राकृतिक धर्म

इतिहास गवाह है कि अधर्म ने मानवता का उतना नुक्सान नहीं किया है, जितना धर्म ने किया है। सबसे पहला, प्राकृतिक और मानवतावादी धर्म कुण्डलिनी योग ही था। उसको किसी विशेष स्थान से सम्बन्ध रखने वाले और विशेष विचारधारा वाले लोगों के संगठन ने अपनाया। उससे हिन्दु धर्म बन गया। कुछ दूसरे स्थानों पर रहने वाले लोगों के विभिन्न संगठनों ने हिन्दु धर्म का विरोध करने वाले कुछ विभिन्न धर्म बना लिए। परन्तु वे इस गलतफहमी में रहे कि कुण्डलिनी योग हिन्दु धर्म की खोज है। वे आज तक इसी भ्रम में हैं। इसीलिए वे कुण्डलिनी योग को अपनाने में

हिचकिचाते हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि कुण्डलिनी योग पूरी तरह से वैज्ञानिक, बेरंग और कुदरती है। कुण्डलिनी योग के बिना तो कोई भी धर्म अधूरा है।

प्रेमयोगी वज्र के जीवन में कुण्डलिनी का योगदान

वह एक बिलकुल साधारण आदमी था। जब से उसे कुण्डलिनी का साथ मिला, तभी से वह तरक्की करने लगा। उसे तो कुण्डलिनी का बहुत सहयोग मिला। वास्तव में भगवान् कुण्डलिनी के माध्यम से ही सहायता करता है। उसी की सहायता से वह उच्च अध्ययन कर पाया। उसी की सहायता से वह उच्च भावना के साथ लोगों की सेवा कर पाया। उसी की वजह से वह उच्च स्तर का जीवन जी पाया। उसी की वजह से वह अनेक प्रकार की समस्याओं से बच पाया, और अनेक प्रकार की समस्याओं पर काबू पा पाया।

वह एक बार अपने घर समेत अपनी सारी संपत्तियों को छोड़कर घर से बहुत दूर चला गया। इससे उसकी भविष्य की सभी चिंताएं मिट गईं। उस नए व वीरान स्थान पर उसे अपनी असुरक्षा की भावना बिलकुल भी महसूस नहीं हुई। इससे उसे शान्ति मिली और वह कुण्डलिनी के बारे में अध्ययन करने लगा, और कुण्डलिनी योग करने लगा। एक साल के अन्दर ही उसकी कुण्डलिनी जागृत हो गई। कुण्डलिनी जागरण का अर्थ है, दुनिया के सभी सुखों की एकसाथ प्राप्ति। इससे मन पूरी तरह से तृप्त और संतुष्ट हो जाता है।

सीधा सा अर्थ है कि भविष्य को लेकर चिंता और असुरक्षा की भावना झूठी होती है। उनसे कुछ प्राप्त नहीं होता है, बल्कि जो अपने पास होता है, वह भी चला जाता है। इनसे जितना बचा जा सके, बचना चाहिए।

कुण्डलिनी ही वास्तविक धर्मनिरपेक्षता है ।

कुण्डलिनी जागरण- यह कैसे काम करता है

दोस्तो, क्वोरा पर कुण्डलिनी-जागरण के बारे में बहुत से प्रश्न पूछे जाते रहते हैं। मुख्य प्रश्न यही होता है कि कुण्डलिनी जागरण क्या होता है? बार-२ वही उत्तर दोहराना कुछ युक्तियुक्त सा नहीं लगता है। इसलिए मैंने निर्णय लिया कि इससे सम्बंधित एक वैबसाईट पोस्ट बनाई जाए, ताकि पाठकों को क्वोरा से इसकी ओर रिडायरेक्ट किया जा सके।

किसी को याद करना ही कुण्डलिनी जागरण है

तत्त्वतः तो ऐसा ही है। केवल याद करने के स्तर में ही भिन्नता होती है। कुण्डलिनी को इससे अधिक गहराई से याद नहीं किया जा सकता। जागरण की अवस्था में कुण्डलिनी दिल की गहराईयों में पूरी उतरी होती है। कुण्डलिनी जागरण के समय कुण्डलिनी आत्मा की गहराईयों में पूरी उतर चुकी होती है। वास्तव में कुण्डलिनी आत्मा से जुड़ जाती है। वह आत्मा से एकाकार हो जाती है। उस समय आत्मा उसे दूसरी वस्तु के रूप में नहीं देख पाता। उस समय आत्मा उसे अपने ही रूप में देखता है। आत्मा पूरी तरह से कुण्डलिनी-रूप बन जाता है। **<u>यहाँ याद किया गया व्यक्ति (गुर, देवता, प्रेमी आदि या सैद्धांतिक रूप से कुछ भी) ही कुण्डलिनी के रूप में होता है।</u>** आत्मा का अभिप्राय यहाँ आम आदमी का अपना निरपेक्ष व अंधकारमय स्वरूप है। वह रूप विचारों व अनुभवों से पूर्णतः रिक्त जैसा होता है। वह अंधकारमय शून्य जैसा होता है। वह माया या अज्ञान या भ्रम से ही अंधकारमय बना होता है। वास्तव में तो वह कुण्डलिनी की तरह ही प्रकाशमान होता है।

इसका मतलब है कि कुण्डलिनी-जागरण के समय आत्मा भी कुण्डलिनी के रूप में चमकने लगता है। इससे यह होता है की सभी कुछ अपने जैसा महसूस होने लगता है। कोई द्वैत नहीं रहता। सभी कुछ अद्वैत-रूप में प्रकाशित होने लगता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि कुण्डलिनी समेत सभी अनुभव स्वभाव से ही प्रकाशमान होते हैं। उस समय कुण्डलिनी के जुड़ने से आत्मा भी प्रकाशमान बन जाता है। विशाल अग्नि को अपनी एक लौ अपने से अलग कैसे लग सकती है? आत्मा को दुनिया के अनुभव / पदार्थ तब अपने से अलग लगते थे, जब वह कुण्डलिनी से नहीं जुड़ा था। उस समय उसे कुण्डलिनी भी अपने से अलग लगती थी। बेशक कुण्डलिनी का कितना ही ज्यादा ध्यान क्यों नहीं किया जाता था, कुछ न कुछ अलगाव तो उससे रहता ही था। एक अन्धकार से भरे कमरे को अपने अन्दर पैदा हुई एक आग की चिंगारी अपने जैसी कैसे लग सकती है? उसे तो वह अपने से अलग ही लगेगी न।

<u>कुण्डलिनी जागरण आदमी को उसकी अपनी असली आत्मा की झलक दिखाता है। इससे वह योगसाधना आदि के निरंतर अभ्यास से उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए प्रेरित होता है।</u>

कुण्डलिनी जागरण ज्यादा देर तक नहीं टिकता

कुण्डलिनी जागरण कुछ सेकंडों से ज्यादा समय तक नहीं झेला जा सकता। उस समय मस्तिष्क में विस्फोटक दबाव जैसा बना होता है। अधिकाँश मामलों में आदमी भय से या संकोच से कुण्डलिनी को स्वयं ही नीचे उतार देता है। यदि वह खुद न उतारे, तो कुछ देर में ही मस्तिष्क बहुत थक जाता है, और जागरण के अनुभव को खुद बंद कर देता है। फिर आदमी थकान के कारण आराम कर सकता है। संभवतः उसे नींद तो नहीं आती, क्योंकि वह उस समय आनंद, शान्ति, अद्वैत, और तनावहीनता से भरा होता है। उसका मस्तिष्क शून्य जैसा भी बन सकता है, जिसमें उसे विचार-शून्य असली आत्मा का अनुभव भी हो सकता है।

कुण्डलिनी जागरण की अवधि व्यक्ति के अभ्यास, मनोबल, शारीरिक बल, आयु, सामाजिक स्थिति आदि के ऊपर भी निर्भर कर सकती है। पर इसे एक मिनट से ज्यादा समय तक जारी रखना असंभव सा ही लगता है।

कुण्डलिनी जागरण के बारे में भ्रम

बहुत से लोग कुण्डलिनी-ध्यान को और प्राणोत्थान (कुण्डलिनी-उत्थान) को ही कुण्डलिनी जागरण समझ लेते हैं। यह भ्रम स्वाभाविक ही है, क्योंकि पूर्वोक्तानुसार सभी स्वभाव से समान ही हैं, और इन सभी स्थितियों में कुण्डलिनी का स्मरण या चिंतन विद्यमान होता है। केवल स्मरण के स्तर में ही अंतर होता है। साधारण कुण्डलिनी-ध्यान में यह स्मरण सबसे कम होता है। प्राणोत्थान में यह स्मरण और अधिक होता है। कुण्डलिनी-जागरण में यह सर्वोच्च होता है। जहां साधारण कुण्डलिनी ध्यान व प्राणोत्थान वाला कुण्डलिनी ध्यान लम्बे समय तक (घंटों से दिनों तक) लगातार जारी रखा जा सकता है, वहीँ कुण्डलिनी जागरण को एक मिनट से ज्यादा अवधि तक जारी नहीं रखा जा सकता। जहां साधारण कुण्डलिनी ध्यान और प्राणोत्थान वाले कुण्डलिनी ध्यान को अपनी इच्छा व अभ्यास से कभी भी पैदा

किया जा सकता है, वहीँ कुण्डलिनी जागरण को इच्छानुसार पैदा नहीं किया जा सकता। कुण्डलिनी जागरण स्वयं होता है, और बिना बताए होता है। जब बहुत सी अनुकूल परिस्थितियाँ इकट्ठी होती हैं, तभी यह होता है। साथ में, इसको पैदा करने के लिए एक मानसिक झटका देने वाला उत्तेजक या उद्दीपक (ट्रिगर) भी होना चाहिए। वास्तव में आदमी इसके होने के बारे में कोई पूर्वानुमान नहीं लगा पता। यह तब होता है, जब आदमी को इसके होने के बारे में जरा भी अंदेशा नहीं होता। परन्तु साथ में यह भी सत्य है कि यह कुण्डलिनी ध्यान और प्राणोत्थान की अवस्था में ही होता है, और ये व्यक्तिगत व परिवेशीय परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न अरसे से (महीनों से लेकर वर्षों की अवधि तक) जारी रखे हुए होने चाहिए।

कुण्डलिनी की प्राप्ति के लिए आवश्यक छह महत्त्वपूर्ण कारक- आध्यात्मिक जागरण सभी के लिए संभव है!

यह प्रमाणित किया जाता है कि इस वेबसाईट के अंतर्गत हम सभी किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं। यह वैबसाइट तांत्रिक प्रकार की है, इसलिए इसके प्रति गलतफहमी नहीं पैदा होनी चाहिए। पूरी जानकारी व गुणवत्ता के अभाव में इस वेबसाईट में दर्शाई गई तांत्रिक साधनाएं हानिकारक भी हो सकती हैं, जिनके लिए वैबसाइट जिम्मेदार नहीं है।

दोस्तों, मैंने पिछली पोस्ट में लिखा था कि कुण्डलिनी जागरण को अपनी इच्छा से प्राप्त नहीं किया जा सकता। परन्तु ऐसा भी नहीं है। यदि दृढ़ निश्चय से व सही ढंग से प्रयास किया जाए, तो उसे अपनी इच्छा से भी प्राप्त किया जा सकता है। कुण्डलिनी जागरण एक अजीबोगरीब घटना है। यह सबसे साधारण भी है, और साथ में सबसे जटिल भी। इसे अपनी इच्छा से भी प्राप्त किया जा सकता है, और नहीं भी। इसे अपने प्रयास से प्राप्त भी किया जा सकता है, और नहीं भी। परिस्थिति के अनुसार इसमें विभिन्न विरोधी भावों का समावेश प्रतीत होता है।

आज हम बताएंगे कि कुण्डलिनी जागरण के लिए किन पांच चीजों का एकसाथ इकट्ठा होना जरुरी है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए कुण्डलिनी ध्यान का महत्त्व

कुण्डलिनी ध्यान कुण्डलिनी जागरण के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारक है। कुण्डलिनी चित्र मन में स्पष्टता, आनंद, और अद्वैत के साथ बना होना चाहिए। वास्तव में कुण्डलिनी से आदमी में सभी मानवीय या आध्यात्मिक गुण स्वयं ही प्रकट हो जाते हैं। इन गुणों का आकलन करके भी यह पता लगाया जा सकता है कि कुण्डलिनी ध्यान कितना मजबूत है। ऐसा भी नहीं है कि योगसाधना से ही कुण्डलिनी का ध्यान होता हो। वास्तव में अद्वैत भावना (कर्मयोग) से पैदा होने वाला कुण्डलिनी ध्यान ज्यादा व्यावहारिक, ज्यादा मजबूत और ज्यादा मानवीय होता है।

अलग-२ चक्रों पर कुण्डलिनी-ध्यान करने से सभी चक्र भी मजबूत हो जाते हैं। फिर जब तांत्रिक प्रक्रिया से कुण्डलिनी को सभी चक्रों से गुजारते हुए मस्तिष्क तक उठाया जाता है, तब चक्रों की शक्ति भी स्वयं ही मस्तिष्क में पहुँच जाती है। इस तरह से हम कह सकते हैं कि चक्रों की शक्ति कुण्डलिनी जागरण के लिए छटा महत्त्वपूर्ण कारक है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए प्राणों का महत्त्व

प्राण शक्ति (शारीरिक व मानसिक शक्ति) का ही पर्यायवाची रूप है। जैसे शक्ति के बिना कोई भौतिक कार्य संभव नहीं होता है, उसी तरह कुण्डलिनी जागरण भी प्राणों की मजबूती के बिना संभव नहीं है। कमजोर, सुस्त व बीमार आदमी को कुण्डलिनी जागरण की प्राप्ति नहीं हो सकती।

कुण्डलिनी और प्राण साथ-साथ रहते हैं। जब योग साधना से कुण्डलिनी को शरीर के निचले चक्रों से मस्तिष्क को चढ़ाया जाता है, तब उसके साथ प्राण भी अपने आप ऊपर चढ़ जाते हैं। यदि शरीर में प्राणों की कमी होगी, तो मस्तिष्क में पहुँच कर भी कुण्डलिनी कमजोर जैसी बनी रहेगी, और जागृत नहीं हो पाएगी।

कई लोग मानते हैं कि आराम से बैठकर, और खा-पी कर हमारे शरीर में प्राण शक्ति इकट्ठी हो जाएगी। परन्तु ऐसा नहीं है। यदि ऐसा होता, तो सभी बड़े-२ सेठ कब के कुण्डलिनी जागरण प्राप्त कर चुके होते। प्राण वास्तव में शरीर और मन की क्रियाशीलता, सामाजिकता, अद्वैत व मानवता से ही संचित होते हैं। इसीलिए तो पुराने समय में राजा लोग कई वर्षों तक सर्वोत्तम विधि से राज-काज चलाने के बाद एकदम से वनवास को चले जाया करते थे। उससे उनकी पुरानी क्रियाशीलता से मजबूत बने हुए प्राण उनकी कुण्डलिनी को शीघ्र ही जागृत कर दिया करते थे।

प्रेमयोगी वज्र के साथ भी ऐसा ही हुआ था। उपरोक्त प्रकार की भरपूर दुनियादारी के बाद वह योग साधना करने के लिए एकांत में चला गया। वहां उसकी संचित प्राण शक्ति उसकी कुण्डलिनी को लग गई, और वह जागृत हो गई।

कुण्डलिनी जागरण के लिए इन्द्रियों की अंतर्मुखता का महत्त्व

यदि इन्द्रियों का मुंह बाहर की ओर खुला रहेगा, तो संचित प्राण बाहर निकल जाएंगे। इससे वे कुण्डलिनी को जागृत नहीं कर पाएंगे। अंतर्मुखता का मतलब गूंगे-बहरे बनना नहीं है। इसका अर्थ तो बाहरी दुनिया में कम से कम उलझना है।

प्रेमयोगी वज्र भी जब दुनियादारी से दूर होकर एकांत में योग साधना करने लगा, तब वह अपने गुजारे लायक ही बहिर्मुखी रहने लगा, जरूरत से ज्यादा नहीं। वैसे तंत्र ने भी उसकी काफी सहायता की। उसकी जो शक्ति दुनियादारी में बर्बाद हो जाती थी, वह उसकी तांत्रिक जीवन पद्धति से पूरी हो जाती थी। अपनी उस तंत्र-संवर्धित प्राण शक्ति से वह कुण्डलिनी व योग के बारे में गहरा अध्ययन करता था, योग करता था, हलके-फुल्के भ्रमण करता था, और हलके-फुल्के काम करता था। फिर भी उसमें काफी प्राण शक्ति शेष बची रहती थी, जो उसकी कुण्डलिनी को जगाने में काम आई।

कुण्डलिनी जागरण के लिए वीर्य शक्ति का महत्त्व

वीर्य शक्ति तंत्र का प्रमुख आधार है। वीर्य शक्ति के बिना कुण्डलिनी को जागरण के लिए अपेक्षित मुक्तिगामी वेग (escape velocity) प्राप्त नहीं होता। तांत्रिक साधना के माध्यम से वीर्य शक्ति को आधार चक्रों से ऊपर उठाकर मस्तिष्क तक पहुँचाया जाता है। वीर्यशक्ति के साथ प्राण भी ऊपर चला जाता है। वीर्य शक्ति के नाश के साथ बहुत सा प्राण भी नष्ट हो जाता है। वीर्य शक्ति के बचाव से प्राण का बचाव हो जाता है, जो तंत्र के माध्यम से मस्तिष्क स्थित कुण्डलिनी को प्रदान कर दिया जाता है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए एक ट्रिगर का महत्त्व

यदि उपरोक्त सभी अनुकूल परिस्थितियाँ मस्तिष्क में मौजूद हों, पर साथ में यदि एक मानसिक झटका/ट्रिगर न मिले, तो भी कुण्डलिनी जागरण नहीं होता। मैं उस ट्रिगर को एक उदाहरण से समझाता हूँ। मान लो कि दो गुरुभाई कुण्डलिनी योगी हों, और दोनों अलग-२ जगहों पर अपने गुरु के रूप की कुण्डलिनी का ध्यान कर रहे हों। फिर वे वर्षों बाद अचानक किसी मेले/समारोह आदि में आपस में प्यार से मिलें, तो वह मुलाक़ात उन दोनों के लिए एक ट्रिगर का काम करेगी। उससे उन दोनों का ध्यान अपने गुरु पर जाएगा, जिससे पहले से उनके मन में बसी हुई गुरु के रूप की कुण्डलिनी प्रचंड होकर एकदम से जागृत हो जाएगी। यदि उस ट्रिगर में सैक्सुअल अंश भी हो, तो वह और ज्यादा मजबूत बन जाती है।

कुण्डलिनी से लेखक की लेखन कला/कौशल, व्यक्तित्व, अनुभव, मस्तिष्क व सम्पूर्ण स्वास्थ्य का विकास

दोस्तों, लिखना आसान है, पर लिखी हुई बात का पाठकों के दिलो-दिमाग पर राज करना आसान नहीं है। लिखी हुई बातें जरूरतमंद लोगों तक पहुंचनी चाहिए। यदि वे गैर जरूरतमंद लोगों के पास पहुँचती हैं, तो उनसे लाभ की बजाय नुक्सान ही है। वैसे लोग उनको पढ़ने के लिए केवल अपना समय ही बर्बाद करेंगे। कई बार तो वैसे लोग उलटी शिक्षा भी ले लेते हैं। इससे लेखक का भी नुक्सान होता है। एक लेखक की किस्मत पाठकों के हाथ में होती है। इसलिए हमेशा अच्छा ही लिखना चाहिए। वैसा लिखना चाहिए, जिससे सभी लोगों को लाभ मिले। यदि केवल एक आदमी भी लेखन से लाभ प्राप्त करे, तो वह भी लाखों केजुअल पाठकों से बेहतर है। इसलिए एक लेखक को ज्यादा पाठकों की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए, बल्कि जरूरतमंद और काबिल पाठकों की ख्वाहिश रखनी चाहिए। इसीलिए प्राचीन समय में कई गुरु केवल एक ही आदमी को अपना शिष्य बनाते थे, और उसे अपने समान पूर्ण कर देते थे। मैंने अपने कोलेज टाईम में चिकित्सा विज्ञान के ऊपर आध्यात्मिक शैली में एक लेख लिखा था। जाहिर है कि उसके सभी पाठक चिकित्सा विज्ञान से जुड़े हुए थे। उसे इवल 100-200 पाठकों ने पढ़ा। मुझे नहीं पता कि उससे उन्हें क्या लाभ मिला। पर इतना जरूर अंदाजा लगता हूँ कि वे जरूरतमंद व काबिल थे, इसलिए उन्हें उससे उन्हें जरूर लाभ मिला होगा। मैं भी उन पाठकों की तरह ही उस लेख के लिए जरूरतमंद और काबिल था, इसीलिए मुझे भी लाभ मिला। इसका मतलब है कि लेखक पहले अपने लिए लिखता है, अपनी जरूरत को पूरा करने के लिए लिखता है। बाद में उससे पाठकों की जरूरत पूरी होती है। अगर अपनी ही जरूरत पूरी नहीं होगी, तो पाठकों की जरूरत कैसे पूरी होगी। ब्लाक। मुझे तो उसे लिखने से बहुत से लाभ मिले। उससे मेरे जीवन की दिशा और दशा बदल गई। मेरा जीवन सकारात्मक, जोशीला, मेहनती व लगन वाला बन गया। इससे लगता है कि उस लेख से पाठकों को बहुत फायदा हुआ होगा। वह इसलिए, क्योंकि लेखक पाठकों का दर्पण होता है। उसमें पाठकों की खुशी भी झलकती है, और गम भी। इसलिए अच्छा और फायदेमंद ही लिखना चाहिए।

कुण्डलिनी से फालतू दिमागी शोर थमता है, जिससे लाभपूर्ण विचारों के लिए मस्तिष्क में नई जगह बनती है

कुण्डलिनी पर ध्यान केन्द्रित करने से मस्तिष्क की फालतू शक्ति कुण्डलिनी पर खर्च हो जाती है। इससे वह विभिन्न प्रकार के फालतू विचारों को बना कर नहीं रख पाती। यदि वैसे विचार बनते भी हैं, तो वे बहुत कमजोर होते हैं, जिन पर कुण्डलिनी हावी हो जाती है। फालतू विचारों के थमने से मस्तिष्क में नए, सुन्दर, व्यावहारिक, अनुभवपूर्ण व रचनात्मक विचारों के लिए जगह बनती है। उन विचारों को जब हम लिखते हैं, तो बहुत सुन्दर लेख बनता है।

कुण्डलिनी से लेखक की दिमागी थकान दूर होती है, जिससे नए विचारों के लिए दिमाग की स्फूर्ति पुनः जाग जाती है

लिखने के लिए लेखक को ताबड़तोड़ विचारों का सहारा लेना पड़ता है। वे विचार विभिन्न प्रकार के होते हैं। कुछ नए होते हैं, कुछ पुराने, कुछ बहुत पुराने। उन विचारों की बाढ़ से लेखक अशांत, बेचैन, तनावयुक्त व भ्रमित सा हो जाता है। उसकी भूख-प्यास घट जाती है। उसका रक्तचाप बढ़ जाता है। वह थका-२ सा रहता है। वह चिड़चिड़ा सा हो जाता है। वैसी हालत में कुण्डलिनी योग उसके लिए संजीवनी का काम करता है। कुण्डलिनी उसे एकदम से रिफ्रेश कर देती है, और वह नया लेख लिखने के लिए तैयार हो जाता है।

कुण्डलिनी से लेखक का अपना वह शरीर स्वस्थ रहता है, जो ज्यादातर समय गतिहीन सा रहने से रोगग्रस्त बन सकता है

लेखक को अधिकाँश समय बैठना पड़ता है, तभी वह लिख पाता है। यदि आदमी अपनी जीवनी-शक्ति/प्राण-शक्ति को गतिशील कामों में ज्यादा लगाएगा, तो वह लेखन के लिए कम पड़ जाएगी। वैसे तो लेखक अपना संतुलन बना कर रखते हैं, पर फिर भी कई बार बहुत बैठना पड़ता है। वैसे समय में तो कुण्डलिनी उसके लिए औषधि का काम करती है। वह शरीर के सभी हिस्सों पर रक्त संचार को कायम रखती है, क्योंकि जहाँ कुण्डलिनी है, वहां रक्त-संचार/प्राण-संचार है।

कुण्डलिनी लेखक के द्वारा अक्सर की जाने वाली पाठकों को खोजने वाली अंधी दौड़ पर लगाम लगाती है

कुण्डलिनी मन की इच्छाओं की छटपटाहट पर लगाम लगाती है। उन इच्छाओं में पाठकों को पाने की महत्त्वाकांक्षी इच्छा भी शामिल है। वैसी इच्छाओं से लेखक को बहुत सी परेशानियाँ घेर लेती हैं। कुण्डलिनी आदमी को अद्वैत का बोध करा कर यथाप्राप्त जीवन से संतुष्ट करवाती है। इससे लेखक अपने लेखन के व्यर्थ के प्रचार-प्रसार से भी बचा

रहता है। इससे वह अपना पूरा ध्यान अपने लेखन पर लगा पाता है। जिस पाठक को जिस प्रकार के लेख की जरूरत होती है, वह उसे ढूंढ ही लेता है। उसे तो बस मामूली सा इशारा चाहिए होता है।

पाठकों का काम भी लेखक की तरह ही दिमागी होता है। इसलिए उन्हें भी कुण्डलिनी से ये सारे लाभ मिलते हैं। इसी तरह, अन्य दिमागी या शारीरिक काम करने वाले लोगों को भी कुण्डलिनी से ये सारे लाभ मिलते हैं, क्योंकि दिमाग/मन ही सबकुछ है।

कुण्डलिनी ही तांत्रिक सैक्सुअल योग के माध्यम से इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना नाड़ियों; चक्रों, और अद्वैत को उत्पन्न करती है।

सभी मित्रों को शिवरात्रि पर्व की बहुत-2 बधाइयां । यह तांत्रिक पोस्ट तंत्र के आदिदेव भगवान शिव व तंत्र गुरु ओशो को समर्पित है।

प्रमाणित किया जाता है कि इस तांत्रिक वैब पोस्ट में किसी की भावना को ठेस पहुंचाने का प्रयास नहीं किया गया है। इसमें तांत्रिक वैबसाइट के अपने स्वतंत्र विचार जनहित में प्रस्तुत किए गए हैं। हम यौनिहिंसा की पुरजोर खिलाफत करते हैं।

कुण्डलिनी ही सबकुछ है। उसी का ध्यान जब शरीर के विशेष बिन्दुओं पर किया जाता है, तब वे बिंदु चक्र कहलाते हैं। उसी को गति देने से जब काल्पनिक मार्ग बनते हैं, तब वे भी नाड़ियाँ कहलाते हैं। उसी का ध्यान करने से अद्वैत स्वयं उत्पन्न होता है। इसी तरह अद्वैत का ध्यान करने से कुण्डलिनी स्वयं ही मन में प्रकट हो जाती है।

हमारी रीढ़ की हड्डी में दो आपस में गुंथे हुए सांप बहुत से धर्मों में दिखाए गए हैं। बीच में एक सीधी नाड़ी होती है।

आपस में गुंथे हुए दो नाग यब-युम आसन में जुड़े हुए दो तांत्रिक प्रेमी हैं

जैसा कि आप नीचे दिए गए चित्रों में देख पा रहे हैं। एक नाग पुरुष है, और दूसरा नाग स्त्री है। यह पहले भी हमने बताया है कि मनुष्य का समग्र रूप उसके तंत्रिका तंत्र में ही है, और वह फण उठाए हुए नाग की शक्ल से मिलता-जुलता है। हमारे तंत्रिका तंत्र का मुख्य भाग मस्तिष्क समेत पीठ (मेरुदंड) में होता है। इसीलिए हमारी पीठ फण उठाए नाग की तरह दिखती है। क्योंकि कुण्डलिनी (संवेदना) इसी नाग के शरीर (तंत्रिका तंत्र) पर चलती है, इसलिए जिस किसी और रास्ते से भी जब कुण्डलिनी चलती है, तो अधिकांशतः उस रास्ते को भी नाग का रूप दिया जाता है। वास्तव में एक नाग एक तांत्रिक प्रेमी की पीठ को रिप्रेसेन्ट करता है, और दूसरा नाग दूसरे तांत्रिक प्रेमी की पीठ को। पुरुष प्रेमी स्त्री के मूलाधार चक्र से कुण्डलिनी का ध्यान शुरू करता है। फिर वह कुण्डलिनी को सीधा पीछे लाकर अपने मूलाधार पर स्थापित करता है। इस तरह से दोनों प्रेमियों के मूलाधार आपस में जुड़ जाते हैं, और एक केन्द्रीय नाड़ी का शाक्तिशाली मूलाधार चक्र बनता है, जिसे चित्र में क्रोस के चिन्ह से मार्क किया गया है। वह केन्द्रीय नाड़ी बीच वाले सीधे दंड के रूप में दिखाई गई है, जिसे सुषुम्ना कहते हैं। पुरुष नाग को पिंगला, व स्त्री नाग को इड़ा कहा गया है। फिर पुरुष प्रेमी कुण्डलिनी को ऊपर चढ़ा कर अपने स्वाधिष्ठान चक्र पर स्थापित करता है। वहां से वह उसे सीधा आगे ले जाकर स्त्री के स्वाधिष्ठान पर स्थापित करता है। इस तरह से सुषुम्ना का स्वाधिष्ठान भी क्रियाशील हो जाता है। फिर वह उसे स्त्री के स्वाधिष्ठान से ऊपर चढ़ा कर उसीके मणिपुर चक्र पर स्थापित करता है। उससे इड़ा

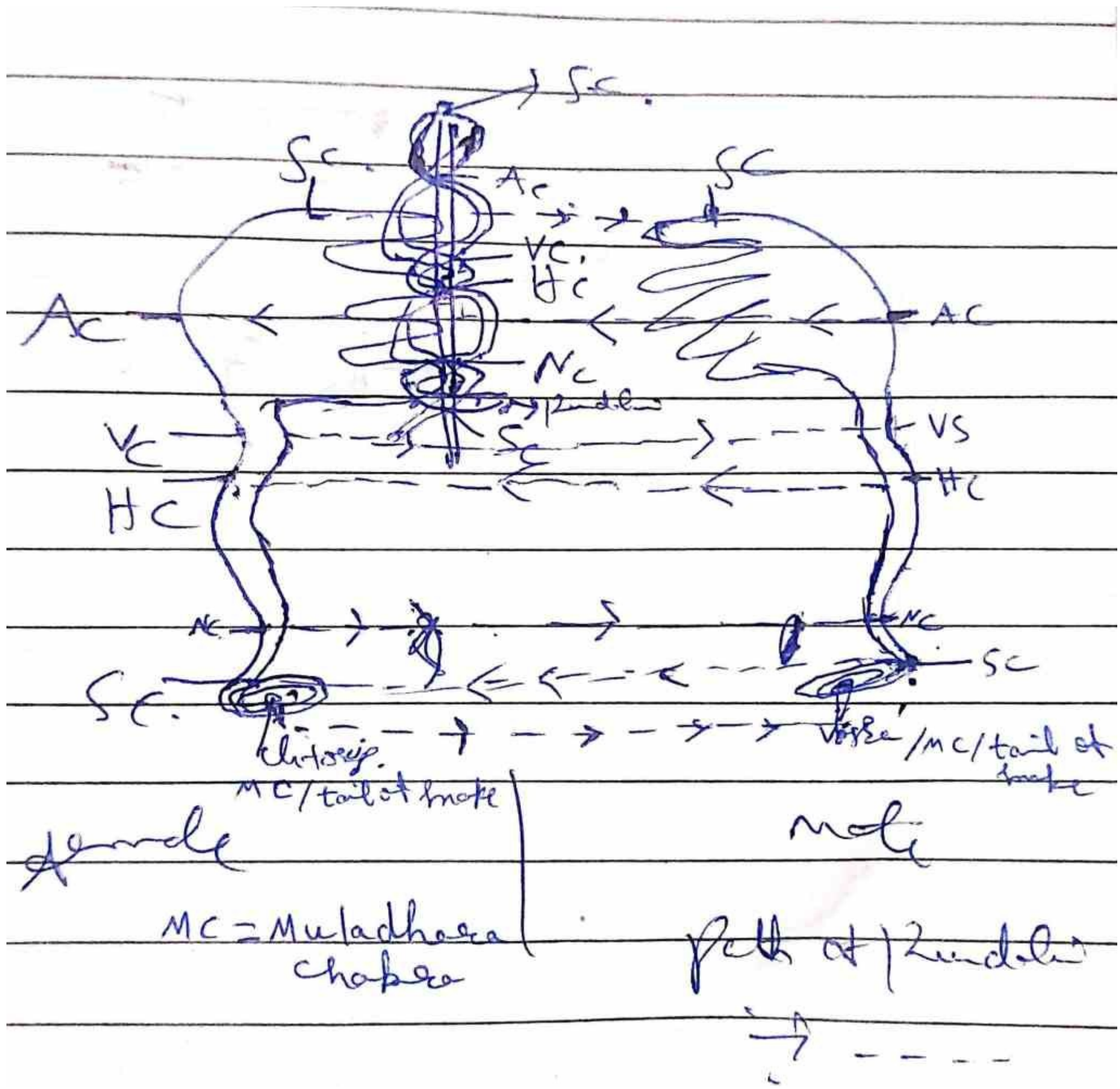
का मणिपुर सक्रिय हो जाता है। वहां से उसे सीधा पीछे ले जाकर अपने मणिपुर चक्र पर स्थापित करता है। उससे पिंगला का मणिपुर भी सक्रिय हो जाता है। दोनों नाड़ियों के मणिपुर चक्रों के एकसाथ क्रियाशील होने से सुषुम्ना का मणिपुर चक्र स्वयं ही क्रियाशील हो जाता है। इस तरह से यह क्रिया ऐसी ही सहस्रार चक्र तक चलती है। स्त्री प्रेमी भी इसी तरह कुण्डलिनी को चलाती है। इस तरह से दो नाग आपस में गुंथे हुए और ऊपर की ओर जाते हुए प्रतीत होते हैं, तथा सुषुम्ना के माध्यम से सहस्रार तक पहुँच जाते हैं।

कैड्यूसियस का चिन्ह (symbol of caduceus) भी तांत्रिक यौनयोग को ही रेखांकित करता है

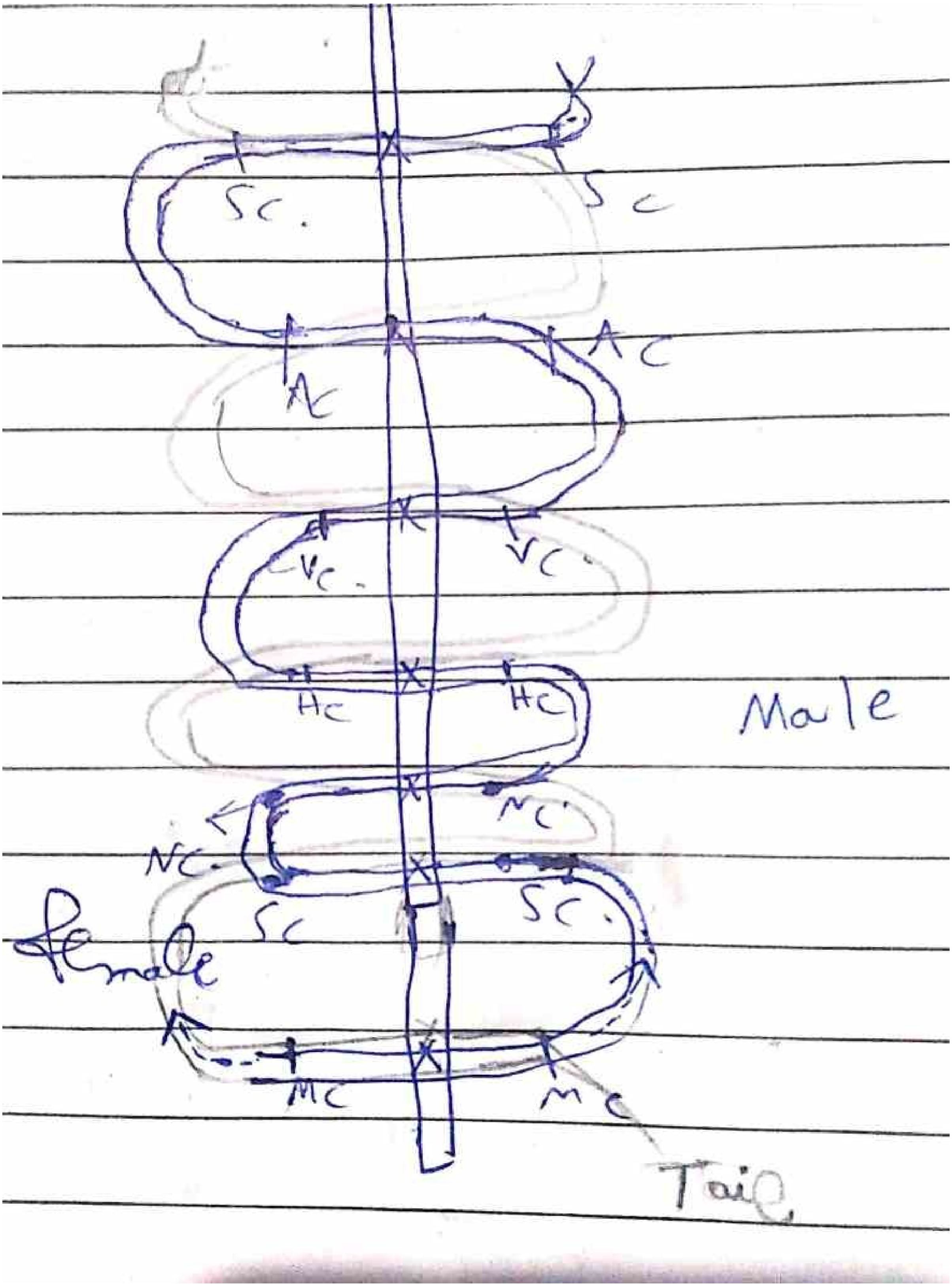
इस चिन्ह में दो सांप आपस में इसी तरह गुंथे हुए होते हैं। उनके बीच में एक सीधा स्तम्भ होता है, जिसके शीर्ष पर पंख लगे होते हैं। वास्तव में वे पंख कुण्डलिनी के सहस्रार की तरफ जाने का इशारा करते हैं। वैसे भी जागरण के समय कुण्डलिनी फरफराहट के साथ व ऊपर की ओर भारी दबाव के साथ उड़ती हुई महसूस होती है। वह स्तम्भ नीचे की तरफ टेपर करता है। इसका अर्थ है कि ऊपर चढ़ते हुए कुण्डलिनी अधिक शक्तिशाली होती जाती है।

अपने ही शरीर में दो लिपटे हुए नाग अपने ही शरीर के तंत्रिका तंत्र के सिम्पैथेटिक व पैरासिम्पैथेटिक भागों की संतुलित हिस्सेदारी को भी इंगित करते हैं

इड़ा को पैरासिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम कह सकते हैं। वह ल्यूनर, शांत, पेसिव, व फैमिनाइन है। पिंगला नाड़ी को सिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम कह सकते हैं। वह सोलर, भड़कीला, एक्टिव, व मैस्कुलाइन है। जब दोनों सिस्टम बराबर मात्रा में आपस में मिले हुए होते हैं, तब जीवन में संतुलन व अद्वैत छा जाता है। वैसी स्थिति में भी कुण्डलिनी विकसित होने लगती है, क्योंकि हमने पहले भी कहा है कि अद्वैत के साथ कुण्डलिनी हमेशा ही रहती है।



(केवल प्रतीकात्मक चित्र)



(केवल प्रतीकात्मक चित्र)

कुंडलिनी एक शिल्पकार के रूप में कार्य करती है, जो कि खराब मौसम द्वारा उत्पन्न द्वैत को अद्वैत में परिवर्तित करती है, जिससे यह बदलते मिजाज वाले मौसम के हानिकारक प्रभावों (शीतकालीन अवसाद सहित) से हमारी रक्षा करती है

दोस्तों, इस साल मौसम ने आम लोगों को बहुत परेशान किया। कड़ाके की ठण्ड बार-२ हमला करती रही। पर मुझे मेरी कुण्डलिनी ने इस समस्या का ज़रा भी आभास नहीं होने दिया। वास्तव में कोई मौसम खराब नहीं होता। हरेक मौसम में अपनी खूबसूरती होती है। गर्मियों में तनावहीनता, ढीलेपन, हल्केपन व शान्ति का एक अलग ही अहसास होता है। इसी प्रकार सर्दियों में चुस्ती का अहसास होता है। बरसात के मस्तीपने का एक अलग ही अंदाज होता है।

बदलता मौसम शरीर और मन के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है

हमारे शरीर और मन को मौसम के अनुसार अपने आपको ढालने के लिए कुछ दिनों के समय की जरूरत पड़ती है। वे दिन शरीर और मन के लिए जोखिम भरे होते हैं, क्योंकि उन दिनों में वे पुराने मौसम के अनुसार चल रहे होते हैं, और नए मौसम से सुरक्षा के लिए जरूरी बदलाव उनमें नहीं आए होते हैं। ऐसे जोखिम भरे दिनों में कुण्डलिनी हमें अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान कर सकती है।

मौसम में ऐसे अचानक बदलाव पहाड़ों में बहुत होते हैं। वहां धूप लगने पर एकदम से गर्मी बढ़ जाती है, और ज़रा से बादल के टुकड़े से सूरज के ढक जाने पर एकदम से ठण्ड पड़ जाती है। ऐसा लगातार चलता रहता है। जैसे-२ पहाड़ों की ऊँचाई बढ़ती जाती है, मौसम के बदलाव भी बढ़ते जाते हैं। इसीलिए तो तिब्बत में तांत्रिक योग बहुत कामयाब और लोकप्रिय हुआ, क्योंकि वही एकदम से कुण्डलिनी को चमकाने में सक्षम है।

कुण्डलिनी मौसम के बदलाव से उत्पन्न द्वैत को अद्वैत में बदल देती है

यह तो हम पहले ही सिद्ध कर चुके हैं कि अद्वैत और कुण्डलिनी का चोली-दामन का साथ है। बदलता मौसम उतनी मार शरीर पर नहीं करता, जितनी मन पर करता है। बदलता मौसम खुद भी द्वैत-रूप (अच्छा-बुरा में बंटा हुआ) है, इसलिए वह मन को भी द्वैत से भर देता है। मन अच्छाई और बुराई (प्रकाश और अन्धकार) के बीच में झूलने लगता है। मन के रोगों की जड़ द्वैत ही तो है। और शरीर के रोगों की जड़ बीमार मन ही है।

नियमित कुण्डलिनी योग से अद्वैत लगातार पैदा होता रहता है, जो बदलते मौसम से पैदा द्वैत को मन पर हावी नहीं होने देता। यहाँ तक कि बदलते मौसम के द्वैत को भी अद्वैत में बदल कर प्रचंड अद्वैत पैदा करता है। वास्तव में द्वैत से ही अद्वैत निर्मित होता है, केवल कुण्डलिनी के रूप में कुशल कारीगर की जरूरत होती है। इसीलिए तो मानव इतिहास के शुरू से ही लोग योग साधना के लिए पहाड़ों का रुख करते आ रहे हैं। यह इसलिए, क्योंकि वहां बहुत द्वैत होता है, जिसे कुण्डलिनी-मिस्त्री अद्वैत में बदल देता है।

कुंडलिनी सर्दियों के अवसाद के खिलाफ प्रभावी उपकरण है

विशेष रूप से सुबह के समय उज्ज्वल प्रकाश का अभाव सर्दियों के अवसाद को उत्पादन करता है। कुंडलिनी का जब सुबह-सुबह ध्यान किया जाता है, तब मन में चेतना की तीव्र उज्ज्वल रोशनी पैदा होती है। यह अवसाद को रोकता है, और पहले से पैदा हुए सर्दियों के अवसाद को ठीक करता है।

कुण्डलिनी से प्रेरित होकर ही धर्म या परंपरा का निर्माण हुआ, जिससे पैदा होने वाले अद्वैत के नशे के अन्दर कुछ स्वार्थी धार्मिक कट्टरपंथियों ने नफरत का इतना जहर घोल दिया, जिससे पैदा होने वाली हिंसा से कई सभ्यताएं व संस्कृतियाँ समूल नष्ट हो गईं, और कई नष्ट होने की कगार पर हैं

हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

दोस्तों, अभी हाल ही में दिल्ली में आम आदमी पार्टी (AAP) के विधायक ताहिर हुसैन के घर की छत से बहुत से देसी हथियार बरामद हुए हैं, जिनसे दिल्ली में मासूम लोगों की भीड़ को निशाना बनाया गया, जिससे बहुत से लोगों की जानें भी गईं। वास्तव में वह एकाएक नहीं हुआ। उसके लिए कट्टरपंथियों की योजना बड़े सुनियोजित तरीके से लम्बे समय से चल रही थी। वास्तव में उस साजिश को रचने के लिए इस्लामिक कट्टरपंथियों के द्वारा कुण्डलिनी-सिद्धांत का ही सहारा लिया गया, हालांकि दुनिया के सामने ये कुण्डलिनी को सिरे से नकारते हैं।

कुण्डलिनी एक शक्ति है, जो कुछ धार्मिक परंपरागत मामलों में अच्छे कामों की तरह ही बुरे काम भी करवा सकती है

हमें इस भ्रम में कभी नहीं रहना चाहिए कि कुण्डलिनी आदमी से बलपूर्वक अच्छे काम करवाती रहती है। यह सत्य है कि कुछ सीमा तक कुण्डलिनी आदमी को अच्छे काम करने के लिए प्रेरित करती है। परन्तु अंतिम निर्णय लेने की स्वतंत्रता आदमी के अपने पास ही होती है। आदमी कुण्डलिनी के इशारे को बलपूर्वक नजरअंदाज करके कुण्डलिनी शक्ति से बुरे काम को भी अंजाम दे सकता है। यद्यपि उससे उसे बहुत बड़े पाप का भागी बनना पड़ता है। कुण्डलिनी का ऐसा ही दुरुपयोग कुछ काले तांत्रिक करते हैं। तभी तो कहा है कि कुण्डलिनी तंत्र यदि स्वर्ग दे सकता है, तो नरक भी दे सकता है। परन्तु डरने की बात नहीं। ऐसा अक्सर तभी होता है, जब लम्बी परंपरा के वशीभूत होकर कुण्डलिनी के इशारे को लम्बे समय तक दबाया जाता है। ऐसी ही एक विकृत परम्परा धार्मिक कट्टरपंथियों व उग्रपंथियों की है, जो धर्म के नाम पर अमानवीय काम करते हैं। वैसे कुण्डलिनी आदमी को सुधरने के अवसर लागातार देती रहती है। जब-२ आदमी गलत काम करने वाला होता है, तब-२ यह एक सच्चे गुरु की तरह आदमी के सामने आने लगती है, और उसे समझाने जैसे लगती है। अच्छे काम करने पर यह शाबाशी भी देती है।

कुण्डलिनी को आसानी से सबके लिए उपलब्ध करवाने के लिए ही नियमबद्ध परंपरा या धर्म का निर्माण होता है

परंपरा या धर्म की रचना भी कुण्डलिनी सिद्धांत से ही प्रेरित थी। आम आदमी कुण्डलिनी को नहीं समझ सकता था। इसलिए धर्म या परम्परा के नाम से आदमी को बाँधने वाला मानसिक खूंटा बनाया गया। उसमें आदमी के हरेक काम व व्यवहार के नियम बनाए गए, जिनसे आदमी का मन हर समय उस धर्म विशेष से बंधा रहता। उससे आदमी नशे के जैसी मस्ती व आनंद में डूबा रहने लगा। अवसादरोधी (एंटीडिप्रेसेंट) दवाओं (ड्रग्स) को खाने से भी वैसा ही कुण्डलिनी जैसा नशा महसूस होता है। तभी तो साम्यवादी लोग धर्म को एक प्रकार का नशा मानते हुए उसका विरोध करते हैं। हालांकि नशे से उत्पन्न अद्वैत और कुण्डलिनी से उत्पन्न अद्वैत के बीच में गुणवत्ता का बहुत फर्क होता है।

इतिहास गवाह है कि धर्म के नशे से कई सभ्यताएं रक्तरंजित हुईं

धर्म के नशे के कारण आदमी अंधा जैसा हो गया। वह धर्म पर इतना विश्वास करने लगा कि उसे उसमें बताई गई गलत बातें भी सही लगने लगीं। इसी धर्म के नशे की कड़वाहट में छुपाकर कई स्वार्थी व अमानवीय तत्त्वों ने इतना ज्यादा नफरत का जहर घोला, जिससे कई संस्कृतियाँ व सभ्यताएं रक्तरंजित हुईं।

कुण्डलिनी ही दंगों के लिए जिम्मेदार है, और कुण्डलिनी ही दंगों से सुरक्षा के लिए भी जिम्मेदार है; एनआरसी के विरोध में दिल्ली दंगों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

पिछली पोस्ट में हमने पढ़ा कि किस प्रकार से दिल्ली दंगों की तैयारी बेहतरीन बारीकी, तालमेल और गोपनीयता से लम्बे समय से चल रही थी। हिंसक अभियान को अंजाम देने वाली ऐसी उम्दा कार्यशैली तो हमारे अपने शरीर में ही दिखाई देती है, अन्यत्र कहीं नहीं। क्योंकि हमारा पूरा शरीर कुण्डलिनी शक्ति (अद्वैत शक्ति) के द्वारा चलायमान है, इससे सिद्ध होता है कि दिल्ली की जेहादी मानसिकता वाली घटना के पीछे भी कुण्डलिनी शक्ति का ही मुख्य योगदान था।

कुण्डलिनी से ही पिंड (माईक्रोकोस्म) और ब्रह्माण्ड (मैक्रोकोस्म) की सत्ता है

शरीरविज्ञान दर्शन में शरीर के सूक्ष्म समाज और मनुष्य के स्थूल समाज के बीच में पूर्ण समानता सिद्ध की गई है। जब-२ मैं उस दर्शन के बारे में विचार करते हुए काम करता था, तब-२ मेरे मन में कुण्डलिनी (अद्वैत शक्ति) छा जाया करती थी। इस दर्शन के 15 साल के अभ्यास से मेरी कुण्डलिनी एकबार क्षणिक रूप से जागृत भी हुई थी। इससे सिद्ध होता है कि शरीर अद्वैत तत्त्व या कुण्डलिनी से चलायमान है, क्योंकि जहाँ अद्वैत तत्त्व है, वहां पर कुण्डलिनी भी विद्यमान है। क्योंकि हमारा शरीर सृष्टि की हूबहू नक़ल है, इसलिए सृष्टि के मामले में भी कुण्डलिनी ही पूरी तरह से जिम्मेदार है।

हमारे अपने शरीर की सुरक्षा प्रणाली बड़ी जटिलता और सटीकता प्रदर्शित करती है

हमारे शरीर की सुरक्षा प्रणाली में भी सूक्ष्म सैनिक (श्वेत रक्त कण), सूक्ष्म अधिकारी (होरमोन आदि), सूक्ष्म सैन्य वाहन (ब्लड फ्लो से मोबिलिटी), सूक्ष्म हथियार (टोक्सिन आदि), सूक्ष्म गुप्तचर (विभिन्न सन्देश प्रणालियाँ) व अन्य सभी कुछ सूक्ष्म रूप में होता है। चालाकी से भरी हुई सूक्ष्म योजनाएं (जैव रासायनिक अभिक्रियाएँ आदि) बनती हैं। शरीर पर हमला करने वाले सूक्ष्म उग्रपंथियों (कीटाणुओं) को मारने के लिए अनेक प्रकार के हथकंडे अपनाए जाते हैं। यदि दिल्ली के सुरक्षाबलों के पास भी ऐसी ही कार्यशैली होती, तो उग्रपंथी दंगे न कर पाते। यदि वे भी देह-देश की तरह ही कुण्डलिनी की सहायता लेते, तो अवश्य सहायता मिलती।

शरीर पर हमला करने वाले कीटाणु (जैसे कि कोरोना वायरस) भी कुण्डलिनी की मदद से ही कई बार शरीर की सुरक्षा व्यवस्था को धूल चटा देते हैं

कीटाणुओं (उग्रपंथियों, उदाहरण के लिए कोरोना वायरस) की कार्यप्रणाली भी बड़ी जटिल व चतुराई से भरी होती है। वे शरीर को तबाह करने का प्रयास पूरी तत्परता व धर्म-निष्ठा से करते हैं। वैसा वे कुण्डलिनी की सहायता लेकर करते हैं। फर्क सिर्फ यह है कि वे अमानवीय काम को अंजाम देने के लिए कुण्डलिनी की मदद लेते हैं, जबकि श्वेत रक्त कण (सुरक्षक सैनिक) मानवता को बचाने के लिए।

हर बार शरीर-समाज के सैनिक अपने समाज पर हमला करने वाले उग्रपंथियों को मुंहतोड़ जवाब देकर उन्हें तबाह करते हैं। विरले मामलों में वे उग्रपंथी शरीर-समाज पर भारी पड़ जाते हैं, जिससे शरीर रोगी बन जाता है। वैसी हालत में भी शरीर उनका डट कर मुकाबला करता है। वैसे मामलों में भी बहुत विरले मामलों में ही सूक्ष्म उग्रपंथी शरीर को तबाह कर पाते हैं।

परन्तु हमारे अपने स्थूल समाज में इससे उलट हो रहा है। धार्मिक उग्रपंथी धर्म के नाम से कुण्डलिनी की मदद लेते हुए हर बार जान-माल का बहुत नुक्सान कर जाते हैं। विरले मामलों में ही सुरक्षाबल उनकी योजनाओं को विफल कर पाते हैं। इसका मतलब है कि हमारे सुरक्षाबलों को सशक्त होने की जरूरत है, जिसके लिए कुण्डलिनी की भरपूर सहायता प्राप्त की जानी चाहिए।

अनगिनत संख्या में युद्ध, इस शरीर-देश के अंदर और बाहर चल रहे हैं, हर पल। घृणा से भरे कई दुश्मन, लंबे समय तक सीमा दीवारों के बाहर जमे रहते हैं, और शरीर-मंडल/देश पर आक्रमण करने के सही अवसर की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं। जब किसी भी कारण से इस जीवित मंडल की सीमा-बाड़ क्षतिग्रस्त हो जाती है, तो वे दुश्मन सीमा पार कर जाते हैं। वहां पर वे रक्षा विभाग की पहली पंक्ति के द्वारा हतोत्साहित कर दिए जाते हैं, जब तक कि रक्षा-विभाग की

दूसरी पंक्ति के सैनिक उन दुश्मनों के खिलाफ कड़ी नफरत और क्रोध दिखाते हुए, वहां पहुँच नहीं जाते। फिर महान युद्ध शुरू होता है। अधिकांश मामलों ....

हमारा अपना शरीर एक अद्वैतशाली ब्रम्हांड-पुरुष

यह पोस्ट "शरीरविज्ञान दर्शन" पुस्तक से साभार ली गई है।

शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)

कुण्डलिनी के विकास के लिए कोरोना (कोविड-19) से सहायता प्राप्त करना; नई दिल्ली की निजामुद्दीन-मस्जिद में तबलीगी जमात के मरकज की घटना; एक आध्यात्मिक-मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

हम किसी भी धर्म का समर्थन या विरोध नहीं करते हैं। हम केवल धर्म के वैज्ञानिक और मानवीय अध्ययन को बढ़ावा देते हैं।

इस पोस्ट में दी गई समाचारीय सूचना को सबसे अधिक विश्वसनीय माने जाने वाले सूत्रों से लिया गया है। इसमें लेखक या वैबसाईट का अपना कोई योगदान नहीं है।

दोस्तों, अभी दुनियाभर में लौक डाऊन का सख्ती से पालन किया जा रहा है, ताकि कोरोना महामारी से बचा जा सके। भारत में भी पूरे देश में 14 अप्रैल तक संपूर्ण लौकडाऊन है। यह लौकडाऊन 21 दिनों का है। सभी लोग अपने घरों में कैद हैं। स्वास्थ्य विशेषज्ञ कह रहे हैं कि उससे कुछ दिनों के लिए तो महामारी कम हो जाएगी, पर लगभग 45 दिनों के लगातार लौकडाऊन से ही महामारी से पूरी तरह से बचा जा सकता है।

ऐसी लौकडाऊन की स्थिति में इस्लाम को मानने वाली कट्टरपंथी तबलीगी जमात के लोग कोरोना वायरस से दोस्ती निभा रहे हैं। नई दिल्ली में अनेक कोरोना संक्रमित देशों के लोग अभी हाल ही में इकट्ठे हुए, जब नई दिल्ली में कर्फ्यू लगा हुआ था। ये लोग टूरिस्ट वीजा पर भारत आए हुए थे, पर यहाँ पर वे धर्म-प्रचार कर रहे थे, जो कि अवैध है। इन्होंने पुलिस की चेतावनी को भी नहीं माना। अनेकों बार पुलिस भी इनसे डरती है, क्योंकि ये सामने तो खुली हिंसा पर उतारू हो जाते हैं, पर पीठ के पीछे प्रताड़ित होने का ढोंग करते हैं। अधिकाँश देशी-विदेशी मीडिया भी इन्हें प्रताड़ित की तरह प्रस्तुत करते हैं। सूक्ष्म परजीवियों (कोरोना वायरस) की भी शरीर के अन्दर ऐसी ही स्ट्रेटेजी होती है। मीडिया टेप के सामने आने से यह खुलासा हुआ है कि निजामुद्दीन की उस तबलीगी मस्जिद में उसके अध्यक्ष मौलाना साद लोगों को भड़का रहा है। वह सभी को कह रहा है कि मुसलामानों को आपस में नजदीकी बनाए रखना चाहिए, और एक थाली में खाना खाना नहीं छोड़ना चाहिए। और कहता है कि कोरोना वायरस का प्रोपेगेंडा मुसलमानों को अलग-थलग करने के लिए फैलाया गया है। अल्लाह ने अगर कोरोना से मौत लिखी है, तो कोई नहीं बचा सकता। मस्जिद में मरने से अच्छा क्या काम हो सकता है। अल्लाह को मानने वाले डाक्टर से ही अपना इलाज करवाएं। फिर वे लोग उस मस्जिद से निकलकर पूरे देश में फैल गए। उनमें से बहुत से लोग कोरोना से संक्रमित पाए गए। कुछ मर गए। बहुत से लोग अभी भी मस्जिद आदि में छुपे हुए हैं, जो पकड़ में नहीं आ रहे हैं। यहाँ तक कि जब कुछ लोगों को क्वारनटाइन में रखने का प्रयास किया गया, तो वे हरेक हिदायत को ठुकराने लगे, दुर्व्यवहार करने लगे, पत्थरबाजी करने लगे (कुछ तो फायरिंग करते हुए भी सुने गए), और कर्मचारियों पर थूकने लगे, ताकि कोरोना वायरस हर जगह फैल सके। इस घटना के बाद पूरे देश में कोरोना मरीजों की संख्या एकदम से बढ़ी है, जिसने लौकडाऊन की सफलता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है।

कुण्डलिनी जीवन और मृत्यु के संगम में निहित है

धार्मिक शास्त्रों में मृत्यु से संबंधित युद्ध, दुर्भिक्ष आदि आपदाओं की बहुत सी कहानियां आती हैं। साथ में, उन्हीं शास्त्रों में ही जीवन से भरपूर कथा-रस भी बहुतायत में है। इससे जीवन और मृत्यु के संगम की अनुभूति होती है। उसी संगम को अद्वैत कहते हैं। उसी अद्वैत के साथ कुण्डलिनी भी विद्यमान होती है। यह धार्मिकता कथा-कहानियों तक ही सीमित रहनी चाहिए। जब उन्हें असली जीवन में हूबहू उतारने का प्रयास किया जाता है, तब उसे अतिवादी या कट्टर धार्मिकता कहा जाता है।

कुण्डलिनी की प्राप्ति के लिए अति लालसा से प्रेरित होकर ही अमानवीय काम होते हैं

इसी वजह से ही कई बार कुण्डलिनी योगी नीरस, उबाऊ, कट्टर, अमानवीय, व उग्रवादी जैसे लगते हैं। ऐसा इसलिए लगता है, क्योंकि उनमें मृत्यु का भय नहीं होता। अपनी कुण्डलिनी के प्रभाव से वे जीवन-मृत्यु में, यश-अपयश में, व सुख-दुःख में समान होते हैं। उनके मन में यह समता कुण्डलिनी योग साधना से छाई होती है। परन्तु धार्मिक कट्टरवादी इस समता/अद्वैत को अमानवीय कामों से पैदा करते हैं। वे गलत काम करते हैं, ताकि उनके मन से मृत्यु, अपयश व दुःख का भय ख़त्म हो ज्जाए। इससे वे भी जीवन-मृत्यु में, यश-अपयश में, व सुख-दुःख में समान रहने लगते हैं। इस अद्वैत से उनके मन में कुण्डलिनी अप्रत्यक्ष तरीके से आकर बस जाती है।

मतलब साफ है कि कुण्डलिनी योगी कुण्डलिनी की मदद से अद्वैत को प्राप्त करता है, परन्तु धार्मिक कट्टरवादी आमानवीय कामों से अद्वैत को प्राप्त करता है। किसी कारणवश धार्मिक कट्टरवादी कुण्डलिनीयोग नहीं कर पाते हैं।

उनके पास मध्य मार्ग के अनुसार संतुलित व तांत्रिक जीवन जीने का अवसर होता है, पर वे उस पर विशवास नहीं करते, और उसे बहुत धीमा तरीका भी मानते हैं। आध्यात्मिक मुक्ति के प्रति इसी अति लालसा से प्रेरित होकर वे अमानवतावादी बन जाते हैं। उनमें से बहुत कम लोग ही सफल हो पाते हैं, बाकि सारे तो नरक की आग में गिर जाते हैं। तभी तो कई धर्मों में पुनर्जन्म को माना गया है, ताकि आदमी निरुत्साहित होकर अमानवीय न बन जाए, और वह यह समझ सके कि उसकी साधना की कमी उसके अगले जन्म में पूरी हो जाएगी।

कुण्डलिनी से प्रेमी की मृत आत्मा का ईश्वर अर्थात मुक्ति की ओर दिशा निर्देशन; कुंडलिनी योग द्वारा ड्रीम विजिटेशन में सहायता प्राप्त होना

कोरोना महामारी(कोविड-19) के कारण बहुत सी आत्माएं अपने-2 शरीरों से विदा ले रही हैं। सभी आत्माएं अपने सूक्ष्म शरीर के अनुसार नया जन्म लेंगीं।कुछ आत्माएं मुक्त भी हो जाएंगीं। मुझे लगता है कि यह अपनी सोच के अनुसार होता है। मरने के बाद सूक्ष्म शरीर खुद ही धीरे-2 साफ होता रहता है। कुछ आत्माओं का शुरुआती अंधेरे में दम घुटने लगता है, और वे लंबा वेट नहीं कर सकतीं। इसलिए वे शरीर ग्रहण कर लेती हैं। मृत्यु के बाद की उस डरावनी स्थिति को"तिब्बतन बुक ऑफ डैडस" में बारडो कहा गया है। बारडो की स्थिति में बड़े डरावने अनुभव होते हैं। उनसे डरना नहीं चाहिए, तथा यह मान कर चलना चाहिए कि वे असली नहीं हैं, बल्कि सब मन में हो रहे हैं। कुण्डलिनी योग की अद्वैत शक्ति से उस बारडो अवस्था को पार करने में बहुत मदद मिलती है।

ड्रीम विजिटेशन साधारण स्वप्नों से अलग होते हैं

भावनाप्रधान लोगों का अपने प्रियजनों से गहरा दिल का रिश्ता बना होता है। वे मृत्यु के बाद भी प्रेमी जनों से मेलजोल बनाए रखना चाहते हैं। इसलिए वे प्रेमीजनों के सपनों में अक्सर प्रकट होते रहते हैं। इसे ड्रीम विजिटेशन कहते हैं। कई बार वे सहायता मांगने आते हैं, और कई बार सहायता प्रदान करने। उन प्रेमीजनों में अधिकांशतः परिवार के लोग या रिश्तेदार होते हैं। ज्यादातर मामलों में शरीर विहीन आत्मा अपने एक ही परम प्रिय और परम विश्वसनीय आदमी को चुनती है। इसीलिए वह एक ही आदमी के सपने में बार-2 आती रहती है। ऐसा कुण्डलिनी सिद्धांत के अनुसार ही होता है।

मृत आत्मा का साक्षात्कार साधारण स्वप्न से अलग होता है

इसमें ऐसा लगता है कि सचमुच के जीवित आदमी से मुलाकात हो रही है। यहाँ तक कि वह जीवित आदमी से भी ज्यादा वास्तविक लगती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जिस कोड रूप में उस आत्मा के पिछले और आगे होने वाले जन्मों और शरीरों का ब्यौरा छुपा होता है, उस मूलभूत कोड (सूक्ष्म शरीर) से साक्षात्कार हो रहा होता है। ड्रीम विजिटेशन के समय डरना नहीं चाहिए। आगे के लिए भी मन पक्का कर लेना चाहिए, क्योंकि वह आत्मा बार-2 सपने में आती है।धीरे-2 आदत पड़ जाती है।अभ्यास होने पर तो आत्मा के साथ लंबे समय तक बातें की जा सकती हैं, नहीं तो वह शीघ्र ही ओझल हो जाती है। कुण्डलिनी योग साधना की अद्वैत शक्ति से उस डर पर विजय पाने में मदद मिलती है।

आत्माओं को नया शरीर अपने सूक्ष्म शरीर के अंधेरे के अनुसार छोटा या बड़ा मिलता है

जो आत्माएं बारडो के अंधेरे के छंटने का जितना लंबा वेट करती हैं, उन्हें उतना ही अच्छा शरीर मिलता है। कई आत्माएं बहुत साफ हो जाती हैं, इसलिए वे देवता बन जाती हैं। बहुत कम सहनशील व खुशनसीब आत्माएं जो पूरी तरह से अपनी सफाई का वेट कर लेती हैं, केवल वे ही मुक्त होकर ईश्वर में मिल जाती हैं। इसलिए परिस्थिति व विश्वास के अनुसार यह गैर हिंदू मत भी सत्य है कि आदमी का पुनर्जन्म नहीं होता, और यह हिंदु मत भी सत्य है कि मृत्यु के बाद आदमी का पुनर्जन्म होता है। हालांकि मुक्त होने के लिए अच्छे कर्मों का होना भी जरूरी होता है। यदि ऐसा न होता तब तो महाप्रलय काल में सभी आत्माएं अपने आप मुक्त हो जातीं। उस काल में तो करोड़ों वर्षों तक शरीर नहीं मिलता। वेद कहते हैं कि उस काल में भी आत्मा आप अपने आप मुक्त नहीं होती। दूसरी बात वेदों में यह भी कही गई है कि मृत्यु के समय ईश्वर का स्मरण होने से मुक्ति मिल जाती है। पर यह भी सत्य है कि जीवन भर शुभ कर्म करने से ही मृत्यु के समय ईश्वर का स्मरण हो पाता है। इसका मतलब है कि शुभ कर्मों की कतई अनदेखी नहीं करनी चाहिए।

अगली पोस्ट में मैं अपने ड्रीम विजिटेशन के उन निजी अनुभवों के बारे में बताऊंगा जिनसे मैंने उपरोक्त तथ्य निकाले हैं।

कुण्डलिनी भी आत्महत्या के लिए प्रेरित कर सकती है?

अभी कुछ दिन पहले बौलीवुड के **मशहूर सितारे सुशांत सिंह राजपूत की आत्महत्या का मामला** सामने आया। सबसे पहले हम उनकी आत्मा की शान्ति की कामना करते हैं। वह बुलंदियों पर था। बुलंदियां कुण्डलिनी से हासिल होती हैं। तो क्या कुण्डलिनी भी आत्महत्या की वजह बन सकती है? इस पोस्ट में हम इसका विश्लेषण करेंगे।

अवसाद एक छुआछूत वाले रोग की तरह है, जिसे कुंडलिनी योग की सहायता से दूर भगाया जा सकता है: एक अदभुत आध्यात्मिक मनोविज्ञान

एक ब्लयू व्हेल नाम की वीडियोगेम आई थी, जिसे खेलते हुए बहुत से बच्चों ने आत्महत्या की थी। सुशान्त ने एक आत्महत्यारे की पेंटिंग अपनी सोशल मीडिया वाल पर कई दिनों से लगाई हुई थी। उनकी छिछोरे फिल्म में वह अपने बेटे को इस रोग से बचने के लिए पूरी फिल्म में समझाते रहे। इसी तरह, एक खबर के अनुसार एक बिहार राज्य का लड़का देर रात तक अकेले में सुशांत की खुदकुशी की खबरें देखता रहा और सुबह को वह भी लटका हुआ मिला। यह सब मन का खेल है। ऐसे आत्महत्या से संबंधित चिंतन से विशुद्धि चक्र पर एक कसाव सा पैदा होता है। गला दबा हुआ सा लगता है, और गले पर एक घुटन सी महसूस होती है। कुंडलिनी योगी को तो विशुद्धि चक्र पर ध्यान करने की पहले से ही आदत होती है। वह बार-2 वहां कुंडलिनी को फोकस करता है। उससे गले को जीवनी शक्ति मिलती है, और कुंडलिनी भी मजबूत होती है। गले की घुटन में गेस्ट्राइटिस का भी रोल हो सकता है। तनावपूर्ण और अनहेल्थी जीवनशैली से गेस्ट्राइटिस होती है। आजकल इसके इलाज के लिए सुरक्षित दवाई मौजूद है। ऐसी दवाइयां योग अभ्यास करने वाले लोगों को नुकसान पहुंचा सकती हैं। इसलिए इनका आधा डोज खाकर उनका अपने ऊपर असर परख लेना चाहिए। अवसाद-रोधी दवाएं तो बहुत से लोगों का अवसाद बढ़ा भी सकती हैं, क्योंकि उनसे आदमी की स्मरणशक्ति व कार्यक्षमता काफी घट जाती है। वे दवाईयां लम्बे समय से बनी हुई कुण्डलिनी को नुकसान पहुंचाती हैं, जिससे उससे जुड़े सभी काम दुष्प्रभावित हो सकते हैं। अगर किस्मत अच्छी हो, और परिश्रम किया जाए, तो उससे नए कुण्डलिनी-चित्र के निर्माण का और उसे जागृत करने का सुअवसर भी प्राप्त होता है। नई कुंडलिनी से एडजस्ट होने में समय लगता है। सूत्रों के अनुसार, सुशांत भी लम्बे अरसे से अवसाद रोधी दवाएं खा रहे थे, हालांकि कुछ समय से उन्होंने उन्हें खाना छोड़ा हुआ था। जितना हो सके मौन रहना चाहिए और जीभ को तालु के साथ टाईटली जोड़कर रखना चाहिए ताकि मस्तिष्क की कुंडलिनी या विचार आसानी से नीचे बह सके। जिसने आत्महत्या की भावनाओं के बीच में रहते हुए भी उसे दबा दिया, वह असली योगी है।

सुशांत सिंह राजपूत कई बार अपनी स्वर्गवासिनी माँ की याद में खोकर भावुक हो जाते थे

वह अपनी माँ से सर्वाधिक प्रेम करते थे। यह बहुत अच्छी बात है, और बड़ों-बुजुर्गों से प्यार होना ही चाहिए। उनकी आखिरी सोशल मीडिया पोस्ट भी अपनी माँ की याद की थी। ऐसा हमें मीडिया से सुनने को मिला। सर्वाधिक प्रिय वस्तु ही मन में निरंतर बस कर कुण्डलिनी बन जाती है। इसका अर्थ है कि उनके मन में अपनी माँ की छवि कुण्डलिनी के रूप में बसी हुई हो सकती है। इसीसे उन्हें निरंतर सफलताएं मिलती गईं। वैसे तो पूर्वजों व पारिवारिक लोगों या बुजुर्गों से संबंधित शुद्ध कुंडलिनी हमेशा शांत और कल्याणकारी ही होती है। परंतु कई बार वैसी कुंडलिनी का सहारा लेकर इश्क-मोहब्बत वाली कुंडलिनी मन पर हावी हो जाती है। वह बहुत भड़कीली होती है और कई बार खतरनाक हो सकती है। सुशांत का कुछ स्टार लड़कियों से प्यार और ब्रेकअप भी सुनने में आया। कुंडलिनी को सकारात्मक व सही दिशा देने के लिए एक स्थिर दाम्पत्य जीवन बहुत जरूरी होता है। हालांकि सिने जगत में ऐसा चलता रहता है, पर सभी एक जैसे नहीं होते, और ऐसा सभी को सूट भी नहीं करता। इश्क-मुहब्बत के चक्कर में हुई आत्महत्याएं इसी कुदरती कुण्डलिनी से सम्बंधित होती हैं। डॉक्टर के अनुसार वह बाईपोलर डिसीस से पीड़ित थे। यह कुण्डलिनी-अवसाद का ही एक दूसरा रूप है। इसमें तीव्र उत्तेजना के दौर के बाद तीव्र अवसाद का दौर आता है।अगर ढंग से किया जाए, तो कुंडलिनी योग ही बाइपोलर रोग का सबसे बढ़िया इलाज है। कथित कलाकार ने थोड़े दिनों के लिए उसे इलाज के लिए किया था, फिर छोड़ दिया था।अगर ढंग से किया जाए, तो कुंडलिनी योग ही बाइपोलर रोग का सबसे बढ़िया इलाज है। कथित कलाकार ने थोड़े दिनों के लिए उसे इलाज के लिए किया था, फिर छोड़ दिया था। कुंडलिनी मन के विकारों को बाहर निकाल रही होती है। वास्तव में विकार ही अवसाद पैदा कर सकते हैं, कुंडलिनी नहीं।कुंडलिनी अवसाद से बचने के लिए हर समय काम में व्यस्त रहना चाहिए। कथित कलाकार कई दिनों से कामधाम छोड़कर कमरे में बंद हो गए थे।

किसीसे बिछुड़ने का गम भी कुंडलिनी अवसाद का ही एक प्रकार है। उस गम को खुशी में बदलने के लिए बिछुड़े हुए व्यक्ति के मानसिक चित्र को कुंडलिनी बनाकर कुंडलिनी योग साधना शुरु कर देनी चाहिए।

कुण्डलिनी से उस सिने कलाकार की आध्यात्मिक प्रगति भी तीव्रता से हो रही थी

प्रत्यक्षदर्शी कहते हैं कि वे अध्यात्मिक रुझान वाले व बेहद संवेदनशील व्यक्ति थे। उनकी कम उम्र के शरीर में एक बुजुर्ग का दिमाग था। ऐसे गुण कुण्डलिनी से ही उत्पन्न होते हैं।

कुण्डलिनी आदमी को जीवन के प्रति लापरवाह बना सकती है

कुण्डलिनी के कारण आदमी अद्वैत से भर जाता है। इसका मतलब है कि उसे रात-दिन, जीवन-मृत्यु, दोस्त-दुश्मन, सुख-दुःख आदि सभी विपरीत चीजें एकसमान जैसी लगने लगती हैं। इससे यह अर्थ निकलता है कि आदमी को किसी चीज से डर नहीं लगता। जब कोई आदमी अपनी मौत से नहीं डरेगा, तब वह अपनी जिंदगी के प्रति लापरवाह हो जाएगा। वही लापरवाही जब सीमा पार कर जाती है, तब वह आत्महत्या का रूप ले लेती है। वास्तव में तो अद्वैत से सतर्कता बढ़ती है, लापरवाही नहीं। पर कई लोग अद्वैत को गलत तरीके से ग्रहण करते हैं।

कुण्डलिनी को संभालने के लिए बाहरी सहारे की आवश्यकता होती है

उपरोक्त स्थिति में आदमी को बाहरी सहारा मिलना चाहिए। लोगों से मेल-जोल जारी रहना चाहिए। परिवार व दोस्तों के साथ खूब समय बिताना चाहिए। घूमना-फिरना चाहिए। सामाजिक समारोहों व कार्यों में शामिल होते रहना चाहिए। इससे कुण्डलिनी योगी को लोगों के मन में जीवन के प्रति लगाव नजर आएगा। लोगों के मन में अनहोनी का डर नजर आएगा। इससे उसे सही ढंग से जीवन जीने की प्रेरणा मिलेगी। आजकल के कोरोना लौकडाऊन ने बहुत सारे लोगों से यह सामाजिक सहारा छीन लिया है।

गुरु कुण्डलिनी के लिए सर्वोत्तम सहारा है

गुरु कुण्डलिनी के दौर से पहले ही गुजर चुका होता है। इसलिए उसे सब कुछ पता होता है। इसलिए वह नए-२ कुण्डलिनी योगी को अकेला ही पूरे समाज की शक्ति दे सकता है।

कुण्डलिनी अवसाद ही समुद्रमंथन से निकला हुआ विष है

समुद्रमंथन का वर्णन हिन्दू पुराणों में मिलता है। मंदराचल पर्वत कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी-ध्यान वासुकी नाग है। मन समुद्र है। उससे निकली हुई अच्छी चीजें अच्छे विचार हैं, जो आदमी को देवता बनाते हैं। उससे निकली हुई गन्दी चीजें गंदे विचार हैं, जो आदमी को राक्षस बनाते हैं। मन के देवताओं और राक्षसों के परिश्रम व सहयोग से मंथन चलता रहता है। अंत के करीब जो विष निकलता है, वह कुण्डलिनी से पैदा हुआ अवसाद है। उसे पीने वाले शिव गुरु हैं। वे उसे गले में धारण करते हैं। इसका मतलब है कि वे शिष्य का अवसाद हर लेते हैं, पर स्वयं उससे प्रभावित नहीं होते। उसके बाद जो अमृत निकलता है, वह कुण्डलिनी से मिलने वाला आनंद है। समुद्र मंथन से जो लक्ष्मी मिलती है, उसका अर्थ तांत्रिक प्रतीत होता है। वह भगवान् नारायण तक ले जाती है।

कुण्डलिनी योग से सम्बंधित मेरा अपना अनुभव

जो मैंने इस पोस्ट में लिखा, वह मेरा अपना ही कुण्डलिनी अवसाद का, और उससे बाहर निकलने का अनुभव है। खुशकिस्मती से मुझे एक पड़ौसी सज्जन का सहारा मिल गया था, जिनके घर मैं बिना पूछे और खुलकर आ-जा सकता था, तथा जिनके साथ जितना चाहे समय बिता सकता था। दूसरे अधिकाँश लोग तो मुझे मंगल ग्रह से आए हुए प्राणी की तरह ट्रीट करते थे। अच्छा जोक कर दिया।

कुण्डलिनी मेडिटेशन की अवस्था ज्ञान की चरम अवस्था होती है, अवसाद तो वह दूसरे लोगों को लगती है

कुण्डलिनी अवसाद सापेक्ष होता है। स्वयं कुण्डलिनी योगी को वह ज्ञान की शीर्ष अवस्था लगती है। कुण्डलिनी के अन्य जानकारों को भी यह ऐसी ही लगती है। कुण्डलिनी से अनजान लोगों को ही वह अवसाद लगती है। इसलिए वैसे लोग कुण्डलिनी योगी की आलोचना करते रहते हैं, और उसे अवसाद से भर देते हैं। लोग तो उसके भले के लिए उसकी आलोचना करते हैं ताकि वह कुंडलिनी के बिना जीना सीख सके, पर वह इस बात को अक्सर समझ नहीं पाता। अवसाद उसे कुंडलिनी को मन से हटाने से होता है, क्योंकि उसे कुंडलिनी के नशे की लत लग जाती है। कुंडलिनी प्रकाश के सामने तो अवसाद का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। इसीलिए या तो कुंडलिनी को किसी हालत में नहीं छोड़ना चाहिए या फिर कुंडलिनी से आसक्ति नहीं होनी चाहिए और उसके बिना जीने की आदत भी बनी रहनी चाहिए। नहीं तो वैसा ही अवसाद पैदा होने की संभावना है, जैसा नशेड़ी में एकदम से नशा छोड़कर पैदा होता है।

जितनी ज्यादा रौशनी होगी, जब वह बुझेगी तब उतना ही ज्यादा अंधेरा भी होगा। कुंडलिनी शरीर औऱ मन की शक्ति को खींचती है। उससे पैदा हुई कमजोरी ही अवसाद की वजह बन सकती है। इसीलिए तंत्र में उस कमजोरी से बचने के लिए पंचमकारों के सेवन का प्रावधान है।इसीलिए अच्छी संगति को अपनाने पर जोर दिया गया है। अच्छा हो, यदि औरों के रास्ते में फूल न बो सको, तो कांटे भी नहीं बोने चाहिए। इससे फूल खुद उग आएँगे। महात्मा बुद्ध ने भी ऐसा ही कहा है।

यह ध्यान रखना चाहिए कि कुंडलिनी अवसाद प्राकृतिक तौर से उभरी कुंडलिनी से ज्यादा होता है। यद्यपि प्राकृतिक कुंडलिनी बहुत तेजी से आध्यात्मिक विकास करती है। इसलिए प्राकृतिक कुंडलिनी के इस खतरे से बचे रहने के लिए कृत्रिम कुंडलिनी योग करते रहना चाहिए।

एक पुस्तक जिससे मुझे कुण्डलिनी अवसाद से पूरी तरह से बाहर आने में मदद मिली

वह पुस्तक है “शरीरविज्ञान दर्शन”।

कुंडलिनी जागरण के लिए भावनात्मक सदमे की आवश्यकता

दोस्तों, मान्यता है कि भावनात्मक सदमे से भी कुंडलिनी जागरण होता है। यदि पहले से ही कुंडलिनी योग किया जा रहा हो, तब तो वह ज्यादा प्रभावी हो जाता है। आज मैं इसी से संबंधित अपना ताजा अनुभव बताऊंगा।

27 साल बाद व्हाट्सएप पर मुलाकात

सीनियर सेकंडरी स्कूल एजुकेशन के बाद कई सहपाठियों से पहली बार मुलाकात 27 साल बाद व्हाट्सएप पर हुई। अच्छा लग रहा था। पुरानी भावनाओं पर हरियाली छा रही थी। उसी क्लास के दौरान मेरी कुंडलिनी सबसे तेजी से विकसित हुई थी। कुंडलिनी का दूसरा नाम प्रेम भी है। सीधी सी बात है कि ग्रुप के सभी सदस्यों के साथ मेरा अच्छा प्रेमपूर्ण संबंध था। ग्रुप मैंने शुरु किया था, हालांकि सदस्यों को जोड़ने का अधिकांश काम एक अनुभवी सदस्या ने किया था। कुछ दिन ग्रुप अच्छा चला। कुंडलिनी का मनोविज्ञान समझने के लिए मैं एक भावनात्मक सदस्या के बारे में विस्तार से जानना चाहता था। लेखन का और कुंडलिनी रिसर्च का मुझे पहले से ही शौक है। सदस्या ने मेरा मेसेज पढ़ा और ट्यूशन आदि के लिए आए बच्चों की पढ़ाई खत्म होने के बाद बात करने का भरोसा उदासीन भाव के साथ दिया। यद्यपि वह पढ़ाई आज तक खत्म नहीं हो सकी। मैंने मान लिया कि पारिवारिक या अन्य मनोवैज्ञानिक कारणों से उसने ठीक ही किया होगा। क्योंकि विश्वास ही कुंडलिनी की पहचान है। पर मुझे उससे भावनात्मक सदमा लगा। वैसा भावनात्मक सदमा मुझे 2-3 बार पहले भी लग चुका था। वास्तव में ऐसा धोखा तब होता है, जब हम मन के संसार को असली मानने लगते हैं। पर वास्तव में दोनों में बहुत अंतर हो सकता है। मन में जो आपका सबसे बड़ा मित्र है, वह असल जीवन में आपका सबसे बड़ा शत्रु हो सकता है। इससे साफ जाहिर है कि प्रेम ही सबसे बड़ा मित्र है, और प्रेम ही सबसे बड़ा शत्रु भी है। एक पालतु पशु अपने मालिक से बहुत ज्यादा प्रेम करता है, और उससे दूर नहीं होना चाहता, पर वही मालिक उसे कसाई के हाथों सौंप देता है। तभी तो कहते हैं कि प्यार या विश्वास अंधा भी होता है।

मानसिक आघात के बाहरी लक्षणों का पैदा होना

उस आघात से मैं बहुत सेंसिटिव व इमोशनल हो गया था। मैं ग्रुप में कुछ न कुछ लिखे जा रहा था। अन्य सदस्यों की छोटी-2 बातें मुझे चुभ रही थीं। इस वजह से मैंने दो सदस्यों को ग्रुप से निकाल दिया। उससे नाराज होकर एडमिन सदस्या भी निकल गई। हालाँकि मैंने उन्हें उसी समय दुबारा ग्रुप में शामिल कर दिया और कहा कि वे चाहें तो निकाले गए सदस्यों को दुबारा दाखिल कर दें। मैं इमोशनल तो था ही , उससे मुझे उसके बाहर निकलने में भी पार्शियलिटी की बू आई, जिससे मेरा मन और डिस्टर्ब हो गया। उसके बाद उपरोक्त ट्यूशन मैडम जी भी बिना वजह बताए ग्रुप छोड़कर चली गईं। एक-एक करके लोग ग्रुप से बाहर जाने लगे। मैं ग्रुप से बाहर होने के उनके दुख को महसूस करने लगा। वही वजह बता कर मैंने भी भावनात्मक आवेश में आकर ग्रुप से किनारा कर लिया। हालांकि ऐसा चलता रहता है सोशल मीडिया में, पर यहाँ पर कुंडलिनी से जुड़ी संवेदनशीलता की बात हो रही है। उस शाम को मैं काफी रोया। रात को मुझे अपने सिरहाने के के नीचे रुमाल रखना पड़ा। दरअसल वो आँसू खुशी के थे, जो लंबे अरसे बाद दोस्तों से मिलकर आ रहे थे। मेरे पूरे शरीर और मन में थकान छा गई। मेरी पाचन प्रणाली गड़बड़ा गई।

भावनात्मक सदमे के दौरान कुंडलिनी सर्ज

उसी भावनात्मक आघात वाली शाम को मेरी एनर्जी बार-2 मेरी पीठ से चढ़कर शरीर के आगे के भाग से नीचे उतर रही थी, एक बंद लूप में। कभी-कभी उस एनर्जी के साथ कुंडलिनी भी जुड़ जाती थी। रात को नींद में अचानक बहुत सारी एनर्जी मेरी पीठ में ऊपर चढ़ी। उसके साथ में ऐसा स्वप्न आया कि मैं बहुत बड़े और सुंदर मंदिर के द्वार से अंदर प्रविष्ट हो रहा हूँ। वह एनर्जी मेरे मस्तिष्क में समा रही थी। विशेष बात यह थी कि उस एनर्जी से मेरे मस्तिष्क में बिल्कुल भी दबाव पैदा नहीं हो रहा था, जैसा अक्सर होता है। शायद कई दिनों तक भरपूर नींद लेने से मेरा मस्तिष्क तरोताजा हो गया था। दूसरी वजह यह थी कि भावनात्मक सदमे से दिमाग खाली सा हो गया था। फिर मस्तिष्क में उस एनर्जी के साथ कुंडलिनी जुड़ गई। वह कुंडलिनी जागरण जैसा अनुभव था, यद्यपि उसके स्तर तक नहीं पहुंच सका।

कुंडलिनी के बारे में वर्णन केवल इसी वैबसाइट में मिलेगा

मैंने हर जगह अध्ययन किया। हर जगह केवल एनर्जी का ही वर्णन है, कुंडलिनी का कहीं नहीं। अधिकांश जगह एनर्जी को ही कुंडलिनी माना गया है। पर दोनों में बहुत अंतर है। बिना कुंडलिनी की एनर्जी तो वैसी भारतीय मिसाइल है, जिस पर भारत का राष्ट्रीय ध्वज अंकित नहीं है। विशेष चीज, जो प्यार की निशानी है, और मानवता का असली

विकास करने वाली है, वह कुंडलिनी ही है। एनर्जी तो केवल कुंडलिनी को जीवन्तता प्रदान करने का काम करती है। इस वेबसाइट के इलावा यदि कहीं कुंडलिनी का वर्णन है, तो वह “पतंजलि योगसूत्र” पुस्तक है। उसमें कुंडलिनी को ध्यानालम्बन कहा गया है। अधिकांश लोगों के मन में कुंडलिनी व शक्ति (एनर्जी) के स्वभाव के बीच में कन्फ्यूजन बना रहता है।

एक पुस्तक जिसने मुझे हर बार भावनात्मक सदमे से बचाया और उससे बाहर निकलने में मेरी मदद की

वह पुस्तक है, “शरीरविज्ञान दर्शन”, जो इस वेबसाइट के “शॉप (लाईब्रेरी)” वेबपेज पर उपलब्ध है।

अद्वैत भाव के साथ मदिरा ही सोमरस या एलिकसिर ऑफ़ लाइफ है

उपरोक्त पुस्तक के साथ मदिरा ने मेरे रूपांतरण के साथ मेरी कुंडलिनी या आत्मा का विकास भी किया। खाली मदिरा कुंडलिनी को हानि पहुंचाती है। इस भावना के साथ थोड़ी सी मदिरा का भी बहुत ज्यादा असर होता था, और मदिरा की लत भी नहीं लगती थी। इसका अर्थ है कि पुराने समय में जो सोमरस या एलिकसिर ऑफ़ लाइफ बताया गया है, वह अद्वैत भावना वाले विधिविधान के साथ व उचित मात्रा में सेवन की गई उच्च कोटि की मदिरा ही है, कोई अन्य जादुई द्रव नहीं। देवता भी इसका पान करते हैं।

प्रेम या सम्मान, दोनों में से एक से संतुष्ट हो जाते।

अन्यथा अपनी भावनाओं के भंडार की राह को प्रकाशित कर देते, हम स्वयं ही अन्वेषण कर लेते।।

कुंडलिनी योगसाधना से उत्पन्न शक्ति या उर्जा को स्तरोन्नत करती है

दोस्तों, मैं इस पोस्ट में कुंडलिनी से जुड़ा हुआ सबसे बड़ा रहस्य उजागर करने जा रहा हूँ। योग साधना से जिस चीज को बढ़ाया जाता है, उसको भिन्न-2 स्थानों पर भिन्न-2 नाम दिए गए हैं। कहीं इसे ऊर्जा, कहीं पर संवेदना, कहीं पर प्रकाश, और कहीं पर कुंडलिनी कहा जाता है। वास्तव में ये सभी नाम सही हैं। ये सभी नाम एक ही साधना का वर्णन ऐसे कर रहे हैं, जैसे बहुत से अंधे एक हाथी का वर्णन उसके एक-2 अंग से करते हैं।

संवेदना-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन का मेरा अपना अनुभव

मैंने पिछली पोस्ट में बताया था कि भावनात्मक सदमे से कैसे मेरी संवेदना-ऊर्जा मूलाधार से सहस्रार तक लगातार प्रवाहित हो रही थी। सहस्रार मस्तिष्क के बीचोंबीच या यूँ कहो कि चोटी बांधने वाले स्थान से तीन अंगुल आगे की तरफ एक बिंदु रूप में था। वहां पर वैसे भी दबाने पर एक संवेदनात्मक अनुभूति होती है। वह गर्दन की सतह के बीचोंबीच होती हुई एक सीधी रेखा में सहस्रार तक जा रही थी, सिर के करवेचर के साथ नहीं मुड़ रही थी। मतलब कि वह सिर की सतह के साथ लहर न खाकर उसके बीच में से घुसकर ऊपर जा रही थी। ओर वह प्रकाशमान ऊर्जा एक पुल की तरह लग रही थी, जो इन दोनों चक्रों को आपस में जोड़ रही थी। इसका अर्थ है कि मेरी सुषुम्ना नाड़ी खुल गई थी। वास्तव में यह ऊर्जा एक खारिश की अनुभूति जैसी ही साधारण सेंसेशन थी, पर बहुत घनीभूत थी। मैं पहले ऐसे ऊर्जा चैनेल पर कम ही विश्वास करता था, पर इस अनुभव से मेरा विश्वास पक्का हो गया। यह ऊर्जा प्रवाह लगभग 10 सेकेंड तक बना रहा, जिसके दौरान मुझे एक अति प्रकाशमान मंदिर का साक्षात अनुभव हुआ। जैसे कि मैं उस मंदिर से जुड़कर एकाकार हो गया था। फिर मेरी कुंडलिनी मेरे उस अनुभव क्षेत्र में आई, और मैं उससे एकाकार हो गया। यद्यपि यह पूर्ण एकाकार नहीं था। अर्थात यह खंडित या अल्प कुंडलिनी जागरण था, पूर्ण नहीं। सम्भवतः ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि मेरी सुषुम्ना पूरी तरह नहीं खुली थी, और ज्यादा समय तक खुली नहीं रही।

कुंडलिनी से एकाकार होने के अतिरिक्त लाभ

जिस समय संवेदना ऊर्जा मूलाधार से सहस्रार तक सुषुम्ना नाड़ी से प्रवाहित हो रही हो, उस समय जो मानसिक चित्र बनता है, वह उतना तीव्र व स्पष्ट होता है कि आदमी उससे जुड़कर एकाकार हो जाता है। उससे आदमी को जीवन का वह सबसे बड़ा सुख मिलता है, जो कि सम्भव है। उससे आदमी संतुष्ट हो जाता है। उससे वह जीवन के प्रति अनासक्त होकर अद्वैतशील बन जाता है। उससे उसके मन में कुंडलिनी का बसेरा हो जाता है, क्योंकि अद्वैत के साथ कुंडलिनी सदैव रहती है। यदि आदमी पहले से ही कुंडलिनी साधना कर रहा हो, तब सुषुम्ना प्रवाह के दौरान अन्य चित्रों की बजाय कुंडलिनी का चित्र बनता है, और उससे आदमी एकाकार हो जाता है। इससे कुंडलिनी को अतिरिक्त शक्ति मिल जाती है। यदि प्रारंभ से ही संवेदना के साथ कुंडलिनी को जोड़ा जाता रहे, तब दोनों एक दूसरे को बढ़ाते रहते हैं। सुषुम्ना प्रवाह के दौरान जब कुंडलिनी मेरे मन में आई, तब मुझे उसके साथ मंदिर से अधिक जुड़ाव महसूस हुआ। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि रोज के कुंडलिनी ध्यान से मैं कुंडलिनी के साथ जीने का अभ्यस्त हो गया था। इन बातों से सिद्ध होता है कि सम्पूर्ण साधना कुंडलिनी योग ही है।

यदि चक्र अवरोधित न हों, तो सुषुम्ना के ऊर्जा प्रवाह के अनुभव के बिना ही कुंडलिनी जागरण होता है, और वह जागरण संपूर्ण होता है

उपरोक्त तथ्य को सिद्ध करने के लिए मैं अपना ही उदाहरण देता हूँ। अपने आत्मज्ञान के अनुभव के दौरान मैं सपने में दिख रहे दृश्य के साथ एकाकार हुआ था, किसी विशेष कुंडलिनी चित्र के साथ नहीं। परंतु उसके बाद मेरी वह महिला मित्र कुंडलिनी के रूप में मेरे मन में दृढ़ता से संलग्न हो गई थी, जिसकी सर्वाधिक सहायता से मैं उस आत्मज्ञान के अनुभव तक पहुंचा था।

उसके कई वर्षों बाद मैं कुंडलिनी साधना करने लगा। मैंने उन्हीं वृद्ध आध्यात्मिक पुरुष को अपनी कुंडलिनी बनाया हुआ था। उस दौरान जब मेरी सुषुम्ना खुली और उसमें ऊर्जा का प्रवाह हुआ (यद्यपि मुझे वह प्रवाह अनुभव नहीं हुआ, क्योंकि मेरे सभी चक्र अनब्लॉक थे, इसी वजह से वह जागरण संपूर्ण था, यद्यपि मैंने डर कर उसे एकदम नीचे उतार दिया), तब कुंडलिनी चित्र मेरे मन में प्रकट हुआ और मैं उससे पूरी तरह से एकाकार हो गया। हालांकि बैकग्राउंड के अन्य दृष्यों से भी मैं एकाकार ही था, पर मुख्य तो कुंडलिनी ही थी। इसी तरह, आत्मज्ञान के समय भी मुझे पीठ में एनर्जी फलो का भान नहीं हुआ, इसीलिए वह जागरण भी पूर्ण शक्तिशाली लग रहा था।

विशेष प्रकार का श्वास होने पर ही सुषुम्ना नाड़ी खुलती है

कहते हैं कि जब श्वास डायफ्रागमेटिक अर्थात एब्डोमिनल, गहरी, धीमी और बिना आवाज के चले; तभी सुषुम्ना के खुलने की ज्यादा संभावना होती है। मेरे भावनात्मक सदमे के दौरान मेरी सांसें बिल्कुल ऐसी ही हो गई थीं। इसीसे मेरी सुषुम्ना नाड़ी खुली। इससे यह जनप्रचलित बात सिद्ध हो जाती है कि सांसों के नियमन से ही योग होता है।

सुषुम्ना के थ्रू एनर्जी राईज के लिए मूलाधार और सहस्रार चक्र के बीच में बहुत ज्यादा विभवांतर अर्थात पोटेंशियल डिफरेंस पैदा होना चाहिए

भावनात्मक सदमे से ये फायदा हुआ कि मेरा मस्तिष्क फुली डिस्चार्ज होकर नेगेटिव पोटेंशियल में आ गया था। मूलाधार तांत्रिक योगसाधना के कारण फुली पोसिटिव पोटेंशियल में था। इससे मूलाधार और सहस्रार के बीच में बहुत ज्यादा पोटेंशियल डिफरेंस पैदा हुआ। इससे मूलाधार और सहस्रार के बीच में सेंसेशनल इलेक्ट्रिक स्पार्क पैदा हुआ, जिसे हम एनर्जी राइज कह रहे हैं।

और हां, पूर्व पोस्ट में जिस मित्र से मुझे भावनात्मक सदमा मिला था, उससे प्यारा समझौता हो गया है। सप्रेम।

कुंडलिनी ही जादूगर का वह तोता है, जिसमें उसकी जान बसती है

दोस्तों, रशिया में एक कहावत है कि जादूगर की जान उसके तोते में बसती है। यह बात पूर्णतः सत्य न भी हो, तो भी इसका मैटाफोरक महत्त्व है। कुंडलिनी ही वह तोता है, जिससे जादूगर को शक्ति मिलती रहती है।

किसी भी चीज को कुंडलिनी बनाया जा सकता है

जादूगर एक तोते को कुंडलिनी बनाता है। तोता रंगीन व सुंदर होता है, इसलिए आसानी से ध्यानालम्बन या ध्यान-कुंडलिनी बन जाता है। तोता एक मैटाफोर भी हो सकता है। तोते का अर्थ कोई सुंदर रूप वाली चीज भी हो सकता है। जैसे कि प्रेमी, गुरु या कोई अन्य सुंदर चीज। सुंदर चीज से आसानी से प्यार हो जाता है और वह मन में बस जाती है। जादूगर योगी का मैटाफोर भी हो सकता है। जैसे योगी की शक्तियां उसकी कुंडलिनी के कारण होती हैं, वैसे ही जादूगर की शक्तियां उसके तोते के आश्रित होती हैं।

जादूगर/योगी अपने तोते/कुंडलिनी की सहायता से ही भ्रमजाल फैलाता है

जैसे योगी अपनी कुंडलिनी से अद्वैत को प्राप्त करता है, वैसे ही जादूगर अपने तोते से अद्वैत प्राप्त करता है। जादूगर जब भ्रम के जादू को फैलाता है, तब अद्वैत की शक्ति से ही वह भ्रम के जाल में नहीं फंसता। वैसा ही योगी भी करता है। आम लोग योगी की दुनियावी लीलाओं से भ्रमित होते रहते हैं, परंतु वह स्वयं भ्रम से अछूता रहता है।

तोते/कुंडलिनी के मरने से जादूगर/योगी निष्क्रिय सा हो जाता है

इसीसे भावनात्मक सदमा लगता है, जैसा कि मैंने पिछली पोस्टों में बयान किया है। वास्तव में, तोते/कुंडलिनी के साथ जादूगर/योगी का पूरा जीवनक्रम जुड़ा होता है। तोते/कुंडलिनी के नष्ट होने से उससे जुड़ी सारी घटनाएं, यादें व मनोवृत्तियां नष्ट सी हो जाती हैं। इससे वह घने अंधेरे में पूरी तरह से शांत सा हो जाता है। इसे भावनात्मक सदमा कहते हैं। इसे ही पतंजलि की असम्प्रज्ञात समाधि भी कहते हैं। इसी परिस्थिति में कुंडलिनी जागरण हो सकता है। यदि इसे कुछ लंबे समय तक धारण किया जाए, तो आत्मज्ञान भी प्राप्त हो सकता है। औसतन लगभग छः महीने के अंदर आत्मज्ञान हो सकता है। इस स्थिति को संभालने के लिए यदि योग्य गुरु का सहयोग मिले, तो भावनात्मक सुरक्षा मिलती है।

ईश्वर सबसे बड़ा जादूगर है, जो तोते/कुंडलिनी से इस दुनिया के जादू को चलाता रहता है

हिंदु समेत विभिन्न धर्मों में ईश्वर को एक जादूगर या ऐंद्रजालिक माना गया है, जो अपने जादू या इंद्रजाल को खुले आसमान में फैलाता है। उससे यह दुनिया बन जाती है। वह पूर्ण अद्वैतशील है। इससे स्वयं सिद्ध हो जाता है कि उसके साथ उसकी कुंडलिनी (तोता) भी रहती है। उसी तोते को मायाशक्ति कहा गया है।

कुण्डलिनी जागरण के लिए पंचमकारों (मदिरा, माँस, मैथुन, मत्स्य व मुद्रा) का प्रयोग

कुण्डलिनी के लिए पंचमकारों का प्रयोग एक विवादित विषय रहा है। हम न तो इसकी अनुशंसा करते हैं, और न ही इसका खंडन। हम केवल इसके आध्यात्मिक मनोवैज्ञानिक पहलू पर विचार कर रहे हैं।

पंचमकारों से अद्वैत भाव को विकसित करने का अवसर प्राप्त होता है

वैसे तो पंचमकारों से द्वैतभाव में ही वृद्धि होती है। मदिरा को ही लें। इससे आदमी अंधकार व प्रकाश में बंट जाता है। इसी तरह से, माँस से हिंसा/क्रोध व अहिंसा/शान्ति में विभक्त हो जाता है। मैथुन से वह रोमांच व अवसाद के बीच में झूलने लगता है। मुद्रा किसी विशेष आसन, चिन्ह आदि के साथ लम्बे समय तक बैठने को कहते हैं। इससे आदमी आलस या निकम्मेपन और मेहनत की स्थिति के बीच में बंट जाता है। यह निर्विवादित सत्य है कि द्वैत में ही अद्वैत पनप सकता है। समुद्र की गंभीरता उसकी लहरों के ही आश्रित है। यदि समुद्र में लहरें गगनचुंबी हिचकोले न मारा करतीं, तो कौन कहता कि आज समुद्र शांत या निश्चल है। इसलिए अद्वैत द्वैत के ही आश्रित है। यदि मूल भाव द्वैत ही नहीं होगा, तो उसको नकारने वाला "अ" अक्षर हम उसके साथ कैसे जोड़ पाएंगे। जो चीज है ही नहीं, उसे हम कैसे नकार सकते हैं। यदि द्वैत ही नहीं होता, तो हम उसे कैसे नकार पाते। इसलिए पंचमकारों से दो प्रकार के प्रभाव पैदा होते हैं। जो आदमी उनसे पैदा हुए द्वैत को पूर्णतः स्वीकार करके उसी में रम जाते हैं, वो अपनी कुण्डलिनी को भूल जाते हैं। जो लोग पंचमकारों से उत्पन्न द्वैत को शुरु में स्वीकार करके उसे चालाकी से अद्वैत में रूपांतरित करते रहते हैं, वे कुण्डलिनी योगी बन कर अपनी कुण्डलिनी को मजबूत करते हैं। यह निर्विवादित व सबके द्वारा अनुभूत तथ्य है कि कुण्डलिनी और अद्वैत सदैव साथ रहते हैं। दोनों में से एक चीज को बढ़ाने पर दूसरी चीज खुद ही बढ़ जाती है।

वास्तव में अद्वैत केवल द्वैत के साथ ही रह सकता है, अकेले में नहीं। इसलिए "अद्वैत" का असली अर्थ "द्वैताद्वैत" है।

पंचमकारों का पूजन

सेवन से पहले पंचमकारों का विधिवत पूजन किया जाता है। यह बुद्धिस्ट तंत्र और हिंदु वाममार्गी आध्यात्मिक प्रणाली में आज भी आम प्रचलित है। पंचमकारों में कुण्डलिनी का ध्यान किया जाता है, और उन्हें बहुत सम्मान दिया जाता है। उनके सेवन के समय भी जितना हो सके, कुण्डलिनी व अद्वैत का ध्यान किया जाता है। जब तक शरीर पर पंचमकारों का प्रभाव रहे, तब तक कोशिश करनी चाहिए कि कुंडलिनी व अद्वैत का ध्यान बना रहे। इससे क्या होता है कि जब दैनिक जीवन में उन पंचमकारों का प्रभाव पैदा होता है या यूँ कहें कि जब उनका फल मिलता है, तब कुण्डलिनी स्वयं ही विवर्धित रूप में ध्यानपटल पर आ जाती है। यह ऐसे ही होता है, जैसे कि पैसा जमा करने पर वह ब्याज जुड़ने से बढ़ता रहता है।

पंचमकारों का प्रयोग न्यूनतम मात्रा के साथ अधिकतम कुण्डलिनी लाभ के लिए किया जा सकता है

आम बोलचाल की भाषा में पंचमकार पाप रूप ही हैं। इसलिए इनसे दुखदायी फल भी अवश्य मिलता है, क्योंकि कर्म का फल तो मिल कर ही रहता है। उस बुरे फल से अपने शरीर व मन को बचाने के लिए इनका न्यूनतम सेवन किया जा सकता है। इनको अधिकतम कुण्डलिनी या अद्वैत भाव से जोड़कर अधिकतम आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। जो लोग पहले से ही पंचमकारों का प्रयोग गलत तरीके से करते हैं, वो अपना तरीका सुधार सकते हैं। जो लोग इसे शुरु करना चाहते हैं, हम उन्हें योग्य गुरु के मार्गदर्शन में ही ऐसा करने की सलाह देते हैं।

एक पुस्तक जो पंचमकारों से उत्पन्न द्वैत भाव को जादुई तरीके से अद्वैतभाव में रूपांतरित कर देती है

वह पुस्तक है "शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)"। इस पुस्तक को एमेजॉन की एक गुणवत्तापूर्ण समीक्षा में फाइव स्टार के साथ सर्वश्रेष्ठ, सर्वोत्कृष्ट व सबके द्वारा पढ़ा जाने योग्य आंकलित किया गया है। इसमें चिकित्सा विज्ञान के अनुसार हमारे अपने शरीर में संपूर्ण ब्रम्हांड को दर्शाया गया है। इसको पढ़ने से सारा द्वैतभाव अद्वैतभाव में रूपांतरित हो जाता है, और आनंद के साथ कुंडलिनी परिपुष्ट हो जाती है। योगसाधना से तो अतिरिक्त लाभ मिलता ही है। पंचमकारिक तंत्र को "सब कुछ" या "कुछ नहीं" साधना भी कहते हैं। इससे यदि कुंडलिनी जागरण मिल गया तो सब कुछ मिल गया, अगर नहीं मिला तो कुछ नहीं मिला और यहां तक कि नर्क भी जाना पड़ सकता है।

कुंडलिनी वाहक के रूप में हजार फनों वाला शेषनाग

दोस्तों, लम्बी पोस्ट लिखने की प्रतीक्षा में अपने छोटे अनुभवों को लिखने का मौका भी नहीं मिलता। इसलिए मैंने सोचा है कि कुंडलिनी से संबंधित इधर-उधर के छोटे-मोटे विचार ही लिखा करूंगा। इससे कुंडलिनी से लगातार जुड़ाव बना रहेगा, जो आध्यात्मिक उन्नति के लिए बहुत जरूरी है। वैसे भी व्यस्त जीवन में एकसाथ लंबी पोस्ट लिखना संभव भी नहीं है।

मस्तिष्क के दबाव को नीचे उतारने से कुंडलिनी भी नीचे उतर जाती है

जैसे ही अपनी वर्तमान स्थिति को देहपुरुष की तरह अद्वैतमयी समझा जाता है, वैसे ही मस्तिष्क में कुंडलिनी प्रकट हो जाती है। उससे मस्तिष्क में एक दबाव सा पैदा हो जाता है। उस दबाव को नीचे उतारने के लिए जीभ को तालु के साथ दबा कर रखा जाता है, और कुछ न बोलते हुए मुँह बंद रखा जाता है। साथ में कुंडलिनी ऊर्जा के नीचे उतरने का चिंतन किया जाता है। ऐसा चिंतन भी किया जाता है कि दिमाग का दबाव फ्रंट चैनल से नीचे उतर रहा है। उससे दिमाग हल्का हो जाता है, और दबाव के साथ कुंडलिनी भी नीचे उतर कर किसी उपयुक्त चक्र पर बैठ जाती है। वह फिर दिमाग से लगातार आ रहे दबाव से उत्तरोत्तर चमकती रहती है। उसी दबाव को प्राण भी कहते हैं। दिमाग के खाली या हल्का हो जाने पर मूलाधार चक्र से कुंडलिनी ऊर्जा बैक चैनल से दिमाग तक चढ़ जाती है। पहले की पोस्ट में कहे गए मानसिक आघात से भी ऐसा ही होता है। मानसिक आघात से दिमाग पूरा खाली जैसा हो जाता है, और कुंडलिनी शक्ति पूरे वेग से पीठ में ऊपर चढ़ जाती है, अर्थात सुषुम्ना खुल जाती है। तांत्रिक मदिरापान से भी कई बार ऐसा ही होता है। उससे भी दिमाग खाली जैसा हो जाता है। इस तरह से कुण्डलिनी लूप पूरा हो जाता है, और कुंडलिनी चक्रवत घूमती रहती है। इसे माइक्रोकोस्मिक ऑर्बिट भी कहते हैं। इससे यौन कामुकता का आवेग भी शांत हो जाता है, क्योंकि उसकी एनर्जी कुंडलिनी को लग जाती है। स्त्री में भी पूर्णतः ऐसा ही होता है। जैसा कि पुरानी पोस्ट में बताया गया है कि उनका वज्र तुलनात्मक रूप से लघु परिमाण वाला होता है, जो शरीर-कमल के कुछ अंदर समाहित होता है। यह तंत्र साधना की एक प्रमुख तकनीक है।

शेषनाग का बीच वाला फन सबसे लंबा है

पुरानी पोस्ट में भी मैंने बताया था कि शेषनाग को वज्र से लेकर रीढ़ की हड्डी से होते हुए मस्तिष्क तक लिटाने पर वज्र-संवेदना आसानी से सहस्रार तक पहुंच जाती है। उसका मुख्य लक्षण है, एकदम से वज्र का संकुचित हो जाना। उससे पीठ के केंद्र में संवेदना की सरसराहट सी महसूस होती है। पूरे नाग का एकसाथ ध्यान करना पड़ता है। वास्तव में, संवेदना में चाल का और स्थान बदलने का गुण होता है। शेषनाग के एक हजार फन हैं, जो पूरे मस्तिष्क को कवर करते हैं। उसका केंद्रीय फन सबसे मोटा और लम्बा दिखाया जाता है। वही केंद्रीय फन सर्वाधिक क्रियाशील प्रकार का है। इससे कुंडलिनी उसी में चलती है। वास्तव में संवेदना/कुंडलिनी की सेंटरिंग के लिए ऐसा किया गया है। इससे कुंडलिनी पूरी तरह से सेंट्रल लाइन में चलती है। वह केंद्रीय फन नीचे झुक कर भौंहों के बीच में स्थित आज्ञा चक्र को भी चूमता रहता है। इससे कुंडलिनी आज्ञा चक्र में पहुंच कर वहाँ दबाव के साथ आनन्द पैदा करती है। कई बार कुंडलिनी सीधी आज्ञा चक्र तक पहुंच जाती है। वैसे भी, हठयोग की एक मुख्य नाड़ी, वज्र नाड़ी को आज्ञा चक्र तक जाने वाली बताया गया है। आज्ञा चक्र से कुंडलिनी जीभ से होते हुए सबसे अच्छी तरह से नीचे उतरती है। सिर को और पीठ को इधर-उधर हिलाने से शेषनाग भी इधर-उधर हिलता-डुलता प्रतीत होना चाहिए। उससे और अधिक कुंडलिनी-लाभ मिलता है।

शेषनाग को क्षीर महासागर में दिखाया गया है, और उसके एक हजार फन भगवान विष्णु के सिर पर फैले हुए हैं

चित्र में ऐसा ही दिखाया गया है। वास्तव में हमारा शरीर भी एक सूक्ष्म क्षीर सागर ही है। इस शरीर में 70 % से अधिक पानी है, जो चारों ओर फैला हुआ है। वह पानी खीर के दूध की तरह ही पौष्टिक है। उसी शरीर के दुधिया पानी के बीच में उपरोक्त शेषनाग अपने फन उठाकर बैठा है। आदमी का सिर उसके एक हजार फनों के रूप में है।

कुंडलिनी के लिए सेंटरिंग क्यों जरूरी है

दोस्तों, हरेक वस्तु की एनर्जी उसके केंद्र में होती है। इसे सेंटर ऑफ मास या सेंटर ऑफ ग्रेविटी भी कहते हैं। इसी तरह शरीर की एनर्जी उसकी केंद्रीय रेखा पर सर्वाधिक होती है। इसीलिए कुंडलिनी को उस रेखा पर घुमाया जाता है, ताकि वह अधिक से अधिक शक्ति प्राप्त कर सके। मुझे पूरे सूर्य में कुंडलिनी का ध्यान करना मुश्किल लग रहा था। पर

जब मैंने सूर्य की सतही केंद्रीय रेखा पर ध्यान लगाया, तो वह आसानी से व मजबूती से लग गया। इन सभी बातों से पता चलता है कि कुंडलिनी का मनोविज्ञान भी भौतिक विज्ञान की तरह ही प्रमाणित सिद्ध होता है।

कुंडलिनी को मानवता से जोड़ने वाला धर्म बन सकता था इस्लाम

दोस्तों, अभी हाल ही में फ्रांस के पेरिस और ऑस्ट्रिया के विएना में इस्लाम के नाम पर जो आतंकवादी घटनाएं हुईं, वे बहुत दुर्भाग्यपूर्ण हैं। और अभी एक घटना और आ गई कि पाकिस्तान में एक चौकीदार ने धर्म के नाम पर अपने बैंक मैनेजर की हत्या कर दी और वहाँ उसका इस काम के लिए गर्मजोशी से स्वागत किया गया। साथ में, करतारपुर में स्थित सिखों के प्रमुख गुरुद्वारे का प्रबंधन सिखों से वापिस लेकर आईएसआई को दे दिया है। दुनिया जानती है कि पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आईएसआई इस्लामिक आतंकवादियों के संगठनों को चलाती है।पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश में अनगिनत मंदिर तोड़ दिए गए हैं, और प्राचीन नक्काशियां लुप्तप्राय कर दी गई हैं। वहाँ पर आए दिन अल्पसंख्यकों पर अत्याचार होते ही रहते हैं। भारत ऐसी घटनाओं का सदियों से भुक्तभोगी रहा है। आज हम इस तथ्य की विवेचना करेंगे कि इस्लाम कैसे कुंडलिनी को मानवता के साथ जोड़ने वाला धर्म बन सकता था, पर अपनी एकमात्र गलती कट्टरता के कारण चूक गया।

मूर्ति-पूजा के खंडन का असली मकसद इंसान का इंसान के प्रति प्रेम बढ़ाना था

इस्लाम मानवता का धर्म हो सकता था। ऐसा इसलिए, क्योंकि इस्लाम में केवल अल्लाह का ध्यान करने को कहा गया है, किसी मूर्ति वगैरह का ध्यान नहीं। फिर भी मूर्ति पूजा और अन्य हिन्दू परम्पराओं का अपना अलग वैज्ञानिक दर्शन है, जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। इसी तरह अन्य धर्मों का भी है। अल्लाह के ध्यान से अद्वैत का ध्यान खुद ही हो जाता है। उससे मन में कुंडलिनी स्वयं ही बस जाती है। स्वाभाविक है कि कुंडलिनी के रूप में किसी मनुष्य का ही स्मरण होगा, किसी मूर्ति या जानवर का नहीं। प्रियतम मनुष्य की वही छवि फिर कुंडलिनी बन जाती है। उससे मानवतापूर्ण प्रेम बढ़ता है। परंतु कट्टरता के कारण इस मानवता पर पानी फिर जाता है। अब जिससे प्रेम होगा, यदि कट्टरता के कारण उसे मारा गया, तो कैसा प्रेम। इसलिए इसी संभावित हिंसा के भय से किसी मनुष्य से असली प्रेम हो ही नहीं पाता। असली इस्लाम तो तब आएगा, जब उसमें कट्टरता और हिंसा पर पूर्ण विराम लगेगा। ऐसा कुंडलिनी तंत्र में होता है। उसमें जीवित गुरु या देवता आदि से प्रेम किया जाता है। उन्हीं के रूप की कुंडलिनी मन में बस जाती है।

बहुत से धर्म शांतिपूर्ण ढंग से हिन्दू सनातन परम्पराओं का विरोध करते हैं

भारत में भी ऐसे बहुत से धर्म हैं, जो हिंदुओं की बहुत सी सनातन परम्पराओं को नहीं मानते। यह उनका अपना दृष्टिकोण है और उसमें कोई आपत्ति भी नहीं है, क्योंकि वे ऐसी वामपंथी मान्यता किसी के ऊपर थोपते नहीं हैं। इस्लाम को भी अपनी निजी परम्परा पर चलने का पूरा अधिकार है, औरों की धार्मिक स्वतंत्रता का हनन किए बगैर। पर इस्लाम अपनी मान्यता मनवाने के लिए कट्टर और हिंसक बन जाता है। जो वन विविधतापूर्ण न हो, वह सूना-सूना सा लगता है।

इस्लाम में हिंसा को शामिल करना मध्य युग की मजबूरी थी

इस्लाम के निर्माण के समय उसमें हिंसा पर जोर दिया गया। ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि उस समय के लोग अनपढ़ और जंगली होते थे। उन्हें समझाना लगभग असंभव सा ही होता था। समझाने के लिए शिक्षा के साधन भी आज की तरह नहीं थे। इसलिए भय को बनाना जरूरी था, क्योंकि भय की लहर खुद ही बहुत दूर तक फैल जाती है, शिक्षा के कट्टरतापूर्ण साधन के रूप में। खासकर अरब देशों में तो ऐसा ही था। भारत जैसे सभ्य और अनुकूल परिवेश वाले देश में तो प्रारम्भ से ही शिक्षा और समझ का बोलबाला था। अरब से धार्मिक कट्टरता और हिंसा की प्रथा को मुस्लिम आक्रमणकारी भारत में लेकर आए। आज के आधुनिक संसार में भी वह सदियों पुरानी परंपरा वैसी ही बनी हुई है। उसको संशोधित करना जरूरी है। समाज सुधार की तरह समय के साथ धर्म सुधार भी होता रहना चाहिए। इस्लाम को छोड़कर सभी धर्मों में सुधार हुए हैं। मुसलमानों को मिलकर यह बात समझनी चाहिए, और दूसरे धार्मिक समुदायों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आधुनिकता के साथ आगे बढ़ते रहना चाहिए।

कुंडलिनी के लिए शिवलिंग के रूप वाले गुम्बदाकार या शंक्वाकार पर्वत का महत्त्व: वर्ष 2020 की अंतिम ब्लॉग पोस्ट

Image by Shalu, Subathu

नया साल चमक और आशा से भरा हो ताकि अंधेरा और उदासी आप से दूर रहें। नववर्ष 2021 की शुभकामना!

दोस्तों, करोल पहाड़ हिमालय का एक बेहद आकर्षक पहाड़ है। यह शिवलिंग के जैसे आकार का है। मैदानी क्षेत्रों से ऊपर चढ़ते समय यह ऊंचे पहाड़ों के प्रवेशद्वार पर स्थित प्रतीत होता है। मेरी कुंडलिनी से जुड़े इसके योगदान पर वैज्ञानिक चर्चा हम आज इस पोस्ट में करेंगे।

करोल पहाड़ के साथ मेरा आजन्म रिश्ता

मैं इसी पहाड़ की नजर में पैदा हुआ, और इसीके सामने बड़ा हुआ। यह आसपास के क्षेत्र में सबसे ऊंचा पहाड़ एक साक्षी की तरह हर समय मेरे सामने खड़ा रहा। यह हमेशा मेरे कर्मों की गवाही देता रहा, और मुझे सन्मार्ग पर प्रेरित करता रहा। इसने मुझे कभी अहंकार नहीं करने दिया। जैसे ही मुझे कभी थोड़ा सा भी अहंकार होने लगता था, तो वह कहता था, "मैं तो सबसे बड़ा और ऊँचा हूँ, फिर भी मैं कभी अहंकार नहीं करता; फिर तू मेरे सामने कीड़े जितना छोटा होकर भी क्यों अहंकार कर रहा है"। उसके इस ताने से मेरा अहंकार समाप्त हो जाता था। उससे मेरे मन की कुंडलिनी चमकने लग जाती थी। इस पहाड़ पर मेरा आना-जाना लगा रहता था, क्योंकि मेरे ज्यादातर मित्र, रिश्तेदार व आजीविका के साधन इसी पहाड़ पर होते थे। प्रतिदिन सुबह जब मैं सूर्य को जल चढ़ा रहा होता था, तब वह इसी पहाड़ के पीछे से उग रहा होता था। इससे वह पूजा का जल उस पहाड़ को भी स्वयं ही लग जाता था। इससे अनजाने में ही वह पहाड़ मेरा इष्ट देवता और मित्र बन गया था।

समय के साथ करोल पहाड़ के साथ मेरी कुंडलिनी मजबूती से जुड़ती गई

सूर्य को जल देते समय मेरे मन में उमड़ने वाली कुण्डलिनी करोल पहाड़ के साथ स्वयं ही जुड़ती गई। सूर्य की तरफ तो सीधा देखा नहीं जा सकता, और न ही सूर्य देव दिनभर नजरों के सामने रहते हैं। परन्तु वह पहाड़ तो हमेशा नजरों के सामने रहता था। उसकी तरफ देर तक सीधी नजर से भी देखा जा सकता था। काम करते हुए जरा सा सिर ऊपर उठाता, तो वह पहाड़ अनायास ही दृष्टिपटल पर आ जाता था, और उसके साथ ही उससे जुड़ी हुई मेरी कुंडलिनी भी। इस तरह से मेरी कुण्डलिनी मेरे जीवनभर मेरे साथ लगातार बनी रही, और उत्तरोत्तर बढ़ती रही। परिणामस्वरूप, मुझे गुरुकृपा से क्षणिक आत्मज्ञान भी उसी खूबसूरत पहाड़ के नजारे के साथ मिला, और कुंडलिनी जागरण भी उसीके चरणों की छत्रछाया में जाकर मिला।

करोल पहाड़ का शिवलिंग के जैसा आकार भी मेरी तांत्रिक कुंडलिनी के विकास में सहायक बना

शिवपुराण में शिवलिंग की आकृति का बहुत ज्यादा आध्यात्मिक महत्त्व बताया गया है। वहाँ शिवलिंग की पूजा को सबसे श्रेष्ठ माना गया है। जरा सोचो कि जब छोटे से घरेलू आकार के शिवलिंग का इतना ज्यादा महत्त्व है, तब शिवलिंग के आकार वाले पहाड़ का महत्त्व क्योंकर नहीं होगा। इससे तो महत्त्व कई गुना बढ़ जाएगा, क्योंकि पहाड़ की विशालता, अचलता, अमरता, और अहंकारविहीनता के कारण उसके प्रति आदरबुद्धि वैसे भी ज्यादा होती है। तभी तो पहाड़ को देवता भी माना जाता है। इसी वजह से ही लोग साधना के लिए सुरम्य पहाड़ों की ओर जाते हैं। वैसे तो विभिन्न कोणों से देखने पर वह पहाड़ विभिन्न आकृतियों में दिखाई देता था, यद्यपि उसकी शिवलिंग के जैसी सुंदर आकृति तो मेरे घर व आसपास के क्षेत्र से ही ज्यादा दिखाई देती थी। इसका मतलब है कि वास्तविक आकृति का उतना महत्त्व नहीं है, जितना कि आकृति के भान होने का है। शिवलिंग के सूक्ष्म तांत्रिक महत्त्व के कारण ही मंदिर के शिखर कुछ शंक्वाकार या गुम्बदाकार लिए होते हैं। यह आकार वास्तव में मूलाधार से जुड़ा होता है, और उसी की शक्ति लिए होता है। कैलाश पर्वत का रूप भी ऐसा ही है, और संभवतः तंत्र के सर्वाधिक अनुरूप है। तभी तो यहाँ पर साक्षात शिव का निवास बताया गया है। इसी वजह से बहुत से लोग करोल पहाड़ को मिनी कैलाश कहकर भी संबोधित करते हैं।

पहाड़ एक साधना में लीन मनुष्य की तरह होता है

इसी वजह से तो पहाड़ के रूप को भगवान शिव के रूप के साथ जोड़ा गया है। उसकी वनस्पति शिव की जटाएं हैं। उससे निकलते नदी-नाले व झरने शिव की जटा से निकलती गंगा नदी है। उस पर उगता चाँद शिव के मस्तक का

खूबसूरत अर्धचंद्र है। उसके अंदर बसने वाले लोग व वन्य जीवजंतु शिव के ऊपर लिपटे नाग के रूप में हैं। उसका वनस्पतिविहीन व पथरीला भूभाग शिव के शरीर के नग्न भाग के रूप में है।

पहाड़ का अपना स्वरूप कुंडलिनी जागरण के दौरान की अवस्था है

यह अवस्था भाव, अभाव, व पूर्णभाव का मिश्रित रूप है। नशे आदि की अवस्था में भी भाव व अभाव दोनों एकसाथ होते हैं, परंतु उसमें पूर्णभाव नहीं होता। पर्वत की आत्मा में अभाव की अवस्था अद्वैत व जजमेंट से रहित चेतना के रूप में है, भाव की अवस्था अस्तित्व के आनंद के रूप में है, और पूर्णभाव की अवस्था पूर्ण अस्तित्व के परमानन्द के रूप में है। यह पूर्णभाव सर्वोच्च अनुभव के रूप में है। इसे भावाभावहीनता (न भाव, न अभाव) के रूप में भी जाना जा सकता है। पर्वत की ही तरह अन्य सभी निर्जीव पदार्थ भी जागती हुई कुण्डलिनी के रूप में पूर्णजीवन के रूप में हैं, निर्जीव नहीं। तभी तो कुंडलिनी जागरण के दौरान सभी कुछ अपने जैसा और एकसमान लगता है। भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत के इसी सर्वव्यापी रूप को समझा था, इसीलिए वे इंद्र देवता के कोप से बच पाए और व्रज के ग्रामीणों को भी बचा पाए। ग्रामीण तो गोवर्धन पर्वत को अपना स्थानीय देवता मानते थे, जो सीमित व अलग-थलग रूप वाला था। यह कथा मुझे एक रूपक की तरह भी लगती है। इंद्र विकास व संसाधनों के अहंकार से युक्त शहरवासियों व मैदानी भूभाग में रहने वाले लोगों का प्रतीक है। गोवर्धन पर्वत गांव की हरी-भरी वादियों का प्रतीक है। व्रजवासी एक अनपढ़, ग्रामीण, पहाड़ी, पिछड़े, अन्धविश्वासी व संकुचित सोच के अहंकारी आदमी का प्रतीक है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि अहंकार शहरवासी और ग्रामवासी, दोनों में है। यद्यपिशहरी में उच्चता व कृत्रिमता का अहंकार है, और ग्रामीण में निम्नता व प्रकृति का। ये दोनों प्रकार के अहंकार आपस में टकराते हैं। इन दोनों प्रकार के अहंकारों से रहित आदमी ज्ञानी कृष्ण की तरह है, जो इन दोनों प्रकार के लोगों के साथ मिश्रित होकर भी उनके दुष्प्रभावों से अछूता रहता है।

कुण्डलिनी योगी को देवराज इंद्र परेशान कर सकते हैं

मित्रो, मैंने पिछले हफ्ते की पोस्ट में बताया कि सभी प्रकार के योगों को एकसाथ अपनाने से ही योग में सफलता प्राप्त होती है। आज हम इस तथ्य की कुछ विस्तारपूर्वक अनुभवात्मक विवेचना करेंगे।

कर्मयोग सभी योगों की प्रारंभिक सीढ़ी के रूप में

ऐसा इसलिए है, क्योंकि कर्मयोग सबसे आसान है। इससे दुनिया में रमा हुआ आदमी भी ऐसे ही शांत व दुनिया से दूर बना रहता है, जैसे कमल का पत्ता पानी में डूबा रहकर भी पानी की पहुंच से दूर रहता है, और सूखा ही बना रहता है। कर्मयोग तो जिंदगी में हमेशा ही बना रहना चाहिए। परंतु यह किशोरों व युवाओं के लिए विशेष महत्त्व का है, क्योंकि इसी उम्र में कर्म तेजी से किए जाते हैं। कर्म की मात्रा जितनी ज्यादा हो, कर्मयोग भी उतना ही ज्यादा प्रभावशाली होता है। कर्मयोग को अद्वैत भाव या अनासक्ति भाव भी कहते हैं। मेरे घर पर शुरु से ही योग का प्रभुत्व होने से मुझे कर्मयोग के संस्कार विरासत में मिले। वैसा मेरा कर्मयोग तभी चरम पर पहुंचा, जब उसमें किसी अज्ञात ईश्वरीय प्रेरणा से तंत्र भी सम्मिलित हुआ। इसी से मुझे आत्मजागृति को दो बार अनुभव करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वास्तव में तंत्र से कर्म करने की शक्ति बढ़ जाती है, जिससे कर्मयोग भी बढ़ जाता है। फिर किसी दिव्य प्रेरणा से मैंने शरीरविज्ञान दर्शन की रचना की। यह एक व्यवहारिक दर्शन है, और दुनिया के झमेले में फंसे एक व्यक्ति के लिए रामबाण ओषधि है। इस दर्शन से मुझे बहुत बल मिला। इससे मुझे चहुँमुखी भौतिक तरक्की के साथ आध्यात्मिक तरक्की भी मिली। इसको बनाने के करीब 4-5 वर्ष पहले मुझे एक आत्मज्ञान की झलक भी मिली थी। उससे मैं विशेष हो गया था। मैं पूरी तरह से अद्वैत सागर में डूब गया था। दुनिया वालों को मैं मंगल ग्रह से आए आदमी की तरह लगने लगा, जिससे वे मुझे हीन सा समझने लगे और मुझे अलग-थलग सा रखने लगे। वे अपनी जगह पर सही भी थे। **वे मुझे पारलौकिक आयाम में प्रविष्ट नहीं होने देना चाहते थे**। हालांकि वह आयाम सर्वश्रेष्ठ होता है, पर उस आयाम में रहकर दुनियादारी के काम ढंग से नहीं हो पाते। देवता आदमी को उस आयाम में जाने से रोकते हैं, क्योंकि यदि सभी लोग उस आयाम में चले गए, तो उनकी रची हुई दुनिया कैसे चल पाएगी। तभी तो प्राचीन काल में देवताओं का राजा इंद्र योगियों की तपस्या भंग करने आ जाता था। इंद्र को डर होता था कि यदि कोई आदमी योगबल से अपनी ओर दुनिया के लोगों को आकर्षित करेगा, तो उसे कोई नहीं पूछेगा। इंद्र को एकप्रकार से अपने प्रभुत्व की राजगद्दी के खो जाने का डर सताता रहता था। इसी खतरे के मद्देनजर ही मैं योगसाधना को सावधानी से करता हूँ। जैसे ही मैं पारलौकिक आयाम में प्रविष्ट होने लगता हूं, और मुझे देवताओं से खतरे का आभास होने लगता है, मैं तुरंत कुछ तांत्रिक टोटका अपनाकर उस आयाम से बाहर निकल आता हूं। सूत्रों के अनुसार योगी श्री साधुगुरु भी ऐसा ही कहते हैं, और सम्भवतः करते भी हैं। **वास्तव में, देवताओं से मधुर संबंध बना कर ही आदमी उनकी बनाई दुनिया से ऊपर उठ सकता है।**

उपरोक्त आध्यात्मिक अलगाव के कारण मेरे लिए दुनिया के बीच खुलकर सम्मिलित होना मुश्किल हो गया था। इससे मुझे कर्महीनता और बोरियत सी सताने लगी। इसीको कुंडलिनी का विपरीत चैनल में चढ़ना कहते हैं। **एक इड़ा चैनेल है, और एक पिंगला**। एक भावनात्मक है, और एक कर्मात्मक। मैं भावनात्मक ज्यादा हो गया था। चित्र-विचित्र अनुभवों में और पुरानी यादों में डूबा रहता था। इससे कर्म करने की शक्ति का ह्रास होता था। इसी वजह से मुझे उस समय यौन साथी की बहुत जरूरत महसूस होती थी। यौनबल से कुण्डलिनी बीच वाले सुषुम्ना चैनल में चढ़कर सहस्रार तक पहुंच जाती है। इससे आदमी का जीवन संतुलित हो जाता है। यौन साथी का तो नहीं, पर शरीरविज्ञान दर्शन का साथ मुझे जरूर मिला। इससे उत्पन्न अद्वैत से मेरे फालतू के विचारों पर लगाम लग गई। इससे जो शक्ति की बचत हुई, उससे मेरी कुंडलिनी सुषुम्ना चैनल से होकर सहस्रार में प्रविष्ट हुई। फिर मेरी कुंडलिनी को यौनबल के बिना ही उछालें मारते देखकर संभावित यौन साथी भी मेरी ओर नजरें घुमाने लगे। जिस समय मुझे यौनबल की जरूरत थी, उस समय तो कहीं कोई नजर नहीं आया, पर जब मैंने अपना यौनबल खुद ही निर्मित कर लिया, तब वे भी उसके प्रति उत्साहित होने लगे। वास्तव में जो कुछ हुआ, वह ठीक ही हुआ। अगर मुझे यौनबल समय से पहले मिल गया होता, तो मैं अपना स्वयं का दार्शनिक यौनबल पैदा करना न सीख पाता, और न ही मुझे आत्मजागृति की दूसरी झलक मिल पाती।

थोड़ी उम्र बढ़ने पर मेरा ज्यादा झुकाव ज्ञानयोग व हठयोग की तरफ हो गया

हालाँकि कर्मयोग भी चला हुआ था। एकबार तो आत्मज्ञान के एकदम बाद मेरा भक्तियोग भी काफी बढ़ गया था। दरअसल जब भौतिक साथियों से धोखा खाकर मैं पूरी तरह निरुत्साहित हो गया था, तभी मुझे आत्मज्ञान अर्थात ईश्वर दर्शन की झलक मिली थी। उससे मुझे संतुष्ट व सुखी रहने के लिए भरपूर सहारा मिला। मैं अपने को ईश्वर का

विशेष कृपापात्र समझने लगा। मैं उसके प्रति बार बार आभार प्रकट करता था, और विभिन्न स्तुतियों से उसे धन्यवाद देता था। यही तो ईश्वर भक्ति है। इससे जाहिर होता है कि सभी प्रकार के योग एकसाथ चलते रहने चाहिए। समय के अनुसार उनके आपसी अनुपात में बदलाव करते रहना चाहिए। ऐसा करने पर आत्म जागृति की प्राप्ति को कोई नहीं रोक सकता।

कुंडलिनी ध्यान चौबीसों घंटे करने के तीन तरीके

मित्रो, मैंने पिछली पोस्टों में बताया था कि जीभ को तालु से छुआ कर कुंडलिनी को आगे के चैनल से नीचे उतारते हैं। मैंने यह भी कहा था कि किसी भी संवेदना के अनुभव का एकमात्र स्थान सहस्रार ही है, कोई अन्य चक्र नहीं। कुंडलिनी चित्र हमेशा सहस्रार में ही बन रहा होता है। अन्य चक्रों में वह तभी प्रतीत होता है, जब उसका ऊर्जा स्तर एक न्यूनतम सीमा से नीचे गिरता है। ऊर्जा का स्तर जितना नीचे गिरता है, वह उतना ही ज्यादा निचले चक्र में जाता है। मैंने हाल ही में इससे संबंधित एक नया अनुभव प्राप्त किया, जिसे मैं उन्हीं निम्नलिखित सिद्धांतों की पुष्टि के लिए प्रयोग में लाऊँगा।

आध्यात्मिक आयाम को प्राप्त कराने वाली दो मुख्य यौगिक विधियां हैं

पहली विधि दार्शनिक है, और दूसरी विधि प्रयोगात्मक या तांत्रिक है। पहली विधि में किसी पसंदीदा अद्वैत दर्शन को अपनी वर्तमान स्थिति पर आरोपित किया जाता है। दूसरी विधि में जीभ को तालु से छुआ कर रखा जाता है।

आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कराने वाली दार्शनिक या राजयोग गत विधि

मैं एक दिन बहुत से जटिल कार्यों में व्यस्त था। उन कार्यों से लगातार द्वैत पैदा हो रहा था। द्वैत के साथ मानसिक परेशानी आ रही थी। उससे स्वाभाविक था कि शारीरिक परेशानी भी पैदा हो रही थी। मैं उस द्वैत को अद्वैत में रूपांतरित करने के लिए दार्शनिक विधि का सहारा लेने लगा। मैं स्वनिर्मित "शरीरविज्ञान दर्शन" नामक पुस्तक को अपनी उस समय की वर्तमान व मनोदोलन से भरी अवस्था पर आरोपित करने लगा। मैं अपनी अवस्था को बिल्कुल नहीं बदल रहा था। मतलब कि जैसी अवस्था बन रही थी, उसे वैसा ही रहने दे रहा था। अवस्था को बदलने से देवता नाराज होते हैं, और वे कामकाज में विघ्न डालते हैं। वे चाहते हैं कि आदमी हर प्रकार की अवस्था का अनुभव करे। यह अलग बात है कि असली योगी उन सभी अवस्थाओं को अनासक्ति से अनुभव करे। देवता इससे और ज्यादा खुश हो जाते हैं, क्योंकि वे खुद भी अनासक्त होते। वे हर अवस्था का अनासक्ति से सामना करते हैं, उनसे भागते नहीं हैं। अवस्थाओं से पलायन करने को अपना और अपनी बनाई सृष्टि का अपमान समझते हैं, क्योंकि सभी अवस्थाएं इस विभिन्नताओं से भरी सृष्टि के हक में ही होती हैं। इसीलिए मैं अवचेतन मन से ही यह मान रहा था कि मेरा अद्वैत दर्शन मेरी सभी अवस्थाओं से जुड़कर उनको अद्वैतशील बना रहा है। मैं सीधे तौर पर इसका चिंतन नहीँ कर रहा था, क्योंकि उससे मेरी अवस्थाएं दुष्प्रभावित हो सकती थीं। उससे क्या होता था कि मेरे अज्ञातस्थान वाले चिन्तन में कुंडलिनी प्रकट हो जाती थी, और मेरे किसी चक्र पर स्थित हो जाया करती थी। जितना कम मानसिक ऊर्जा स्तर मेरी अवस्था का होता, मेरी कुंडलिनी उतना ज्यादा निचले चक्र पर चली जाती थी। मन के कुछ ऊर्जावान रहने पर वह हृदय चक्र पर आ जाती थी। ऊर्जा स्तर के काफ़ी ज्यादा गिरने पर वह नाभि चक्र पर आ जाती थी। उससे भी कम ऊर्जा होने पर वह स्वाधिस्ठानचक्र पर भी स्थित हो जाती थी।

आत्म-जागरूकता पैदा करने वाली तांत्रिक विधि

फिर से मस्तिष्क की थकान होने पर मैंने अपनी उलटी जीभ को नरम तालु से छुआया। मुझे वहाँ नमकीन सा स्वाद लगा और तीव्र संवेदना की अनुभूति हुई। इसके साथ ही मस्तिष्क की ऊर्जा जीभ के पिछले हिस्से की केंद्रीय रेखा से सभी चक्रों को भेदते हुए नीचे उतर गई और नाभि चक्र पर स्थित हो गई। उसके साथ कुण्डलिनी भी थी। मस्तिष्क में केवल विचारों का कंफ्यूसिंग पुलिंदा था। वह नीचे उतरते हुए कुण्डलिनी बन गया। उससे मस्तिष्क की थकान एकदम से कम हो गई। अद्वैत व आनन्द के साथ शांति का उदय हुआ। विचार व कर्म अनासक्ति के साथ होने लगे।

राजयोग व तंत्र के नियमों के मिश्रण वाली तीसरी यौगिक विधि

कुछ देर बाद मेरे मस्तिष्क में फिर से द्वैत से युक्त दबाव बनने लगा था। उसे कम करने के लिए मैंने उपरोक्त दोनों विधियों का प्रयोग किया। पहले मैंने जीभ को तालु से लगातार छुआ कर रखा। उसके साथ ही शरीरविज्ञान पुस्तक से अपने मन में कुंडलिनी को पैदा करने का प्रयास किया। पर वह मस्तिष्क में ढंग से प्रकट हो पाती, उससे पहले ही फ्रंट चैनेल से नीचे आ गई। उसके जीभ को क्रॉस करते समय जीभ में स्वाद से भरी हुई तेज संवेदना पैदा होती थी। इससे कुंडलिनी लूप भी पूरा हो गया था। इससे वह नाभि चक्र से भी नीचे उतरकर स्वाधिष्ठान चक्र और मूलाधार चक्र से होते हुए मूलाधार को संकुचित करने से पीठ के बैक चैनेल से ऊपर चढ़ जाती थी और आगे से फिर नीचे उतर जाती थी। इससे कुंडलिनी चक्र की तरह लूप में घूमने लगी। यह विधि मुझे सर्वाधिक शक्तिशाली लगीं। हालांकि समय के अनुसार किसी भी विधि को अपने लाभ के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

कुंडलिनी के लिए वामपंथी तंत्र के यौगिक पंचमकारों की संभावित अहमियत, जिनसे प्रकृति के तीनों गुण संतुलित रहते हैं

मित्रो, पिछले हफ्ते हमने पंचमकार और उनसे उत्पन्न तमोगुण के बारे में बताया था। पंचमकारों का वर्णन हमने पुरानी पोस्टों में भी किया है। दरअसल पंचमकार वामपंथी तांत्रिक के प्रमुख हथियार हैं, कुंडलिनी का शिकार करने के लिए। ये पांच चीजें हैं, जिनके नाम अक्षर म से शुरु होते हैं। ये हैं, मैथुन, माँस, मद्य, मत्स्य एवं मुद्रा। पांचवा पंचमकार, मुद्रा वास्तव में कुंडलिनी योग ही है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि पंचमकार को लेकर इन भौतिक चीजों या भावनाओं के सांसारिक रूपों के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए। ये केवल तभी पंचमकार बनती हैं, जब ये पूरी तरह से एक योग्य गुरु के मार्गदर्शन में आध्यात्मिक भावना व साधना के साथ होती हैं, और अधिकतम आध्यात्मिक लाभ के लिए न्यूनतम राशि में उपयोग की जाती हैं। ऐसा नहीं करने पर, पंचमकार हानिकारक भी हो सकते हैं। पंचमकार शुरू में द्वंद्व या द्वैत पैदा करते हैं। फिर इसे विभिन्न ध्यान तकनीकों और वेदों-पुराणों या शरीरविज्ञान दर्शन जैसे अद्वैतमयी दर्शन-सिद्धांतों के साथ अद्वैत में परिवर्तित किया जा सकता है। दरअसल, अद्वैत का अपना अलग अस्तित्व नहीं है। यह केवल द्वैत का निषेध है। यह द्वैत है, जिसका अपना अस्तित्व है। इसलिए, हम सांसारिक भागीदारी के माध्यम से केवल द्वैत को ही पैदा कर सकते हैं। हम अद्वैत का उत्पादन सीधे नहीं कर सकते हैं, लेकिन केवल द्वैत के निषेध के माध्यम से ही कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, द्वैत सबसे पहले प्राप्त होने वाली आधार वस्तु है। यदि हमारे पास द्वैत नहीं है, तो हम नकारात्मक शब्द 'अ' को उस पर कैसे लागू करेंगे। अद्वैत के संबंध में व्यापक गलतफहमी दिखाई देती है। हम द्वैत की पूर्ण उपेक्षा करते हुए अद्वैतमयी नहीं बने रह सकते हैं। ये दोनों भावनाएँ साथ-साथ चलती हैं। हम इस पोस्ट में किसी चीज या जीवन के किसी विशेष तौर-तरीके की वकालत नहीं कर रहे हैं। हम केवल वैज्ञानिक सत्य को पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं।

दुनिया की नजरों में पंचमकारों को पापपूर्ण माना जाता है

इसका एक कारण यही है, जो पिछली पोस्ट में बताया था। ये तमोगुण पैदा करते हैं। दूसरा कारण यह है कि इसमें हिंसा कर्म छुपा होता है। कर्म का फल तो मिलता ही है। पर वह कर्म के हिसाब से ही मिलता है, मनमर्जी से नहीँ। शास्त्रीय मिथक कथाओं के अनुसार अधिकांश लोग समझ लेते हैं कि उससे मृत्युदंड मिल जाएगा अथवा भयानक नरकों में घोर यातनाएं झेलनी पड़ेंगी, क्योंकि सभी पाप या हिंसाएं बराबर हैं। पर ऐसा नहीं होता। ये सिर्फ आध्यात्मिक उक्ति ही है, भौतिक या व्यावहारिक नहीं। छुटपुट पापकर्म के छुटपुट फल मिलते रहते हैं, जो आम प्रगतिशील या मेहनतकश जनजीवन में वैसे भी देखे जाते हैं, जैसे बीमार होना, पैर फिसलना, मोच आना, हादसे की संभावना बढ़ जाना आदि। पर ज्यादातर मामलों में बचाव हो जाता है। पंचमकारों से मिली शक्ति से आदमी दुनियादारी के कामों में ज्यादा निमग्न रहने लगता है। इससे स्वाभाविक रूप से जो छुटपुट बीमारियाँ, शारीरिक कष्ट व मानसिक कष्ट पैदा होते हैं, वे ही उनके पाप के फल के रूप में होते हैं। उनसे पंचमकारों का पाप नष्ट होता रहता है, और दुनिया के काम धंधे भी तरक्की करते रहते हैं। इसलिए ऊर्जा का अधिक से अधिक सदुपयोग इस तरह से करना चाहिए कि उसके लिए कम से कम पाप करना पड़े। यही कर्म प्रबंधन है। यही योग है।

आजकल पंचमकारों के बिना कुंडलिनी योग करना मुश्किल प्रतीत होता है

मैं एक ब्लॉग में एक युवक के योग अनुभव के बारे में पढ़ रहा था। वह उसके लिए शुद्ध शाकाहारी बन गया था। एक बार संभवतः वह ऐमजॉन के जंगल में अपने किसी जाने पहचाने व्यक्ति के पास रहने लगता है। वहाँ वह मछली से परहेज करके चावल की ढेरी में एक गड्ढा सा बनाकर उसमें डालने के लिए दाल की मांग करता है। उसके परिचित की हंसी रुकने का नाम ही नहीं लेती। इससे शर्मिंदा होकर वह नॉनवेज योगी बन जाता है। इसका मतलब है कि जैसा देश, वैसा भेष। संतुलित आहार लेना योगी के लिए बहुत जरूरी है, क्योंकि योग के लिए ऊर्जा की सख्त जरूरत होती है। योग का दूसरा नाम संतुलन या संतुलित जीवन भी है। इससे जीवन में संतुलित आहार की अहमियत का पता चलता है। हम भोजन के संतुलन को केवल पोषक तत्त्वों के संतुलन तक ही सीमित समझते हैं। पर वास्तव में यह संतुलन भोजन की प्रकृति के गुणों तक भी एक्सटेंड होना चाहिए। एक आदमी को शाकाहार से सभी जरूरी पोषक तत्त्व मिल सकते हैं, पर उसे प्रकृति का तमोगुण मांसाहार से ही मिलेगा। कोई चाहे तो स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाए बिना सीमित मदिरा का प्रयोग भी आवश्यक तमोगुण की प्राप्ति के लिए कर सकता है। यह सभी को मालूम है और जैसा कि इस ब्लॉग की पिछली पोस्टों में सिद्ध किया गया है कि जीवन के संतुलन के लिए मन के अंदर प्रकृति के तीनों गुण संतुलन में होने चाहिए। ये गुण एक दूसरे के पूरक तभी बनते हैं, जब संतुलन में होते हैं, अन्यथा ये एक दूसरे के अवरोधक बन जाते हैं। ये सभी जानते हैं कि आहार से ही मन बनता है। एक प्रसिद्ध लोकोक्ति भी है कि "जैसा खाए

अन्न, वैसा बने मन"। इससे आहार में प्रकृति के तीनों गुणों के संतुलित मात्रा में होने की अहमियत का पता चलता है। तभी कहते हैं कि बिन खाए भजन न हो गोपाला। आयुर्वेद के वात, पित्त और कफ भी प्रकृति के क्रमशः सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण हैं। इनके संतुलन से स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है। पतंजलि ने यम और नियम में जो अहिंसा शब्द डाला है, उसका मतलब है कि बिना उच्च प्रयोजन के हिंसा न हो। यदि शरीर को पुष्ट व नीरोग रखने के लिए हल्की-फुल्की हिंसा के रूप में हल्का-फुल्का हेल्दी नॉनवेज जैसे कि मछली, अंडा न लिया जाए तो यह भी शरीर के प्रति हिंसा होगी। उससे भी योग का यम और नियम कहाँ सिद्ध हो पाएगा। मानव शरीर के प्रति हिंसा तो सबसे बड़ी हिंसा होती है। पतंजलि बहुत लम्बी सोच रखते थे, इसलिए शाकाहार-मांसाहार के झमेले में पड़ने की बजाय उन्होंने अहिंसा शब्द जोड़ दिया। समझने वालों के लिए यह बहुत है। अब यदि विज्ञान के हिसाब से शरीर की जरूरत को आंका जाए तो एक आदमी को हफ्ते में केवल दो ही दिन और एक दिन में करीब 70-100 ग्राम मांस की जरूरत होती है। इससे ज्यादा हानिकारक हो सकता है। इससे कम से शरीर को हानि पहुंच सकती है। मैंने बहुत से योगी लोग देखे हैं, जिन्हें 15 दिन बाद, कइयों को 1 महीने बाद, तो कइयों को 3 महीने बाद जरूरत महसूस होती है। कईयों को तो छः महीने के अंतराल पर नानवेज की जरूरत महसूस होती है। अब बताइए कि इससे पोषक तत्त्वों की क्या कमी पूरी होगी। इससे जाहिर है कि उससे आदमी के मन के तमोगुण की कमी पूरी होती है। इससे, अपने अंधकार प्रकार के आंतरिक स्वभाव से उसे भरपूर व ताजगी प्रदान करने वाली नींद भी आती है, जिससे उसके शरीर व मन की अच्छी मुरम्मत हो जाती है, और उससे वह स्वस्थ हो जाता है। शरीर अपनी जरूरत खुद बताता है। इसकी जरूरत होने पर योग में ध्यान कम लगने लगता है, चुस्ती कम हो जाती है, भूख घट जाती है, पाचन प्रणाली गड़बड़ाने लगती है, शरीर में कम्पन पैदा होने लगते हैं। व्यवहार में गुस्सा व चिड़चिड़ापन आ जाता है, अद्वैतभाव बना कर रखना मुश्किल हो जाता है, मन द्वैत के भंवर के अंदर भटकने लगता है, अवसाद जैसा हो जाता है, शरीर रोगी होने लगता है, डर सा लगने लगता है, सेक्स के प्रति रुचि नहीं रहती आदि बहुत से लक्षण पैदा हो जाते हैं। मन में सही तरीके से अद्वैत भाव बनाए रखने के लिए प्रकृति के तीनों गुणों का संतुलन बहुत जरूरी है। फिर यह सबको पता है कि जहां अद्वैत है, वहाँ कुंडलिनी भी है। वास्तव में आहार की कमी से शरीर और मन के हरेक हिस्से में कुछ न कुछ दुष्प्रभाव जरूर पैदा होता है। बहुत से लोग इन्हें नजरन्दाज करते हैं और बहुत से लोगों को इसका आभास ही नहीँ होता। नॉनवेज की खुराक पूरी होने से ये सभी खराब लक्षण एकदम से गायब हो जाते हैं। वैसे भी मछली को सर्वश्रेष्ठ आमिष आहार माना गया है, क्योंकि इसमें बहुत से स्वास्थ्यवर्धक गुण हैं, और इसके कोई दुष्प्रभाव भी नहीँ हैं। तभी तो इसे पंचमकारों में विशेष रूप से शामिल किया गया है। इसके सेवन से पापकर्म भी बहुत कम होता है। वैज्ञानिक शोध से भी यह बात सामने आई है कि मछली को दर्द नहीं होता। यह उन्हें जालिम कुदरत से बचने के लिए कुदरत का ही दिया तोहफा है। वैसे तो सभी चीजों व भावों में प्रकृति के तीनों गुण विद्यमान होते हैं, पर किसी विशेष चीज में कोई विशेष गुण ज्यादा बलवान होता है। पंचमकारों को ही लें, तो मैथुन व मत्स्य में रजोगुण, मांस व मदिरा में तमोगुण, और मुद्रा में सतोगुण की अधिकता होती है। आजकल के प्रदूषण और अति भौतिकता के युग में शरीर की ऊर्जा की मांग बहुत ज़्यादा बढ़ गई है। ऐसे में सम्भवतः यौगिक पंचमकार ही मानव जाति का सही दिशानिर्देशन कर सकते हैं।

कुंडलिनी एक पक्षी की तरह है जो खाली और खुले आसमान में उड़ना पसंद करता है

मित्रो, योग या अध्यात्म को उड़ान के साथ संबद्ध करके दिखाया गया है। आध्यात्मिक शास्त्रों में विमानों का वर्णन अनेक स्थानों पर आता है। कई जगहों पर योगियों को आसमान में उड़ते हुए दिखाया गया है। आत्मा को पंछी की उपमा दी गई है। आज हम इस पर वैज्ञानिक चर्चा करेंगे।

आत्मा और आकाश में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है

दोनों ही त्रिआयामी हैं। दोनों ही सर्वव्यापी हैं। आत्मजागृति के दिव्य अनुभव के दौरान आदमी अपने को प्रकाशमयी आनंदमयी, सर्वव्यापक, व चेतनापूर्ण आकाश के रूप में अनुभव करता है। इसी तरह, मृतात्मा से साक्षात्कार के समय भी आदमी अपने को आकाश की तरह अनुभव करता है। हालाँकि उसमें प्रकाश, चेतना व आनन्द के गुण बहुत कम होते हैं। इसलिए वह रूप चमकते काजल की तरह प्रतीत होता है। फिर भी वह रूप सर्वव्यापक होता है।

आदमी का मन हमेशा से ही आसमान में उड़ने को ललचाता रहा है

इसका कारण यही है कि आत्मा आकाश जैसे रूप वाली होती है। हर कोई अपने जैसे गुण स्वभाव वाले से मैत्री करना चाहता है। इसीलिए हरेक आदमी आकाश में भ्रमण करना चाहता है। यही कारण है कि वायुयान में बैठकर आनन्द मिलता है। जब मैं विमान में बैठा था, तो मेरे मन में आनंद के साथ कुंडलिनी क्रियाशील हो गई थी। इसी तरह, मैं एकदिन परिवार के साथ पतंग का मजा लेने एक खाली मैदान में चला गया। बच्चे ऊंचे आसमान में पतंग उड़ा रहे थे, और मैं जमीन पर दरी बिछा कर उस पर लेट गया, ताकि बिना गर्दन मोड़े पतंग को लगातार देख पाता। मैं लगभग डेढ़ घंटे तक पतंग को बिना थके देखता रहा। उस दौरान मेरे मन में आनन्द से भरे शांत विचारों के साथ कुंडलिनी क्रियाशील बनी रही। कई बार तो ऐसा लगा कि मैं खुद ही पतंग पर बैठ कर ऊंचे आसमान में उड़े जा रहा हूँ। कई दिन तक वह आनन्द मेरे मन में बना रहा, और साथ में उमंग भी छाई रही। काम-काज में भी अच्छा मन लगा रहा। इसी तरह, पहाड़ों में भी कुंडलिनी आनंद बढ़ जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि पहाड़ भी आकाश की तरह थ्री डायमेंशनल हैं, हालाँकि उससे थोड़ा कम हैं। पहाड़ों में भी आदमी हर प्रकार से गति कर सकता है। वह आगे-पीछे भी जा सकता है, और ऊपर नीचे भी चढ़ सकता है।

आत्मारूपी आकाश के उपलब्ध होते ही कुंडलिनी पक्षी उसमें उड़ान भरने लग जाता है

शरीरविज्ञान दर्शन या अन्य अद्वैतशास्त्र से जब मन में आकाश जैसी शून्यता छाने लगती है, तब कुंडलिनी उसमें एक उड़ते हुए पक्षी की तरह अनुभव होने लगती है। साथ में आकाश में उड़ने के जैसा आनन्द तो होता ही है। उस समय आत्मा तो बैकग्राउंड के अंधकारमयी व शून्य आकाश की तरह होती है, केवल कुंडलिनी ही प्रकाशरूप पक्षी की तरह अभिव्यक्त होती है। इसलिए शास्त्रों में कुंडलिनी को आत्मा या पक्षी के रूप में माना गया है। कुंडलिनी आत्मा का संपीडित या लघु रूप है। जैसे साँप कुंडलिनी मार कर छोटा हो जाता है, उसी तरह आत्मा भी। इसीलिए इसे कुंडलिनी कहते हैं। जब कुंडलिनी आत्मा से जुड़कर सर्वव्यापक हो जाती है, तब उसे ही सांप का कुंडलिनी खोलकर अपने असली और विस्तृत रूप में आना कहते हैं। इसी तरह, आकाश से संबंध होने पर भी मन में आकाश जैसी अद्वैतमयी शून्यता खुद ही छाने लगती है। उससे भी वही कुंडलिनी प्रभाव पैदा होता है, जिससे मन उसी तरह आनन्द से भर जाता है। इसीलिए उपरोक्तानुसार, शास्त्रों में योगियों को आसमान में उड़ते हुए दिखाया गया है, तथा विमानों का बहुतायत में वर्णन किया गया है।

कुंडलिनी ही भ्रमित आत्मा का दीपक है

अद्वैत के ध्यान से मन आकाश की तरह शून्य व निश्चल तो बन जाता है, पर उसका आंनद व प्रकाश गायब हो जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि आनन्द व प्रकाश मन के विचारों के साथ होते है। ये विचारों के साथ ही गायब हो जाते हैं। इन्हीं की भरपाई करने के लिए ही एकाकी चित्र रूपी कुंडलिनी मन में क्रियाशील हो जाती है। यह दीपक की तरह काम करती है, और विचारशून्य मन या आत्मा को आनंदपूर्ण प्रकाश से भर देती है। लम्बे समय के कुंडलिनी योग अभ्यास से एक समय ऐसा भी आता है जब आत्मा का अपना खुद का नैसर्गिक प्रकाश पैदा हो जाता है। फिर तो वहाँ कुंडलिनी दीपक की रौशनी भी फीकी पड़ जाती है। पर ऐसा साधना के सबसे ऊंचे व अंतिम स्तर पर ही होता है। इसे ही असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं।

कुंडलिनी ही आत्मा की भौतिक प्रतिनिधि है

आत्मा तो आकाश की तरह शून्य होती ही, पर उसके विपरीत चेतनापूर्ण होती है, पर दुनियादारी में रहने से उस पर माया या भ्रम का दुष्प्रभाव पड़ता है। इससे उसका चेतन प्रकाश गायब हो जाता है। जब आदमी अद्वैत भावना से आत्मा में लौटने का प्रयास करता है, तो वहाँ कुंडलिनी प्रकट हो जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अद्वैत से उत्पन्न निर्विचार अवस्था से मस्तिष्क में न्यूरोनल एनर्जी इकट्ठी हो जाती है, जो आमतौर के विचारों को बनाती है। उस न्यूरोनल एनर्जी को बाहर निकलने का आसान रास्ता कुंडलिनी के रूप में ही नजर आता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उसके लिए मस्तिष्क को निश्चय नहीं करना पड़ता है कि कुंडलिनी चित्र कैसा है, क्या इसके बारे में विचार करना चाहिए, इसको विचारने के क्या परिणाम होंगे आदि। इसकी वजह है, कुंडलिनी चित्र से लम्बे समय से संबंध बना होना। यह संबंध प्रेम आदि के रूप में प्राकृतिक भी हो सकता है, और योग आदि के रूप में बनावटी भी। वही कुंडलिनी चित्र आत्मा को उसके प्रकाश, चेतना आदि के स्वाभाविक गुण प्रदान करता है। उस समय यिन के रूप में आत्मा होती है, और यांग के रूप में कुंडलिनी। हालांकि ऐसा हमें सांसारिक भ्रम के कारण लगता है। असल में तो यिन के रूप में कुंडलिनी और यांग के रूप में आत्मा होती है। इन दोनों का जुड़ाव ही शिवविवाह है। जब यह पूरा हो जाता है, तो यही कुंडलिनी जागरण या आत्मसाक्षात्कार कहलाता है। उस समय कुंडलिनी की चेतना पूरे आत्म-आकाश में छा जाती है, और दोनों पूरी तरह एक-दूसरे में घुले-मिले प्रतीत होते हैं। कुंडलिनी को आत्मा का भौतिक प्रतिनिधि इसीलिए कहा जा रहा है, क्योंकि वह बेशक एक सीमित व एकाकी चित्र के रूप में है, और भौतिक बाध्यताओं से बंधी है, पर उसमें आत्मा के सभी चेतनामयी गुण विद्यमान हैं। वही आत्मा को उसके अपने असली चेतनामयी गुणों की याद दिलाती है। पर ऐसा अभ्यास से होता है। इसीलिए कुंडलिनी को योग, प्रेम आदि से हमेशा बना कर रखा जाता है।

कुंडलिनी के बिना विपश्यना या साक्षीभाव साधना या संन्यास योग करना कठिन व अव्यवहारिक प्रतीत होता है

कर्मयोग

दोस्तों, आजकल मेरे मानस पटल पर गीता के बारे में नित नए रहस्य उजागर हो रहे हैं। दरअसल पूरी गीता एक कुंडलिनी शास्त्र ही है। इसे युद्ध के मैदान में सुनाया गया था, इसीलिए इसमें विस्तार न होकर प्रेक्टिकल बिंदु ही हैं। व्यावहारिकता के कारण ही इसमें एक ही बात कई बार और कई तरीकों से बताई लगती है। मेरा **शरीरविज्ञान दर्शन अब मुझे पूरी तरह गीता पर आधारित लगता है।** हालांकि मैंने इसे स्वतंत्र रूप से, बिना किसी की नकल किए और अपने अनुभव से बनाया था।

कुंडलिनी ही सभी प्रकार की योग साधनाओं व सिद्धियों के मूल में स्थित है

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः। सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥५-७॥
अपने मन को वश में करने वाला, जितेन्द्रिय, विशुद्ध अन्तःकरण वाला और सभी प्राणियों को अपना आत्मरूप मानने वाला कर्मयोगी कर्म करता हुआ भी उससे लिप्त नहीं होता है॥7॥
उपरोक्त सभी गुण अद्वैत के साथ स्वयं ही रहते हैं। **अद्वैत कुंडलिनी के साथ रहता है।** इसलिए इस श्लोक के मूल में कुंडलिनी ही है।

आजकल के वैज्ञानिक व तर्कपूर्ण युग में हरेक आध्यात्मिक उक्ति का वैज्ञानिक व तर्कपूर्ण दार्शनिक आधार होना जरूरी है

नैव किंचित्करोमीतियुक्तो मन्येत तत्त्ववित्।पश्यञ्श्रृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्॥५-८॥
तत्व को जानने वाला यह माने कि मैं कुछ भी नहीं करता हूँ । देखते हुए, सुनते हुए, स्पर्श करते हुए, सूँघते हुए, खाते हुए, चलते हुए, सोते हुए, साँस लेते हुए ॥8॥
सीधे तौर पर ऐसा मानना आसान नहीं है कि मैं कुछ नहीं कर रहा हूं। ऐसा मानने के लिए कोई वैज्ञानिक या दार्शनिक आधार तो होना ही चाहिये। ऐसा ही उत्तम आधार शरीरविज्ञान दर्शन ने प्रदान किया है। किसी दिव्य प्रेरणा से इसे बनाने की नींव मैंने तब डाली थी, जब क्षणिक व स्वप्नकालीन आत्मज्ञान के बहकावे में आकर मैं अपने काम से जी चुराने लग गया था। मैं अनायास ही संन्यास योग की तरफ बढ़ा जा रहा था। इससे मैं आसपास के संबंधित लोगों से भौतिक रूप से पिछड़ने लग गया था। इस दर्शन ने मुझे दुनियादारी की तरफ धकेला और मेरे कर्मयोग को सफल किया। इसमें वैज्ञानिक तौर पर सिद्ध किया गया है कि **जो कुछ भी आदमी कर रहा है, वह सब हमारे शरीर में भी वैसा ही हो रहा है। जब हमारे शरीर में रहने वाले देहपुरुष अपने को कर्ता नहीं मानते तो हम अपने को कर्ता क्यों मानें।** आदमी अपने अवचेतन मन के दायरे में समझे कि उस दार्शनिक पुस्तक के सूक्ष्म रूप की वर्षा हर समय उस पर हो रही है। अवचेतन मन से मैं इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि प्रत्यक्ष या चेतन मन तो दुनियादारी के काम में व्यस्त रहता है, उसे क्यों परेशान करना। उससे त्वरित व चमत्कारिक लाभ होते मैंने स्वयं देखा है। ऐसा चिंतन करते ही आनन्द के साथ कुंडलिनी प्रकट हो जाती है, और आदमी रिलेक्स फील करता है। इसका मतलब है कि इस श्लोक के आधार में भी कुंडलिनी ही है। इससे हम यह भी समझ सकते हैं कि दरअसल आदमी के मन की कुंडलिनी ही कर्ता और भोक्ता है, आदमी खुद नहीं।

यदि शरीरविज्ञान दर्शन के ऐसे चिंतन से मस्तिष्क में दबाव व जड़त्व सा लगे, तो दूसरा तरीका आजमाना चाहिए। इसमें शरीरविज्ञान दर्शन की ओर जरा सा ध्यान दिया जाता है, फिर समयानुसार हरेक परिस्थिति को इसका आशीर्वाद समझ कर स्वीकार कर लेना चाहिए, और प्रसन्न रहना चाहिए।।

सांख्ययोग या संन्यास योग विपासना या विटनेसिंग के समकक्ष है और कर्मयोग कुंडलिनी योग के समकक्ष

संन्यासः कर्मयोगश्चनिःश्रेयसकरावुभौ। तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते॥५-२॥

श्री कृष्ण भगवान कहते हैं- कर्म संन्यास और कर्मयोग- ये दोनों ही परम कल्याण के कराने वाले हैं, पर इन दोनों में भी कर्मयोग कर्म-संन्यास से (करने में सुगम होने के कारण) श्रेष्ठ है॥2॥
कर्मयोग व कुंडलिनी योग, दोनों में कुंडलिनी अधिक प्रभावी होती है। इसमें संसार में परिस्थितियों के अनुसार प्रवृत्त रहते हुए कुंडलिनी को ज्यादा अहमियत दी जाती है। यह श्रेष्ठ है, क्योंकि इससे दुनियादारी भी अच्छे से चलती है। **बहुत से सर्वोत्तम प्रकार के राजा व प्रशासक कर्मयोगी हुए हैं।** संन्यास योग में विचारों के प्रति साक्षीभाव रखकर

उन्हें विलीन किया जाता है। अधिकांशतः बुद्धिस्ट लोग इसी तरीके को अपनाते हैं, इसीलिए वे दुनिया से दूर रहकर मठों आदि में अपना ज्यादातर समय बिताते हैं। कई आधुनिक लोग भी अपनी थकान मिटाने के लिए इस तरीके का अल्पकालिक प्रयोग करते हैं।

यह श्लोक अर्जुन जैसे उन लोगों को देखते हुए बना था, जो अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को छोड़कर साक्षीभाव साधना के नाम पर अकर्मक बनना चाहते थे। इस श्लोक ने ऐसे लोगों की आंख खोल दी। उन्हें इस श्लोक के माध्यम से बताया कि **सबसे ज्यादा आध्यात्मिक लाभ कर्म करने से प्राप्त होता है, ज्ञानसाधना के नाम पर कर्म छोड़ने से नहीं।** ज्ञानसाधना इतनी आसान नहीँ है। हर कोई बुद्ध नहीं बन सकता। यदि ज्ञानसाधना असफल हो जाए तो नरकप्राप्ति की जो बात शास्त्रों में कही गई है, वह सत्य प्रतीत होती है। वैसे तो कर्मयोग असफल नहीं होता। पर यदि किसी कुचक्र से विरले मामले में हो भी जाए तो भी कम से कम स्वर्ग मिलने की संभावना तो है ही, क्योंकि इसमें आदमी ने अच्छे कर्म किए होते हैं।

जो आध्यात्मिक लाभ विटनेसिंग साधना से प्राप्त होता है, वही कुंडलिनी साधना से भी प्राप्त होता है

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानंतद्योगैरपि गम्यते। एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स: पश्यति॥५-५॥
ज्ञानयोगियों द्वारा जो गति प्राप्त की जाती है, कर्मयोगियों द्वारा भी वही प्राप्त की जाती है इसलिए जो पुरुष ज्ञानयोग और कर्मयोग को (फल से) एक देखता है, वही ठीक देखता है॥5॥
इस श्लोक का मतलब है कि जो मुक्ति संन्यास योग या विपश्यना से मिलती है, वही कर्मयोग या कुंडलिनी योग से भी मिलती है। मुक्ति से यहाँ तात्पर्य बन्धनकारी विचारों से मुक्ति है। केवल यही आभासिक अंतर है कि विपश्यना या विटनेसिंग से वह मुक्ति ज्यादा प्रतीत होती है। क्योंकि **विपश्यना-योगी के अंदर व बाहर, कहीं भी विचारों का तूफान नहीं होता, एक शांत झील की तरह। जबकि कर्मयोगी, समुद्र की तरह बाहर से तूफानी, पर अंदर से शांत होते हैं।** यह श्लोक गीता का सर्वोत्तम श्लोक है। अध्यात्म का सम्पूर्ण रहस्य इसमें छिपा है। इसे मैंने खुद अनुभव किया है। कर्मयोग से ही मैं सांख्ययोग तक पहुंचा। यह अलग बात है कि मैं अब भी कर्मयोग को ही महत्त्व देता हूँ। साधारण लोगों को दोनों प्रकार के योग अलग-अलग दिखाई देते हैं, पर दोनों अंदर से एकसमान है, और एकसमान फल प्रदान करते हैं। कर्मयोग ज्यादा प्रभावी है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो विचारों की आनन्दमयी शून्यता संन्यास योग से प्राप्त होती है, वही कर्मयोग से भी प्राप्त होती है। इन दोनों में कर्मयोग की अतिरिक्त विशेषता यह है कि बेशक इसमें अंदर से मन की आनंदमयी व कुंडलिनीमयी शून्यता हो, पर बाहर से दुनियादारी के सभी काम सर्वोत्तम ढंग से होते रहते हैं। यह समुद्र की प्रकृति से मेल खाता है, बाहर से तूफानी, जबकि अंदर से शांत।

कई लोग कर्मयोग और संन्यास योग, दोनों के मिश्रण का प्रयोग करते हैं। वे काम के मौकों पर कर्मयोग पर ज्यादा ध्यान देते हैं, और काम के अभाव में संन्यास योग पर। मैंने भी इस तरीके को आजमाया था। पर मुझे लगता है कि पूर्ण कर्मयोग ही सर्वश्रेष्ठ है। वास्तव में काम की कमी कभी हो ही नहीँ सकती।

दुनियादारी में उलझे व्यक्ति के लिए विटनेसिंग साधना के बजाय कुंडलिनी साधना करना अधिक आसान है

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमासुमयोगतः। योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्मनचिरेणाधिगच्छति॥५-६॥

परन्तु हे वीर अर्जुन! कर्मयोग के बिना (कर्म-) संन्यास कठिन है और कर्मयोग में स्थित मुनि परब्रह्म को शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है॥6॥
इस श्लोक का अभिप्राय है कि **जब कर्मयोग या कुंडलिनी योग से कुंडलिनी जागरण हो जाता है, तभी हम विचारों का असली संन्यास कर सकते हैं।** यदि कुन्डलिनी क्रियाशील भी बनी रहे, तो भी काम चल सकता है। कुंडलिनी जागरण दुनियादारी का उच्चतम स्तर है। इससे मन दुनिया से पूरी तरह तृप्त और संतुष्ट हो जाता है। इसलिए इसके बाद विचारों का त्याग करना बहुत आसान या यूँ कह सकते हैं कि स्वचालित या स्वाभाविक ही हो जाता है। इसके बिना, मन दुनिया में ही रमा रहना चाहता है, क्योंकि उसे इसका पूर्ण रस नहीँ मिला होता है। इसीलिए तो बहुत से बौद्ध भिक्षु व अन्य धर्मों के संन्यासी दुनिया से दूर रहकर एकांत में साधना करना अधिक पसंद करते हैं। इसीसे वे अपने मन को दुनिया के प्रलोभन से बचाकर रख पाते हैं। इससे विपश्यना या विटनेसिंग या संन्यास योग या सांख्ययोग के लिए कुंडलिनी क्रियाशीलता व कुंडलिनी जागरण के महत्त्व का साफ पता चलता है। **विपासना, विपश्यना, विटनेसिंग, साक्षीभाव, संन्यास योग, सांख्ययोग, ज्ञानयोग, ये सभी पर्यायवाची शब्द हैं।**

श्रीमद्भागवत गीता की विस्मयकारी व्यावहारिकता

मुझे लगता है कि गीता के आध्यात्मिक सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप से अपने दैनिक जीवन में लागू किया जाना चाहिए, अन्यथा मात्र इसे पढ़ने या इसके दैनिक जप करने से कोई विशेष फायदा प्रतीत नहीं होता। यदि कोई व्यक्ति कर्मयोग के रहस्य को व्यावहारिक रूप से समझता है, तो उसे बहुत ज्यादा पढ़ने की जरूरत नहीं है।

कुन्डलिनी ही मन के फालतू शोर को शांत करने के लिए सर्वोत्तम हथियार के रूप में

मन के बकवास विचारों की शांति के लिए कुन्डलिनी ध्यान एक सर्वोत्तम तरीका है

मित्रो, मन के बकवास विचारों को शांत करने के लिए अपने अपने नुस्खे बताते हैं लोग। मुझे तो कुंडलिनी ध्यान सबसे अच्छा तरीका लगता है। एकदम से मन का शोर शांत हो जाता है इससे। यह मैं पिछली कई पोस्टों में लगातार वर्णन करता आ रहा हूँ। इसे मैंने कुंडलिनी चक्रों पर प्राण और अपान की आपसी टक्कर का नाम दिया है। यह मानसिक विचारों और आधार चक्रों का एक साथ ध्यान करने जैसा है। पिछली पोस्ट में मैं बता रहा था कि साँस रोकने वाले प्राणायाम से स्ट्रोक और दिल के रोगों से बचाव हो सकता है। मेरा अनुमान सही निकला। मैं इस हफ्ते एक ऑनलाइन आध्यात्मिक बैठक में शामिल हुआ। उसमें यह रिसर्च दिखा रहे थे जिसके अनुसार श्वास व्यायाम से व साँस भरते समय पूरी छाती फैलाने से रक्तचाप कम हो जाता है। हालाँकि मुझे लगता है कि साँस रोकने से रक्तचाप ज्यादा नीचे गिरता है। जब मैं खाली श्वास व्यायाम करता था, तब मुझे इसका अहसास नहीं हुआ, पर जब प्राणायाम साँस रोककर करने लगा तो मेरा रक्तचाप 70-100 तक गिर गया। सामान्य स्तर 80-120 होता है। जब मैंने बैठक में विशेषज्ञ से पूछा कि क्या ऐसा हो सकता है, तो उन्होंने कहा कि इतना नीचे गिरना तो सामान्य है, पर बहुत ज्यादा नहीं गिरता। बड़ा कुछ बता रहे थे कि रक्तवाहिनी की दीवार में यह रसायन निकलता है, वह अभिक्रिया होती है आदि। मुझे वह ज्यादा समझ नहीं आया। मैं तो काम की बात पकड़ता हूँ। सबसे बड़ी प्रयोगशाला या प्रमाण तो अनुभव ही है। अध्यात्म के क्षेत्र में विज्ञान अनुभव तक ही ज्यादा सीमित रहे, तो ज्यादा अच्छा है। यदि वैज्ञानिक प्रयोग से प्रमाण मिल गया, तो लोग अपने अनुभव के प्रमाण का प्रयोग कम भी कर सकते हैं। मैं वैज्ञानिक प्रयोगों के खिलाफ नहीं हूं, पर यदि कोई किसी बात को सिद्ध करने के लिए अपने अनुभव का हवाला न देकर केवल वैज्ञानिक प्रयोग का हवाला दे, तो उसमें जीवंतता नहीं दिखाई देती। जिसको योग के महत्त्व का पता है, वह बिना वैज्ञानिक प्रयोग के व केवल औरों के अनुभव को प्रमाण मानकर खुद भी उसको अनुभव करने की कोशिश करेगा। फिर मैं बता रहा था कि बड़े पैमाने पर जागृति प्राप्त करने के लिए योगा से भरी हुई वैदिक जीवन परंपरा को अपनाना कितना जरूरी है। एक न एक दिन सभी को जागृत होना पड़ेगा। कब तक सच्चाई को नजरअंदाज करते रहेंगे। बिल्ली के पंजे में फंसा कबूतर अगर आंख बंद कर दे, तो बिल्ली भाग नहीं जाती।

मस्तिष्क के सभी भाव प्राण के रूप में कुन्डलिनी रूपी भगवान को अर्पित हो जाते हैं

जो गीता में भगवान यह कहते हैं कि अपने सभी क्लेश, विचार, सुख, दुख मुझे अर्पण कर। यह कुंडलिनी योग की तरफ इशारा है। भगवान इसमें कुंडलिनी है। प्राण अपान की टक्कर में जो मस्तिष्क का विचार-कचरा व ऊर्जा कुंडलिनी पर डाला जाता है, उससे कुंडलिनी चमकती है। यही वह अर्पण करना या हवन करना है। प्राण को अपान में हवन करने वाला गीता वाला श्लोक भी यही इशारा करता है। प्राण वाला मस्तिष्क-विचार निचले चक्रों पर स्थित अपान वाली कुंडलनी पर डाला जाता है। उससे कुंडलिनी आग भड़कती है। प्राण का प्राण में हवन भी वहीँ लिखा है। उसमें मन में सभी कुछ प्राण है। भगवान के रूप में कुन्डलिनी हृदय चक्र पर है। मन और हृदय दोनों ही स्थानों पर प्राण है। मैंने पिछली पोस्ट में कहा था कि चक्र के ऊपर कुंडलिनी का ज्योतिर्लिंग और शिवबिन्दु के साथ ध्यान करना चाहिए। शायद इसीलिए उन स्थानों का नाम चक्र पड़ा हो, क्योंकि जब पीठ वाले चक्र पर ज्योतिर्लिंग या शिवलिंग का ध्यान करते हैं, तो उसके काऊंटरपार्ट अगले चक्र पर शिवबिन्दु प्रकट हो जाता है। चक्र खोखले पहिए को भी कहते हैं।

कुन्डलिनी से ही एक आदर्श जागृति शुरु होनी चाहिये, और कुन्डलिनी पर ही खत्म

मैं यह भी बता रहा था कि यदि ऊर्जा की नदी मूलाधार से मस्तिष्क में पहुंचती है, और उस समय मस्तिष्क में कुंडलिनी प्रभावी न हो, तो वहां के विचार या चित्र बड़ी स्पष्टता से कौंधते हैं, पर जागृत नहीं होते। पर यदि वहाँ ऊर्जा काफी अधिक और ज्यादा समय के लिए बनी रहे, तो जागृति भी हो जाती है। उसमें सभी चीजों के साथ अपना पूर्ण जुड़ाव महसूस होता है, जिसे पूर्ण अद्वैत कहते हैं। पर कोई विशेष चित्र पहचान में नहीं आता, जिससे पूर्ण जुड़ाव शुरु हुआ हो। वह इसलिए भी पहचान में नहीं आता क्योंकि आदमी ने कुंडलिनी के रूप में विशेष मानसिक चित्र साधना के लिए बनाया ही नहीं होता है। मतलब वह कुंडलनी साधना कर ही नहीं रहा होता है। बेशक आध्यात्मिकता को अभिव्यक्त करने के लिए बाद में मन में कुन्डलिनी मजबूत हो जाती है, पर वह कामचलाऊ व अस्थायी लगती है मुझे। स्थायी और असली कुन्डलिनी तो वही लगती है मुझे, जिससे मस्तिष्क में जागृति शुरु होती हुई, और जिसमें खत्म होती हुई दिखती है। उस कुन्डलिनी के स्मरण से वह शुरु होती है। फिर जागृति खत्म होते ही कुन्डलिनी मस्तिष्क से नीचे उतरकर आज्ञाचक्र पर आते दिखती है, और वहाँ से नीचे अनाहत चक्र पर। फिर उसे सभी चक्रों पर

आसानी से घुमा सकते हैं। वैसे तो हर प्रकार की जागृति फायदेमंद है, पर मैं कुन्डलिनी से शुरु होने वाली जागृति को सर्वोत्तम कहूँगा।

कुन्डलिनी ऊर्जा का प्रवाह बारी-2 से शरीर के दाएं, बाएं और मध्य भाग में चलता रहता है, नथुनों से बहने वाले श्वास की तरह

योगासन इसलिए किए जाते हैं ताकि कहीं न कहीं कुंडलिनी एनर्जी पकड़ में आ जाए। यह ऊर्जा पूरे शरीर में है। पर यह कभी किसी चक्र पर तो कभी किसी दूसरे चक्र पर ज्यादा प्रभावी होती है। इसलिए पूरे शरीर के जोड़ों के बैंड या मोड़ आदि से यह कहीं न कहीं पकड़ में आ ही जाती है। मुझे इस हफ्ते नया प्रेक्टिकल अनुभव मिला है। ये जो बारी बारी से शरीर के बाएं और दाएं, दोनों किनारों का योगासन किया जाता है, वह बाईं और दाईं मुख्य नाड़ी से ऊर्जा को ऊपर चढ़ाने के लिए किया जाता है। इससे ऊर्जा संतुलित होकर खुद ही बीच वाली नाड़ी में आ जाती है। सीधे ही ऊर्जा को बीच वाली नाड़ी से चढ़ाना कठिन होता है। बाईं नाड़ी को इड़ा, दाईं को पिंगला और बीच वाली नाड़ी को सुषुम्ना कहते हैं। उदाहरण के लिए, जब मैं शलभासन को बाईं भुजा और दायाँ पैर उठाकर करता हूँ, उस समय कुन्डलिनी ऊर्जा इड़ा नाड़ी से ऊपर चढ़कर बाएँ मस्तिष्क को जाती है। वहां से उसे मैं आज्ञा चक्र की ओर तिरछा रीडायरेक्ट करता हूँ। इससे वह नीचे उतरकर और फिर मूलाधार से ऊपर चढ़कर सुषुम्ना में आने की कोशिश करती है। जब उसे दाईं भुजा और बायाँ पैर उठाकर करता हूँ, तब पिंगला से ऊपर चढ़ कर दाएँ मस्तिष्क को जाती है। उसे रीडायरेक्ट करने से लगभग वैसा ही होता है। एक हल्की सी अवेयरनेस आज्ञा चक्र पर भी रखता हूँ। उससे वह ऊर्जा केंद्रीय रेखा में आने की कोशिश करती है। आज्ञा चक्र नाम ही इसलिए पड़ा है क्योंकि यह कुंडलिनी शक्ति को सीधा बीच वाली नाड़ी में चलने की आज्ञा देता है। साथ में, मूलाधार संकुचन पर भी हल्की सी मानसिक नजर रखता हूँ। फिर ऊर्जा को जाने देता हूँ अपनी मर्जी से, वह जहाँ जाना चाहे। मैं देखता हूँ कि वह फिर बड़ी विवेक बुद्धि से खुद ही वहाँ जाती है, जहाँ ऊर्जा की कमी है। वह कमी पूरा होने पर उसके विपरीत भाग में चली जाती है, ताकि ऊर्जा संतुलन बना रहे। फिर बीच वाले चैनल में आ जाती है। वहाँ से वह शरीर के दोनों तरफ के हिस्सों को कवर करने लगती है। ये सभी पीठ व मस्तिष्क के हिस्से होते हैं। वह किसी पाईप में पानी की गश की आवाज की तरह चलती है। इसीलिए नाड़ी नाम भी नदी से ही बना है। शरीर के अगले भाग के हिस्से तब कवर होते हैं, यदि मैं हल्का सा ध्यान तालू को छूती हुई उलटी जीभ पर भी रखूं। तब वह आगे की नाड़ी से नीचे उतरकर नाड़ी लूप में घूमने लगती है।

साँस भरकर रोकने से कुन्डलिनी ऊर्जा पीठ में ऊपर चढ़ती है

योगासन इसीलिए बने हैं, ताकि उनसे नाड़ियों में बहती ऊर्जा का अनुभव होए, तथा उस बहती ऊर्जा से पूरा शरीर सिंचित होकर स्वस्थ रह सके। कर्मयोगी की ऊर्जा तो काम करते हुए खुद भी बहती रहती है, हालाँकि योगा द्वारा बहाव जितनी नहीं। इसकी सख्त जरूरत तो ध्यानयोगी को थी, क्योंकि उन्हें ध्यान लगाने के लिए ज्यादातर समय बैठे रहना पड़ता था। वैसे यह स्पष्ट है कि यदि भौतिक रूप से क्रियाशील रहने वाले लोग भी योगा करे, तो उन्हें भी बहुत लाभ होगा। मैंने इस हफ्ते नई बात नोट की। सांस भर कर रोकने से कुण्डलिनी ऊर्जा अच्छे से पीठ से ऊपर चढ़ रही थी, और वह मस्तिष्क में गशिंग पैदा कर रही थी। यही बात उपरोक्त बैठक में भी बता रहे थे कि साँस भरते हुए सेरेब्रोस्पाइनल फ्लुड रीढ़ की हड्डी में ऊपर चढ़ता है। कई वैज्ञानिक प्रकार के लोग बोलते हैं कि कुंडलनी ऊर्जा इसी के थ्रू जाती है। पर संशय होता है, क्योंकि कुंडलनी ऊर्जा तो एकदम से ऊपर चढ़ती है, पर सीएसएफ धीरे धीरे चलता है। हो सकता है कि जब वह मस्तिष्क में पहुंच जाता हो, तभी ऊर्जा के ऊपर चढ़ने का आभास होता हो। इसीलिए तो कुछ समय तक श्वास या अन्य योग अभ्यास करने के बाद ही ऊर्जा ऊपर चढ़ती महसूस होती है, एकदम से नहीं। इसीलिए सांस रोककर योग करने को कहते हैं। हालांकि इसके लिए शायद पहले सांस लेते हुए योग करने का काफी लम्बा अभ्यास का अनुभव चाहिए होता है। सांस भरकर रोककर दरअसल पिछले मणिपुर चक्र में गड्ढा बनने से ऊर्जा के प्रवाह की दिशा पीठ में ऊपर की ओर होती है। फिर थोड़े ध्यान से वह ऊर्जा गति पकड़ती है। सांस लेने व छोड़ते रहने से ऊर्जा अपनी दिशा लगातार बदलती रहती है, इससे ऊर्जा को पर्याप्त वेग नहीं मिल पाता। सांस भरने से वह ऊपर की ओर चढ़ती है, और सांस छोड़ते हुए नीचे की तरफ उतरती है।

बाइकिंग कुन्डलिनी योगा

मैं इस हफ्ते एक दिन साईकिल पर अपने काम गया। मैंने महसूस किया कि साईकिल की सीट का अगला नुकीला हिस्सा सिद्धासन में पैर कि एड़ी का काम करता है। जब मैं फिसल कर आगे को होता था, तब मेरी कुण्डलिनी ऊर्जा लूप में घूमने लगती थी। इसलिए मोटरसाइकिल पर भी सबसे आगे, फ्यूल टैंक से सट कर बैठने को कहा जाता है। यह मूलाधार पर तेज दबाव के कारण मोटरसाइकिल की सवारी को सुखद बनाता है। दरअसल प्राण तो इधर उधर के

दृश्य मस्तिष्क में पड़ने से पहले ही सक्रिय था। मेरे सिर पर लगे हेलमेट ने उसे और ज्यादा सक्रिय कर दिया था। सीट के द्वारा मूलाधार पर दबाव पड़ने से अपान भी सक्रिय हो गया। मस्तिष्क या प्राण पर तो पहले से ही ध्यान था। मूलाधार पर संवेदना से अपान पर भी ध्यान चला गया। अपान पीठ से ऊपर चढ़ने लगा, तो प्राण आगे से नीचे उतरने लगा। कुण्डलिनी चक्र पूरा होकर प्राण और अपान का मिलन भी हुआ। इससे संगम हुआ और कुण्डलिनी लाभ मिला। बाइकिंग कुन्डलिनी योगा पर मैंने एक पहले भी पोस्ट लिखी है। बाइसाइकिल खासकर स्पोर्ट्स वाली और हल्की बाईसाईकिल से मूलाधार चक्र बहुत बढ़िया क्रियाशील होता है। बाइकिंग के बाद जो कई दिन तक आनन्द व हल्कापन सा छाया रहता है, वह इसी वजह से होता है। ध्यान रहे कि साइक्लिंग वाले दिन न ज्यादा, और न कम खाएं। योग के लिए भी ऐसा ही कहा जाता है। वास्तव में ज्यादा पेट भरने से साँसें भी ढंग से नहीं चलतीं, और कुन्डलिनी ऊर्जा भी ढंग से नहीं घूमती। कम खाने से कमजोरी आ सकती है। पेट पर बोझ महसूस नहीं होना चाहिए। मैंने तो यहाँ तक देखा है कि संतुलित मात्रा में खाने के बाद यदि आधा रोटी या दो चार चम्मच चावल भी ज्यादा खा लो, तो भी पेट पर बोझ आ जाता है। इसलिए एकबार भोजन से तृप्ति का एहसास होने पर उठ जाना चाहिए। बाइकिंग योगा जैसा लाभ हमेशा लिया जा सकता है, यदि आदमी को मूलाधार नियंत्रित करने में महारत हासिल हो जाए। यदि केवल मूलाधार को ही ऊपर की तरफ संकुचित करेंगे, तो थकान ज्यादा महसूस होती है। यदि आगे से पीछे तक के मूलाधार क्षेत्र को हल्का सा संकुचित करेंगे तो उसमें मूलाधार भी शामिल हो जाता है, स्वाधिष्ठान चक्र भी, और थकान भी कम महसूस होती है। प्रभाव भी ज्यादा पैदा होगा। निचले क्षेत्र के किसी भी भाग का संकुचन हो, तो भी काम कर जाता है। पर ध्यान रहे, कोई खास दिमागी काम करते हुए जैसे ड्राईविंग या मशीनरी ऑपरेट करते समय ध्यान मस्तिष्क पर ही रहना चाहिए। इससे ऐसा होगा कि मस्तिष्क की अतिरिक्त ऊर्जा नीचे चली जाएगी, जिससे फालतू विचारों से निजात मिलेगी और कार्यकुशलता में इजाफा होगा। यदि पूरा ध्यान नीचे जाने दिया, तो कार्यकुशलता में गिरावट आ सकती है। मैं देखता हूँ कि अविभाज्य प्राणों का विभाजन भी कितनी वैज्ञानिकता से किया गया है। यदि मस्तिष्क ज्यादा क्रियाशील हो तो प्राण व अपान के मिलान से प्राण के साथ कुंडलिनी अनाहत चक्र पर पहुंच जाती है। इसीलिए प्राणों का क्षेत्र ऊपर से नीचे अनाहत चक्र तक कहा गया है। यदि नीचे के, मूलाधार के आसपास के क्षेत्र ज्यादा क्रियाशील हों, और मस्तिष्क विचारशून्य सा हो, तो दोनों के मिलान से कुंडलनी नाभि चक्र पर स्वाधिष्ठान चक्र पर अभिव्यक्त होती है। इसीलिए कहा गया है कि अपान का क्षेत्र नीचे से ऊपर की ओर मणिपुर चक्र तक है। वैसे तो वहाँ समान प्राण का अधिकार बताया गया है, पर वह भी अपान का ही एक हिस्सा लगता है, या वहां अपान प्राण से ज्यादा ताकतवर लगता है। समान नाम ही इसलिए पड़ा है क्योंकि वहां प्राण और अपान का लगभग समान योगदान प्रतीत होता है।

मूलाधार पंप कुन्डलिनी योग का सर्वप्रमुख औजार है

मैंने यह भी नोट किया कि सिर्फ मूलाधार पंप से कुन्डलिनी को आगे के और पीछे के चक्रों पर आसानी से घुमा सकते हैं। पहले कुन्डलिनी मस्तिष्क से हृदय चक्र तक उतरती है। जरूरत के अनुसार चलाए गए मूलाधार पंप से काफी देर वहाँ स्थिर रहती है। फिर वहां से नीचे मणिपुर चक्र को उतरती है। वहाँ भी इसी तरह काफी देर स्थिर रहके वह स्वाधिष्ठान चक्र तक नीचे उतरती है। मैंने महसूस किया कि वह वह वहाँ से सीधे ही पीठ से ऊपर चढ़कर मस्तिष्क में गशिंग पैदा करती है। वैसे कहते हैं कि मूलाधार चक्र से कुन्डलिनी वापिस मुड़ती है। वैसे भी मूलाधार पंप से वह लगातार सक्रिय बना ही रहता है। आज्ञा चक्र पर हल्का ध्यान लगाने से वह गशिंग और भी ज्यादा हो जाती है, और केंद्रीय रेखा में भी आ जाती है। मुझे लगता है वह गशिंग रक्तवाहिनियों में दौड़ रहे रक्त की आवाज होती है। रक्त वाहिनियाँ भी नाड़ी या नदी की तरह होती हैं। वहाँ पर अन्य विचार भी होते हैं, हालाँकि मूलाधार पंप से उनकी ताकत पहले ही कुन्डलिनी को लग चुकी होती है। इसलिए वे कमजोर होते हैं। फिर जब फिर से मूलाधार पंप लगाया जाता है, तो वह कुन्डलिनी फिर मूलाधार चक्र तक पहुंच जाती है, और फिर पीठ से ऊपर चढ़ जाती है। काफी तरोताजा महसूस होता है। इस तरह यह क्रम काफी देर तक चलता है। अब और देखता हूँ कि और आगे क्या होता है। हाँ, फिर थोड़ी देर कुन्डलिनी मस्तिष्क में क्रियाशील रही, मतलब वह सहस्रार चक्र पर आ गई। जब सहस्रार चक्र थक गया तब वह आगे से आज्ञा चक्र को उतर गई। लगभग 5-10 मिनट तक कुन्डलिनी एक चक्र पर रही। जब चक्र लगातार सिकुड़न लगा कर थक जा रहा था, तब कुन्डलिनी अगले चक्र पर आ रही थी। मैं रिवोल्विंग और बैक पीछे को एक्सटेंड होने वाली चेयर पर आराम से अर्धसुषुप्त सी पोजिशन में लेटा था। जरूरत के हिसाब से हिल भी रहा था। जब मैं कोई अन्य काम कर रहा होता था, या उठकर चल रहा होता था, तब कुन्डलिनी एक ही चक्र पर ज्यादा देर ठहर रही थी। ऐसा इसलिए क्योंकि चक्र पर लगातार सिकुड़न न होने से वह चक्र थक नहीं रहा था। 5 मिनट बाद आज्ञा चक्र शिथिल हो गया, और कुन्डलिनी विशुद्धि चक्र को उतर गई। इस बार अगले चक्र के साथ पिछले चक्र भी एकसाथ क्रियाशील हो रहे थे, ऐसा लग रहा था कि एक लाइन से जुड़कर दोनों चक्र एक हो गए थे। चक्र पर

कुन्डलिनी भी ज्यादा स्पष्ट लग रही थी। एक चक्र से दूसरे चक्र को कुन्डलिनी का गमन ज्यादा स्पष्ट अनुभव हो रहा था। शायद ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि कुन्डलिनी के पहले राऊंड से सभी चक्र तरोताजा व अनवरुद्ध हो गए थे। इस बार उल्टी जीभ को तालु से टच करने से कुन्डलिनी विशुद्धि चक्र पर ज्यादा स्पष्ट थी। लगभग 5 मिनट बाद वह अनाहत चक्र को उतर गई। वहाँ वह मूलाधार पम्प के बिना भी बड़ी देर तक स्पष्ट चमक रही थी। चक्र ऐसे तो लगते नहीं मुझे जैसे कोई सीमांकित पहिया हो। मुझे तो सामान्य क्षेत्र के केंद्र का ही भान होता है। जैसे अनाहत चक्र, हृदय के क्षेत्र का लगभग केंद्र। हाँ, कई बार उस क्षेत्र की सिकुड़न से एक बिंदु जैसा जरूर प्रतीत होता है उस क्षेत्र के बिल्कुल केंद्र में, जहाँ सिकुड़न और ऐंठन सबसे ज्यादा और पिनपॉइंटिड सी प्रतीत होती है। शायद इसी बिंदु को चक्र कहते हैं। हालाँकि यह तेज और काफी देर के ध्यान से बनता है। इस पर कुन्डलिनी तेज चमकती है। आमतौर पर तो कुन्डलिनी ध्यान चक्र क्षेत्र में ही होता है, एगजेक्ट चक्र पर नहीं। जैसे रथ के एक हिस्से का पूरा भार उस हिस्से के पहिए पर रहता है, वैसे ही शरीर के एक पूरे चक्र क्षेत्र की ताकत उस क्षेत्र के चक्र में होती है। उसको तन्दरुस्त करके पूरा क्षेत्र तन्दरुस्त हो जाता है। लगभग 5 या 7 मिनट बाद अनाहत चक्र के थकने पर मेरा पेट अंदर को सिकुड़ता है और एक साँस की हल्की गैस्प सी निकलती है। इसके साथ ही कुन्डलिनी मणिपुर या नाभि चक्र पर पहुंच जाती है। वहाँ लगभग 10 मिनट रही। उसके थकने से कुन्डलिनी शक्ति नीचे कहीं उतरती है। उस को थोड़े ध्यान से ढूंढने पर वह स्वाधिष्ठान चक्र पर सैटल हो गई। फिर वह पीठ से सहस्रार को चढ़ने लगी व आगे से उतरकर वहीं पहुंचने लगी। मूलाधार पंप का रोल यहाँ ज्यादा अहम हो गया। गशिंग के साथ वह लगभग 5 मिनट तक सहस्रार व स्वाधिष्ठान चक्र के बीच झूलती रही। फिर वह मूलाधार चक्र पर टिक गई। फिर वह दुबारा सहस्रार में सेटल हो गई। मस्तिष्क में कुन्डलिनी के इलावा अन्य भी हल्के फुल्के विचार रहते हैं। पर कुन्डलिनी ही ज्यादा प्रभावी रहती है, और उनकी शक्ति भी कुन्डलिनी को मिलती रहती है। अन्य चक्रों पर तो केवल कुन्डलिनी ही रहती है। लगभग 5 मिनट सहस्रार में रहकर वह फिर नीचे उतरने लगी। वह इसी क्रम में पहले आज्ञा चक्र को, फिर विशुद्धि चक्र को उतरी। मुझे फिर किसी जरूरी काम से उठना पड़ा। लगभग डेढ़ घण्टे के करीब यह सिलसिला चलता रहा। मैंने यह भी देखा कि जब कुंडलिनी अपने दूसरे और तीसरे दौर में आधार चक्रों में थी, तब एक मामूली सी जननांग सनसनी पैदा हुई थी, जिसमें एक मामूली सा तरल पदार्थ निकलता महसूस हुआ। एकबार मैंने नोट किया कि मस्तिष्क की यादों की झोली से एक आसक्ति से युक्त आदमी का चित्र प्रकट हुआ। वह मूलाधार पंप से भी नीचे नहीं उतर रहा था। कई बार पंप लगाने पड़े। औसत से ज्यादा ऊर्जा खर्च करनी पड़ी। उसके नीचे उतरने से उसकी शक्ति कुन्डलिनी को लग गई और वह चमकने लगी। इसीलिये कहा जाता है कि कुन्डलिनी योग के अभ्यास से पहले काफी समय तक दैनिक जीवन में अनासक्ति व अद्वैत का अभ्यास होना चाहिए। इससे मन के दोष खुद ही खत्म हो जाते हैं। इससे योग करना भी काफी आसान और मनोरंजक हो जाता है। यही बात मैं पिछली पोस्ट में कह रहा था कि सबसे पहले योग प्रशिक्षण लेने के इछुक को मैं शरीरविज्ञान दर्शन पुस्तक पढ़ने की और उसे कुछ सालों तक जीवन में ढालने की सलाह देता हूँ। उससे जब सच्चाई का पता चलता है, तो आदमी खुद ही अपने शौक से कुन्डलिनी योग सीखने लगता है। वह किसी बाध्यता या डर से ऐसा नहीं करता। इससे वह जल्दी और पूरा सीख जाता है। इसलिए कार्य की सफलता में सबसे बड़ा निर्णायक दृष्टिकोण होता है। 90% योग तो इस सकारात्मक दृष्टिकोण से हो जाता है। बाकि का 10% कुंडलिनी योग से पूरा होता है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ, तभी बता रहा हूँ। दरअसल मानवतावादी लाइफस्टाइल व दृष्टिकोण भी नहीं बदलना है। लाइफस्टाइल व दृष्टिकोण तो समसामयिक परिस्थितियों के अनुसार अपनाना ही पड़ता है। केवल यह करना है कि अपनी वर्तमान हालत पर अद्वैत दृष्टिकोण का अतिरिक्त चोला पहनाना है बस। बदलना कुछ नहीं है। आप जैसे हो, बहुत अच्छे हो।

कुन्डलिनी ही बारडो की भयानक अवस्था से बचाती है

आज भी पहले भी वर्णित किए गए एक मित्र द्वारा भेजा गया गीता का श्लोक मेरे दिल को छू गया। मैं उसे यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।
प्रयाणकाले मनसाचलेनभक्त्या युक्तो योगबलेन चैव ।भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥८-१०॥वह भक्ति युक्त पुरुष अन्तकाल में भी योगबल से भृकुटी के मध्य में प्राण को अच्छी प्रकार स्थापित करके, फिर निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस दिव्य रूप परम पुरुष परमात्मा को ही प्राप्त होता है॥10॥इसका अर्थ मुझे यही लगता है, जो मैंने ऊपर वर्णित किया है। मस्तिष्क के विचारों पर ध्यान के साथ भौंहों के बीचोंबीच स्थित आज्ञाचक्र पर भी ध्यान लगने दो। इससे प्राण केंद्रीय नाड़ी लूप में चलने लगता है, और मस्तिष्क में फालतू विचारों का स्थान कुन्डलिनी ले लेती है। प्राण के साथ कुंडलिनी भी होती है। केंद्रीय चैनल में, कुंडलिनी हमेशा प्राण के साथ रहती है। क्योंकि केंद्रीय चैनल अद्वैत चैनल है, और कुंडलिनी हमेशा अद्वैत के साथ होती है। कुंडलिनी ही तो परमात्मा तक ले जाती है। मुझे लगता है कि हर कोई परमात्मा तक पहुंच सकता है, पर ज्यादातर लोग मृत्यु के बाद के अंधेरे से

घबराकर जल्दी ही नया शरीर धारण कर लेते हैं। हालाँकि अच्छा बुरा शरीर उन्हें अपने कर्मों के अनुसार मिलता है। शरीर के चुनाव में शायद उनकी मर्जी नहीं चलती। पर कुंडलिनी योगी को कुंडलिनी के प्रकाश से सहारा मिलता है। इसलिए वह लंबे समय तक परमात्मा में मिलने के लिए प्रतीक्षा कर सकता है। बुद्धिस्ट लोग भी लगभग ऐसा ही मानते हैं। वे मृत्यु के बाद की डरावनी अवस्था को बारडो कहते हैं।

कुन्डलिनी डीएनए को भी रूपांतरित कर देती है

मुझे लगता है कि कुंडलिनी आदमी का डीएनए भी रूपांतरित कर देती है। कुंडलिनी जागरण से ऐसा ज्यादा होता है। यदि मन के विचारों को नीचे उतारा जाए तो वे नीचे के सभी चक्रों पर कुंडलिनी में रूपांतरित हो जाते हैं। वैसे भी शरीर के हरेक सेल में दिमाग होता है। इन बातों की ओर वैज्ञानिक प्रयोग भी कुछ इशारा करते हैं।

कुंडलिनी योग और शून्य आकाश~ आम मिथक का पर्दाफाश

कुंडलिनी तंत्र में चित्तवृत्तिनिरोध मूल धयेय न होने से यह पतंजलि योग से थोड़ा भिन्न प्रतीत होता है।

मित्रो, पतंजलि ने कहा है, योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। इसका शाब्दिक अर्थ है,"योग चित्त या मन की लहरों या विचारों को रोकना है"। इसका मतलब है कि पतंजलि ने मन को शून्य करके,अर्थात विपासना से ही जागरण को प्राप्त किया होगा। उन्होंने अकस्मात कुंडलिनी जागरण प्राप्त नहीं किया होगा। हुआ क्या कि निरंतर के कुंडलिनी ध्यान से विपासना का काम होता रहा। पुराने विचार उभरने लगे और कुंडलिनी के आगे डिम पड़ने लगे। वे मिटते रहे और शून्य बढ़ता गया। पूर्ण शून्य होने पर अकस्मात मूलाधार से ऊर्जा के ऊपर चढ़ने से समाधि महसूस हुई। यही कुंडलिनी जागरण है। इसमें तांत्रिक यौनबल और अन्य तांत्रिक तरीकों की सहायता नहीं ली गई थी। मैंने यह एक पिछली पोस्ट में भी वर्णित किया है कि जब किसी भावनात्मक आघात से मन अचानक निर्विचार होकर शून्य सा हो जाता है, तब अचानक मूलाधार से ऊर्जा की नदी पीठ से होकर सहस्रार तक चढ़ती है। मेरे साथ भी पहली बार ऐसा ही हुआ था, जिसका वर्णन मैं पहले कर चुका हूँ। इसमें कुछ भी रहस्यात्मक या चमत्कारिक नहीं है। यह शुद्ध वैज्ञानिक घटना होती है। इसीलिए यह घटना धर्म-मर्यादा की सीमाओं से भी नहीं बंधी हुई होती। ऐसा किसी के साथ भी हो सकता है। जैसे बादल और धरती के बीच विभवांतर या ऊर्जा के अंतर के बढ़ने से बादलों से बिजली निकलकर जमीन पर गिरती है, वैसे ही मस्तिष्क या सहस्रार और मूलाधार के बीच होता है। जब तंत्रयोग से मूलाधार में ऊर्जा इकट्ठी हुई हो, और तभी किसी मानसिक सदमे या झटके से मस्तिष्क की ऊर्जा अचानक कम हो जाए, तो मूलाधार से बिजली सहस्रार को गिरती है। वह बिजली रीढ़ की हड्डी के केंद्र से होकर गुजरती है। इसे ही सुषुम्ना का जागरण या कुंडलिनी जागरण कहते हैं। वह मानसिक सदमा बेवफाई, धोखे, परेशानी, हताशा आदि किसी भी प्रकार से लग सकता है। वह ऊर्जा मन के विचार को जागृत कर देती है, अर्थात समाधि पैदा करती है। तो इसका मतलब यह हुआ कि कुंडलिनी योग प्रतिदिन करना चाहिए। क्या पता कब मानसिक सदमे वाली स्थिति पैदा हो जाए। इससे जागृति की संभावना तभी ज्यादा होगी, जब सारे चक्र विशेषकर मूलाधार चक्र ऊर्जावान होगा। साथ में, इससे सभी नाड़ियाँ भी खुली हुई रहेंगी, जिससे ऊर्जा का गमन आसान होगा। विशेष बात यह है कि कुंडलिनी को बनाया ही इसलिए होता है ताकि शून्य आसानी से प्राप्त हो जाए। होता क्या है कि अन्य सभी विचारों की बजाय कुंडलिनी ज्यादा प्रभावी होती है। इसका मतलब है कि कुंडलिनी सभी विचारों के साथ जुड़ी होती है। जैसे ही किसी मानसिक झटके से कुंडलिनी नष्ट होती है, वैसे ही उससे जुड़े हुए सभी विचार भी साथ में एकदम से नष्ट हो जाते हैं। यदि कुंडलिनी न हो, तो सभी अलग-2 सैंकड़ों विचारों को नष्ट करना लगभग असंभव के समान हो जाए। तभी तो कहते हैं कि जागृति उन्हीं को मिलती है, जिनकी कुंडलिनी सक्रिय होती है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। मैं कई वर्षों से कुंडलिनी योग कर रहा था। फिर पुराने सहपाठियों से ऑनलाइन मुलाकात हुई। मैं बहुत खुश हुआ। फिर किन्हीं वजहों से मुझे अपने प्रति बेवफाई महसूस हुई जिससे मुझे अजीब सा मानसिक व भावनात्मक आघात लगा। वह आनन्द व शून्यता से भरा हुआ था। इतने वर्षों से क्रियाशील कुंडलिनी मुझे नष्ट होती हुई सी महसूस हुई। मैं शून्य, खाली और हल्का सा हो गया। मूलाधार और सहस्रार के बीच विभवांतर बहुत बढ़ गया क्योंकि मेरा मूलाधार कुंडलिनी योग से काफी सक्रिय बना हुआ था। एक ऊर्जा की चमकदार लकीर मुझे अपनी रीढ़ की हड्डी से चढ़ी हुई व सहस्रार से जुड़ी हुई महसूस हुई। वहाँ हल्की सी जागृति का आभास भी हुआ, पूर्ण नहीं। हालाँकि मैं उस समय आधी नींद में था, और उसी अर्धनिद्रा की अवस्था में मुझे रात को अपनी आंखों से भावनात्मक अश्रु भी महसूस होते रहे। क्षणिक आत्मज्ञान भी ऐसी ही शून्यता से प्राप्त हुआ था। पर मुझे दुनियादारी में रहने वाले के लिए यह शून्यत्व वाला तरीका ठीक नहीं लगता। इससे आदमी पलायनवादी सा बन जाता है। यह वैज्ञानिक तरीका भी नहीं लगता मुझे। शून्यत्व तो बहुत से लोग महसूस करते रहते हैं, पर समाधि बहुत विरले लोग ही महसूस कर पाते हैं। लोग नशे से भी शून्यत्व जैसी स्थिति प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। मेरा जागृति का उपरोक्त पहला तरीका शून्यत्व जैसा लगता है लोगों को, पर वह भी पूरी तरह से शून्यत्व वाला नहीं था। वह भी हरफनमौला तांत्रिक वाला तरीका था। हालांकि वह दूसरी जागृति वाले तरीके से थोड़ा कम तांत्रिक था। जब भी मेरा झुकाव जागृति की तरफ होता था, या मुझे जागृति की याद आती थी, तो यहाँ तक कि अच्छे-खासे तथाकथित विद्वान लोग भी मुझे शून्यपरस्त सा समझकर मेरा मानसिक बहिष्कार जैसा कर देते थे, आम आदमी की बात तो छोड़ो। पता नहीं जागृति को लोग शून्यप्राप्त ही क्यों समझते हैं। ऐसा तंत्र विज्ञान की अनदेखी के कारण हुआ है। अब तो तंत्र विज्ञान लुप्तप्राय जैसा ही लगता है मुझे। तँत्रविज्ञान के मूल सिद्धांत के अनुसार तो जागृति और दुनियादारी, दोनों ही यथोचित गुणवत्ता से व यथोचित गति से एकसाथ दौड़ते हैं। यह कर्मयोग से काफी मिलता जुलता है।

पता नहीं मुझे अंतर्मन में क्यों लगता है कि शून्यत्व वाला कुंडलिनी तरीका कायरों के जैसा तरीका है। पता नहीं यह मुझे भिखारियों और लाचारों के जैसा तरीका क्यों लगता है। इसके लिए दूसरों के सहारे रहना पड़ता है। जब कोई

भावनात्मक आघात देगा, तब जागृति होगी। जो भावनात्मक आघात दे, उसे उसके लिए धन्यवाद भी नहीं कर सकते। अजीब सा कंसेप्ट है। हो सकता है कि मुझे ही ऐसा लगता हो, क्योंकि सबकी शरीर संरचना भिन्न होती है। ये मेरे अपने विचार हैं, और अपने पर अनुभव करके उठे हैं। मैं कोई सिद्धांत प्रस्तुत नहीं कर रहा हूँ। जब आदमी हर तरफ से पिटेगा, तभी शून्यत्व महसूस होगा, और जागृति होगी। किसीके द्वारा पिटने का मतलब किसीके द्वारा दिया जाने वाला भावनात्मक आघात ही है। दोनों में कोई अंतर नहीं है। बल्कि भावनात्मक आघात तो भौतिक पिटाई से भी बुरा है, क्योंकि उससे मन-आत्मा की गहराई तक पिटाई होती है। इसी पिटाई-सिद्धांत की वजह से तो यह कहावत प्रचलित हुई है, "जिसका कोई नहीं है, उसका भगवान है"। इस तरीके में आदमी अपने शरीर को भी अक्सर नुकसान पहुंचाता है। वह संतुलित आहार नहीं लेता, संतुलित जीवन नहीं जीता। वह शरीर का बहुत दमन करता है। यह इसीलिए ताकि भावनात्मक आघात का असर ज्यादा से ज्यादा हो, और वह ज्यादा से ज्यादा शून्य बने। क्योंकि यदि आदमी शक्तिमय जीवन से शक्ति हासिल करेगा, तो शून्यत्व से बचने के लिए इधर-उधर हाथ-पैर मारेगा। यह तरीका तो कोयले की खान से हीरा निकालने की तरह है। यही तरीका मुझे ज्यादातर प्रचलित दिखता है। मुझे लगता है कि यह तरीका विशेष परिस्थितियों में ही काम करता है, पर लोगों ने इसे सामान्य बना दिया है। वास्तव में यह ध्येय या साध्य है, पर लोगों ने इसे साधन बना दिया है। यह शून्य, साधना की चरमावस्था में खुद पैदा होता है, पर लोग इसे साधना किए बिना ही जानबूझकर पैदा करके करते हैं। वास्तव में यह एक आभासिक शून्य की तरह होता है, असली शून्य नहीं, पर लोग अपने लिए एक असली शून्य जैसा पैदा कर लेते हैं, घौंसले की तरह, रहने के लिए। यह प्रकाशमान, आनन्दमयी, चेतन और कुंडलिनी से भरे शून्य की तरह होता है, पर कई लोग इसे अंधकारमयी, दुखमयी, जड़ और कुंडलिनी से रहित शून्य समझकर इसका मजाक उड़ाते हैं। यह शून्य बहुत थोड़े समय के लिए टिकता है और जागृति पैदा करके नष्ट हो जाता है, पर लोग इसे लगातार बना कर रखते हुए अपने मस्तिष्क को और अपनी इंद्रियों को जैसे लॉक रूम में जैसे बन्द कर देते हैं। अगर यह तरीका इतना कारगर होता, तो आज हर जगह जागृत लोग ही दिखते। पर आप को तो लैम्प लेके ढूंढने से भी बिरले ही मिलेंगे। दूसरे, वीरों और राजाओं वाले तांत्रिक कुंडलिनी तरीके वाले लोग भी विरले ही दिखते हैं मुझे। क्योंकि वे इसे ठीक ढंग से व खुल के नहीं करते। उनके मन में इस बारे संदेह रहता है। संदेहात्मा विनश्यति। इस तरीके में अपने आम रोजमर्रा के व्यावहारिक जीवन को नीचे नहीं गिराया जाता, बल्कि तांत्रिक शक्ति से कुंडलिनी को ही इतना ऊपर उठाया जाता है कि उसके सामने भरा-पूरा भौतिक जीवन शून्य जैसा हो जाता है। यह ऐसे ही होता है जैसे सूर्य के सामने दीपक की ज्यादा अहमियत नहीं होती। शून्य बनने की नौबत ही नहीं आती। कुंडलिनी-सूर्य को संसार-दीपक से ज्यादा चमकाने के लिए दो ही तरीके हैं। या तो संसार-दीपक को बुझा दो, या फिर कुंडलिनी-सूर्य को इतना अधिक चमका दो कि संसार-दीपक फीका पड़ जाए। इससे भौतिक व सामाजिक जीवन भी साथ में तरक्की करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि शक्ति हरेक काम करती है, भौतिक भी और आध्यात्मिक भी। मैं अपनी बात बताऊँ, तो अपने प्राणोत्थान व कुंडलिनी जागरण के दौरान मैं सांसारिक रूप से काफी क्रियाशील था। मैं कुंडलिनी जागरण के लिए जंगल की किसी गुफा की तरफ नहीं भागा। मैं एक मशहूर योगी की बहुचर्चित कुंडलिनी सम्बन्धी किताब पढ़ रहा था। उसमें वे कहते हैं कि वे महानगर को छोड़कर हिमालय के सुनसान व भयानक जंगल में कई महीनों तक साधना करते रहे। अंत में उन्हें जाल बुनती हुई मकड़ी का स्पष्ट चित्र मन में दिखा। आंखें खोली तो बाहर भी हूबहू वही दृश्य था। फिर लिखते कि फिर वे साधना पूर्ण करके अपने घर आ गए। माना कि यह एकाग्रता की उच्च अवस्था है, पर साधना की पूर्णता में कुंडलिनी का और कुंडलिनी जागरण का कहीं जिक्र नहीं था, जिसके लिए वह पुस्तक मूलरूप में बनी थी। पता नहीं वह साधना की पूर्णता क्या थी? मन की आंखों से मकड़ी को जाला बुनते हुए देखने के लिए इतना ज्यादा संघर्ष? मैं यहाँ किसी की आलोचना नहीं कर रहा हूँ, बल्कि तथ्य सामने रख रहा हूँ। आध्यात्मिक विकास इसलिए भी रुकता है जब आदमी तथ्यों की छानबीन इस डर से नहीं करता कि कहीं यह किसी की आलोचना न बन जाए। इसी तरह एक अन्य महोदय अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में लिखते हैं कि वे खंडहरनुमा अंधेरे कमरे में सुनसान अकेले में कुंडलिनी साधना करते थे। कई महीनों बाद उन्हें पीठ के आधार पर अंडे जैसे के फूटने और उससे प्रकाशमय तरल पीठ के बीचोंबीच ऊपर चढ़ता हुआ महसूस हुआ। इसी अनुभव के साथ वह कुंडलिनी पुस्तक समाप्त हो जाती है। हालाँकि ये हैरानी भरे अनुभव हैं, पर कुंडलिनी और कुंडलिनी जागरण का कुछ पता नहीं। मैं अपने कुंडलिनी जागरण की झलक के दौरान पूरी तरह से विकसित और सभ्य समाज के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रहा था। मैं अपने सांसारिक कर्मों और दायित्वों का निर्वहन पहले की तरह कर रहा था। अत्याधुनिक सुविधाओं का उपभोग कर रहा था। अत्याधुनिक गाड़ी में अत्याधुनिक मार्गों और स्थानों का सपरिवार भ्रमण-आनन्द ले रहा था। अत्याधुनिक बड़े पर्दे पर उच्च गुणवत्ता की फिल्में सपरिवार देखने अक्सर लॉन्ग ड्राइव पे चला जाता। प्राकृतिक और कृत्रिम, दोनों किस्म के नजारों का भरपूर लुत्फ उठाते हम लोग। और तो और, अंतरराष्ट्रीय कुंडलिनी फोरम पर पूरी तरह से सक्रिय था। अब इससे बढ़कर क्या दुनियादारी हो सकती है। मुझे रंगीन दुनिया से कभी अलगाव महसूस नहीं हुआ। साथ में ज्यादा लगाव भी महसूस नहीं हुआ। चमकदार

दुनिया के साथ तांत्रिक शक्ति से कुंडलिनी को भी सबसे अधिक चमका भी रखा था। इससे सारा संसार पूरी तरह से चमकता हुआ भी अद्वैतकारी कुंडलिनी के आगे फीका ही रहता था। अद्वैत से सबकुछ एकजैसा लगता था। शायद ड्राइविंग का और भ्रमण का भी अद्वैत को पैदा करने में कुछ योगदान है। कुंडलिनी हर समय मस्तिष्क में रहती थी। ऐसा लगता था कि सबकुछ कुंडलिनी के अंदर है। इसका मतलब यह नहीं कि ऐसे भोगविलास से ही कुंडलिनी जागरण होता है। मैं तो बस उदाहरण दे रहा हूँ। आप शून्यत्व वाले पहले कुंडलिनी तरीके को नेगेटिव प्रेशर तरीका कह सकते हैं। इसका मतलब है कि इसमें शून्यत्व का वैक्यूम कुंडलिनी ऊर्जा को ऊपर की तरफ चूसता है। यह ऐसे ही है जैसे हम स्ट्रॉ से जूस चूसते हैं, या वैक्यूम कलीनर डस्ट को चूसता है। इसी तरह दूसरे वाले तांत्रिक कुंडलिनी तरीके को पॉजिटिव प्रैशर तरीका कह सकते हैं। इसका मतलब है कि इसमें तांत्रिक शक्तियों से कुंडलिनी को नीचे से ऊपर की तरफ बलपूर्वक पम्प किया जाता है। यह ऐसे ही है जैसे नदी के पानी को पहाड़ी की चोटी तक विद्युतचालित मोटर पम्प से चढ़ाया जाता है। कई लोग दोनों तरीकों का संतुलित इस्तेमाल करते हैं। वे मस्तिष्क में भी थोड़ा सा शून्य बनाते हैं, और तांत्रिक शक्ति से चालित कुंडलिनी पम्प से मूलाधार से भी कुंडलिनी ऊर्जा को ऊपर चढ़ाने के लिए अतिरिक्त बल प्रदान करते हैं। सम्भवतः मेरा कुंडलिनी जागरण की झलक प्रस्तुत करने वाला तरीका भी यही था। अद्वैत भाव से मेरे अंदर हल्का सा आभासिक शून्य बना होगा। इसीलिए इतनी आसानी से हो गया। बेशक यह कुंडलिनी जागरण की दस सेकंड की झलक थी, पर था तो कुंडलिनी जागरण ही। एक लीटर पानी और पांच लीटर पानी के बीच में तत्त्वतः कोई अंतर नहीं है। वह झलक इसलिए खत्म नहीं हुई कि मैं उसके योग्य नहीं था या मैं उसके लिए तरसता था। उस झलक को मैंने खुद जानबूझकर खत्म किया। ऐसा इसलिए क्योंकि मैं पारलौकिक आयाम में प्रविष्ट नहीं होना चाहता था। मैं अपने पिछले अनुभव से हताश हो गया था। आजकल इस आयाम का कोई सम्मान नहीं है। ऐसे आदमी को पागल व पलायनवादी समझा जाता है। ऐसे आदमी की वैज्ञानिक व प्रगतिशील सोच को भाँति-2 की अति रूढ़िवादी और अति भौतिकवादी धारणाओं से एकसाथ दबा दिया जाता है। ऐसी धारणाओं वाले लोग समझते हैं कि इसे अंधेरे बिल में सोते-2 ही जागरण प्राप्त हो गया। वे यह नहीं देख-समझ पाते कि इसे इसके लिए इसे बहुत से भौतिक संघर्ष करने पड़े हैं। इसे शून्य पद की उपाधि तब मिली है, जब इसने सबसे ज्यादा भौतिक व सामाजिक उपलब्धियां हासिल की हैं, और यह फिर से विकासवादी भौतिक जगत में प्रविष्ट होने के लिए तैयार है, पर जागृति के साथ। वास्तव में जागृति एक ऐसा पारलौकिक आयाम है, जो किसी को नहीं दिखता, सिर्फ शून्य ही नजर आता है। इसी तरह अधिकांश लोगों को यह पता ही नहीं होता कि जो कुंडलिनी आध्यात्मिक विकास के लिए जरूरी है, वही कुंडलिनी भौतिक विकास के लिए भी जरूरी है। यदि जागरण का आनन्द कुंडलिनी से मिलता है, तो भौतिक भोग-विलास भी कुंडलिनी की सहायता से ही उपलब्ध होता है। उन्हें कुंडलिनी महसूस तो होती रहती है, क्योंकि अपने अनुभव को कोई नहीं झुठला सकता। पर उन्हें उसके बारे में विस्तार से जानकारी नहीं होती। यह ऐसे ही होता है जैसे एक चीनी से अनजान आदमी उसकी मिठास तो अनुभव कर सकता है, पर उसे उसके बारे में विस्तार से पता नहीं होता, जैसे चीनी का रंग-रूप क्या है, यह कहाँ से आई, कैसे बनी, कैसे काम करती है, इसके क्या-2 फायदे हैं, और कहाँ-2 इस्तेमाल होती है। जागृति के बाद आदमी के अपने प्यारे लोग भी बेगाने हो जाते हैं। क्योंकि उसका रूपांतरण होता है। ऐसे आदमी की दिल की गहराई को कोई नहीं समझता। कई मामलों में तो जिगरी दोस्त भी जिगरी दुश्मन बन जाते हैं। ईश्वरीय शक्ति हाथ लगने से आदमी क्रांतिकारी कदम उठाता है। उसे हिंसक क्रांतिकारी तो नहीं कह सकते पर शांतिपूर्ण रेबेलियन या समाज सुधारक कह सकते हैं। पर आम आदमी उसे क्रांतिकारी ही समझते हैं, क्योंकि उनकी नजर ही वैसी होती है। रिवोल्यूशनिस्ट और रेबेलियन के बीच में जो अंतर ओशो ने बताए हैं, वे पढ़ने लायक हैं। इससे जान का ख़तरा हमेशा बना रहता है। मैंने खुद इन्हें पहली जागृति के बाद अनुभव किया है। इतना कुछ करने के बाद भी अगर अपने आदमी ही पराए हो जाएं, तो क्या फायदा। इसलिए इस दुनिया में खुलकर मजे करने चाहिए। जो जितना ज्यादा मूर्ख है, वह इस दुनिया में उतना ही ज्यादा सुखी है। रूपांतरण के झटकों से मूर्ख ही सुरक्षित रहता है। उसके सभी अपने हैं। अध्यात्म और भौतिकता का संतुलन ही सर्वोत्तम है। मध्यमार्ग ही सर्वोत्तम है। ये मेरे अपने विचार हैं, इसीलिए व्यक्तिगत ब्लॉग पर लिख रहा हूँ। यह कोई कथा-उपदेश सुनाने वाला ब्लॉग तो है नहीं। मुझे लगता है कि नेगेटिव प्रेशर वाला कुंडलिनी तरीका उनके लिए है, जो कमजोर, बीमार, वृद्ध, ऊर्जाहीन और दुनियादारी से दूर हैं। पोजिटिव प्रेशर वाला कुंडलिनी साधना का तरीका उनके लिए है, जो ताकतवर, स्वस्थ, जवान, ऊर्जावान और दुनियादारी में डूबे हुए हैं। असली और वैज्ञानिक तरीका तो कुंडलिनी ध्यान ही है। इसमें मूलाधार की ऊर्जा-नदी को ऊपर चढ़ाने के लिए विचारों की शून्यता का नहीं, बल्कि विचारों (कुंडलिनी विचार/चित्र) की प्रचंडता का सहारा लिया जाता है। इसलिए यह मानवीय व प्रेम से भरा तरीका है। यह व्यवहारवादी व लौकिक तरीका है, जो सबके अनुकूल है। भौतिकवादी प्रकार के लोगों के लिए तो यह तरीका सर्वोत्तम ही है। दूसरी ओर, शून्यत्व वाला तरीका जँगली सा तरीका लगता है। मुझे तो लगता है कि सम्भवतः ऋषि पतंजलि के अष्टांग योग के इसी मूल सूत्र के गलतफहमी से भरे प्रचलन से ही

हिंदुओं का स्वभाव पलायनवादी जैसा रहा होगा। हालाँकि दोनों ही तरीके कुंडलिनी चालित हैं, पर छोटा सा अहम अंतर है, जिसे लोग आसानी से नहीँ देख पाते। शून्यत्व वाले कुंडलिनी तरीके में कुंडलिनी से शून्यत्व पैदा किया जाता है। इसमें बहुत समय लग जाता है। इसमें तांत्रिक यौनबल का सहारा भी नहीं लिया जाता है। यह शुद्ध अष्टांगयोग वाला या राजयोग वाला तरीका है। तांत्रिक कुंडलिनी तरीके में कुंडलिनी को तांत्रिक यौनबल देकर इतना मजबूत कर दिया जाता है कि कुंडलिनी शून्यत्व को बाईपास करके सीधे ही मूलाधार की ऊर्जा-नदी को सहस्रार तक खींच लेती है। इसीलिए तांत्रिक कुंडलिनी जागरण हमेशा कुंडलिनी से शुरु होता हुआ अनुभव होता है। शून्यत्व वाला जागरण किसी भी विचार या चित्र से शुरु हो सकता है, हालांकि ज्यादातर कुंडलिनी से ही शुरु होता है, और ज्यादा भूमिका कुंडलिनी की ही होती है, क्योंकि उसका ध्यान करने की आदत होती है। तांत्रिक कुंडलिनी जागरण के दौरान तो आदमी दुनियादारी के मजे उड़ा रहा होता है, घूम-फिर रहा होता है। पर शून्यत्व वाले कुंडलिनी जागरण के दौरान वह दुनिया की नजरों में अकेले जैसा, निवृत्त जैसा, और अवसादग्रस्त जैसा होता है। एक सामाजिक प्राणी के लिए शून्यत्व पैदा करना आसान नहीं है। अगर पैदा हो गया, तो उसे बना कर रखना आसान नहीं है, क्योंकि ऐसा तो नहीं है कि शून्यत्व पैदा होते ही जागरण हो जाए। मुझे लगता है कि हिन्दू धर्म में जो भौतिक व बौद्धिक विकास की रफ़्तार कम हुई, उसके लिए कहीँ न कहीं यह शून्यत्व साधना भी जिम्मेदार है। पतंजलि के चित्तवृत्ति या मन के विचारों के रोधन से लोग यह मतलब लगाने लगे होंगे कि दिमाग का जितना कम प्रयोग करेंगे, उतनी ही जल्दी और बढ़िया जागृति होगी। पर वे पतंजलि के गूढ़ भाव को नहीं समझे होंगे, जिसके अनुसार कुंडलिनी साधना खुद शून्यत्व पैदा करती है, जानबूझकर दिमाग को बंधक बनाने की जरूरत नहीं। पतंजलि योग में यम-नियम आदि चित्त-विरोधी विधियों से दिमाग की बैकग्राउंड सीनरी की डार्कनेस को बढ़ाकर कुंडलिनी चित्र को चमकाने की कोशिश की जाती है। कुंडलिनी को अतिरिक्त ऊर्जा देने के लिए इसमें ऊर्जाघन पदार्थों जैसे कि तांत्रिक पंचमकारों के सेवन का प्रावधान नहीं है। जबकि कुंडलिनी योग में बैकग्राउंड सीनरी की चमक को बढ़ाकर कुंडलिनी को चमकाने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा प्रदान की जाती है। साथ में, तांत्रिक तकनीकों से बैकग्राउंड सीन की चमक को भी कुंडलिनी के ऊपर स्थानांतरित किया जाता रहता है। इससे लौकिक ऐशोआराम भी दुष्प्रभावित नहीं होता। हालांकि यह एक वैश्विक सत्य है कि कुछ न होने से कुछ होना बेहतर है। मेरे कहने का मतलब है कि जिस किसी भी मानवीय तरीके से कुंडलिनी जागरण की संभावना हो, उसे झटक लेना चाहिए।

कुंडलिनी ऊर्जा और चक्र नदी के जल प्रवाह और पनचक्की के टरबाइन की तरह हैं

क्या हठयोग को राजयोग पर्यंत ही करना चाहिए

मैं पिछली पोस्ट में हठयोग प्रदीपिका की एक भाषा टीका पुस्तक व अपने आध्यात्मिक अनुभव के बीच के लघु अंतर के बारे में बात कर रहा था। उसमें आता है कि हठयोग की साधना राजयोग की प्राप्ति-पर्यंत ही करें। यह भी लिखा है कि यदि सिद्धासन सिद्ध हो जाए तो अन्य आसनों पर समय बर्बाद करने से कोई लाभ नहीं। पुस्तक निर्माण के समय आध्यात्मिक संस्कृति का ही बोलबाला होता था। भौतिकता की तरफ लोगों की रुचि नहीं होती थी। जीवन क्षणभंगुर होता था। क्या पता कब महामारी फैल जाए या रोग लग जाए। युद्ध आदि होते रहते थे। इसलिए लोग जल्दी से जल्दी कुंडलिनी जागरण और मोक्ष प्राप्त करना चाहते थे। हालांकि खुद हठयोग प्रदीपिका में लिखा है कि विभिन्न आसनों से विभिन्न रोगों से सुरक्षा मिलती है। पर लोगों को स्वास्थ्य की चिंता कम, पर जागृति की चिंता ज्यादा हुआ करती थी। पर आज के वैज्ञानिक युग में जीवन अवधि लंबी हो गई है, और जीवनस्तर भी सुधर गया है, इसलिए लोग जागृतिके लिए लंबी प्रतीक्षा कर सकते हैं। क्योंकि आजकल जानलेवा बीमारियों का डर लगभग न के बराबर है, इसलिए लोगों में अपने शरीर को चुस्त-दुरुस्त और स्वस्थ रखने का उत्साह पहले से कहीं ज्यादा है। इसलिए मेरा विचार है कि यदि राजयोग की उपलब्धि भी हो जाए, तो भी हठयोग करते रहना चाहिए। एक मामले में योगी स्वात्माराम ठीक भी कह रहे हैं। यदि किसी के मन में पहले से ही कुंडलिनी बनी हो, तो हठयोग के अतिरिक्त या अनावश्यक प्रयास से उसे क्यों नुकसान पहुंचने दिया जाए। मेरे साथ भी तो ऐसा ही होता था। मेरे घर के आध्यात्मिक माहौल के कारण मेरे मन में हमेशा कुंडलिनी बनी रहती थी। मुझे लगता है कि यदि मैं उसे बढ़ाने के लिए बलपूर्वक प्रयास करता, तो शायद वह नाराज हो जाती। क्योंकि कुंडलिनी बहुत नाजुक, सूक्ष्म और शर्मीली होती है। कई प्रकार की कुंडलिनी हठयोग को पसंद भी नहीं करती, जैसे कि जीवित प्रेमी-प्रेमिका या मित्र के रूप से निर्मित कुंडलिनी। हठयोग के लिए सबसे ज्यादा खुश तो गुरु या देवता के रूप से निर्मित कुंडलिनी ही रहती है। कई बार आध्यात्मिक व कर्मठ सामाजिक जीवन से ही कुंडलिनी को सबसे ज्यादा बल मिलता है। कर्मयोग से भी बहुत बल मिलता है। ऐसे में यदि हठयोग किया, तो समय की बर्बादी ही होगी। स्वास्थ्य यदि हठयोग से दुरस्त रहता है, तो संतुलित रूप के मानसिक और शारीरिक काम से भी दुरस्त रहता है। हठयोग तो ज्यादातर अति भौतिक समाज या फिर वनों-आश्रमों के लिए ज्यादा उपयोगी है। संतुलन भी बना सकते हैं, हठयोग, राजयोग व कर्मयोग के बीच में। सब समय और परिस्थिति पर निर्भर करता है। ऐसा न हो कि कहीं मन में जमी कुंडलिनी को छोड़कर दूसरी ही कुंडलिनी को जगाने के चक्कर में पड़ जाओ, क्योंकि कुंडलिनी चित्र के क्षणिक जागरण से ज्यादा अहमियत कुंडलिनी चित्र के निरंतर मन में बने रहने की है। हो सकता है कि योगी स्वात्माराम का यह कथन प्रतिदिन के योग के लिए हो। जब प्रतिदिन की साधना के दौरान हठयोग से मन में कुंडलिनी का ध्यान अच्छी तरह से जम जाए, तब राजयोग वाली पद्धति से ध्यान करो। यह स्वाभाविक है कि दिनभर की काम की उलझन से आदमी का मन फिर से अस्थिर हो जाएगा। इससे वह अगले दिन सीधे ही राजयोग से नियंत्रित नहीं हो पाएगा। इसलिए अगले दिन उसे फिर से पहले हठयोग से वश में करना पड़ेगा। ऐसा क्रम प्रतिदिन चलेगा। ऐसा भी हो सकता है कि योगीराज ने यह उनके लिए लिखा हो, जिन्हें दुनियादारी की उलझनें न हों, और एकांत में रहते हुए योग के प्रति समर्पित हों। उनका मन जब लम्बे समय के हठयोग के अभ्यास से वश में हो जाए, तब वे उसे छोड़कर सिर्फ राजयोग करें। संसार की उलझनें न होने से उनका मन फिर से अस्थिर नहीं हो पाएगा। यदि थोड़ा बहुत अस्थिर होगा भी, तो भी राजयोग से वश में आ जाएगा।

हठयोग की शुरुआत प्राण ऊर्जा से और राजयोग की शुरुआत ध्यान चित्र से होती है

कुंडलिनी के बारे में भी विस्तार से नहीं बताया गया है। यही लिखा है कि फलाँ आसन को या फलाँ प्राणायाम को करने से कुंडलिनी जाग जाती है, या मूलाधार से ऊपर चढ़कर सहस्रार में पहुंच जाती है। इसी तरह व्याख्या में कहा गया है कि जब प्राण और अपान आपस में मणिपुर चक्र में टकराते हैं तो वहाँ एक ऊर्जा विस्फोट जैसा होता है, जिसकी ऊर्जा सुषुम्ना से चढ़ती हुई सीधी सहस्रार में जा पहुंचती है। इसका मतलब है कि प्राण ऊर्जा को ही वहाँ कुंडलिनी कहा गया है। क्योंकि यह ऊर्जा मूलाधार के कुंड में सोई हुई रहती है, इसलिए इसे कुंडलिनी कहते हैं। जब यह प्राण ऊर्जा या कुंडलिनी मस्तिष्क में जागेगी, तब इसके साथ मन का कोई चित्र भी जाग जाएगा। इसका मतलब है कि हठयोग में प्राण ऊर्जा को पहले जगाया जाता है, पर राजयोग में मन के चित्र को पहले जगाया जाता है। हठयोग में प्राण ऊर्जा के जागरण से मन का चित्र जागृत होता है, पर राजयोग में मन के चित्र के जागृत होने से प्राण ऊर्जा जागृत होती है। मतलब कि राजयोग में जागता हुआ मन का चित्र अपनी ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए मूलाधार से प्राण ऊर्जा की नदी को पीठ से होकर ऊपर खींचता है। इसका मतलब है कि एकप्रकार से कुंडलिनी और प्राण ऊर्जा पर्यायवाची की तरह ही हैं। जिसे मैं कुंडलिनी कहता हूँ, वह हठयोग के प्राण और राजयोग के ध्यान-

चित्र का मिश्रित रूप ही है। वास्तव में यही परिभाषा सबसे सटीक और व्यावहारिक है, क्योंकि हठयोग और राजयोग का मिश्रित रूप ही सबसे अधिक व्यावहारिक और फलदायक है। मुझे भी इसी मिश्रण से कुंडलिनी जागरण की अल्पकालिक अनुभूति मिली थी। यदि केवल राजयोग के ध्यान चित्र या मेडिटेशन ऑब्जेक्ट को लें, तब उसमें ऊर्जा की कमी रहने से वह क्रियाशील या जागृत नहीं हो पाएगा। इसी तरह, यदि केवल हठयोग की प्राण ऊर्जा को लिया जाए, तो उसमें चेतनता की कमी रह जाएगी। शायद इसीको मद्देनजर रखकर योगी स्वात्माराम ने कहा है कि राजयोग की उपलब्धि हो जाने पर हठयोग को छोड़ दो। उनका हठयोग को छोड़ने से अभिप्राय हठयोग को एकाँगी रूप में अलग से न कर के उसे राजयोग के साथ जोड़कर अभ्यास करने का रहा होगा। हठयोग के प्रारंभिक अभ्यास में तो मन के सर्वाधिक प्रभावी चित्र या ध्यान चित्र का ठीक ढंग से पता ही नहीं चलता। अभ्यास पूर्ण होने पर ही इसका पूरी तरह से पता चलता है। लगभग 2-3 महीनों में या अधिकतम 1 साल के अंदर यह हो जाता है। तब राजयोग शुरु हो जाता है। हालाँकि राजयोग के साथ जुड़ा रहकर हठयोग फिर भी चलता रहता है, पर इसमें राजयोग ज्यादा प्रभावी होने के कारण इसे राजयोग ही कहेंगे। मैं उस मानसिक चित्र और मूलाधार से ऊपर चढ़ने वाली ऊर्जा के मिश्रण को कुंडलिनी बता कर एक योग जिज्ञासु को शुरु में ही बता रहा हूँ कि बाद में ऐसा होगा, ताकि उसे साधना में कोई दिक्कत न आए। मानसिक चित्र तो पहले ही जागा हुआ अर्थात चेतन है। उस चित्र के सहयोग से जागती तो मूलाधार स्थित प्राण ऊर्जा ही है, जो आम अवस्था में सोई हुई या चेतनाहीन रहती है। इसलिए यह भी ठीक है कि उस ऊर्जा को कुंडलिनी कहा गया है। कुंडलिनी तो सिर्फ जागती है, पर ध्यान चित्र तो परम जागृत हो जाता है, क्योंकि वह आत्मा से एकाकार हो जाता है। मतलब ध्यान चित्र प्राण ऊर्जा से ज्यादा जागता है। इसलिए क्यों न उस ध्यान चित्र को ही कुंडलिनी कहा जाए। वैसे ध्यान चित्र और ऊर्जा का मिश्रण ही कुंडलिनी है, हालांकि उसमें ध्यान चित्र का महत्त्व ज्यादा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि ध्यान चित्र राजयोग व हठयोग में समान रूप से अहमियत रखता है। ऊर्जा को अभिव्यक्ति ध्यान चित्र ही देता है। ऊर्जा को अनुभव ही नहीं किया जा सकता। ध्यान चित्र के रूप में ही तो ऊर्जा अनुभव होती है। अधिकांश लोग मानते हैं कि हठयोग केवल शारीरिक स्वास्थ्य से ही जुड़ा हुआ है, इसमें ध्यान का कोई स्थान नहीं है। मैं भी पहले कुछ-कुछ ऐसा ही समझता था। पर लोग वे 2-3 सूत्र नहीँ देखते, जिसमें इसे राजयोग के प्रारम्भिक सहयोगी के रूप में दिखाया गया है, और कहा गया है कि हठयोग की परिणति राजयोग में ही होती है। ध्यान योग का काम तो उसने राजयोग के पास ही रहने दिया है। वह दूसरे की नकल करके श्रेय क्यों लेता। इसका मतलब है कि उस समय भी कॉपीराइट प्रकार का सामाजिक बोध लोगों में था, आज से भी कहीं ज्यादा। तो क्यों न हम हठयोग प्रदीपिका को पतंजलि कृत राजयोग का प्रथम भाग मान लें। सच्चाई भी यही है। योगी स्वात्माराम ऐसा ही जोर देकर करते अगर उन्हें पता होता कि आगे आने वाली पीढ़ी इस तरह से भ्रमित होगी।

ध्यान चित्र ही कुंडलिनी है

इसका प्रमाण मैं हठयोग की उस उक्ति से दूंगा, जिसके अनुसार कुंडलिनी सुषुम्ना नाड़ी में ऊपर की ओर बहती है। यदि आसनों व प्राणायामों के दौरान किसी चक्र पर ध्यान न किया जाए, तो मस्तिष्क में केवल एक थ्रिल या घरघराहट सी ही महसूस होगी, उसके साथ कोई मानसिक चित्र नहीं होगा। वह थ्रिल मस्तिष्क के दाएं, बाएं आदि किसी भी भाग में महसूस हो सकती है। पर जैसे ही उस थ्रिल के साथ आज्ञा चक्र, मूलाधार, स्वाधिष्ठान आदि चक्रों पर ध्यान लगाया जाता है, उसी समय सहस्रार चक्र में ध्यान किया जाने वाला मानसिक चित्र प्रकट हो जाता है। साथ में थ्रिल भी मस्तिष्क की लम्बवत केंद्रीय रेखा में आ जाती है। दरअसल आज्ञा आदि चक्रों पर ध्यान लगाने से कुंडलिनी ऊर्जा केन्द्रीभूत होकर सुषुम्ना में बहने लगती है, जिससे उसके साथ कुंडलिनी प्रकट हो जाती है। ऐसा दरअसल दाएं और बाएं मस्तिष्क के मिश्रित होने से उत्पन्न अद्वैत के सिद्धांत से होता है। थ्रिल के2रूप में मस्तिष्क को जाती ऊर्जा तो हर हाल में लाभदायक ही है, चाहे उसके साथ कुंडलिनी हो या न हो। उससे दिमाग तरोताजा हो जाता है। पर सम्पूर्ण लाभ तो कुंडलिनी के साथ ही मिलता है।

भगवान कृष्ण के द्वारा अर्जुन को अपने विश्वरूप का दर्शन कराना दरअसल कुंडलिनी जागरण ही था

इसे सम्भवतः श्री कृष्ण ने शक्तिपात से करवाया था। इसीलिए अर्जुन श्रीकृष्ण को कहता है कि उसे वे अनन्त रूप लग रहे हैं। इसका मतलब है कि उनका प्रियतम रूप अर्जुन की आत्मा से एकाकार हो गया था, अर्थात वे अखण्ड ऊर्जा(एनर्जी कँटीन्यूवम) से जुड़ गए थे। समाधि या कुंडलिनी जागरण ऐसा ही होता है। मैं तो एक मामुली सा इंसान हूँ। मुझे तो सिर्फ दस सेकंड की ही झलक मिली थी, इसीलिए ज्यादा नहीं बोलता, पर श्रीकृष्ण की शक्ति से वह पूर्ण समाधि का अनुभव अर्जुन में काफी देर तक बना रहा।

शरीर में नीचे जाते हुए चक्रों की आवृति घटती जाती है

चक्र पर चेतना शक्ति और प्राण शक्ति का मिलन होता है। नीचे वाले चक्र कम आवृति पर घूमते हैं। ऊपर की ओर जाते हुए, चक्रों की आवृति बढ़ती जाती है। आवृति का मतलब यहाँ आगे वाले चक्र से पीछे वाले चक्र तक और वहाँ से फिर आगे वाले चक्र तक कुंडलिनी ऊर्जा के पहुंचने की रफ्तार है, अर्थात एक सेकंड में ऐसा कितनी बार होता है। विज्ञान में भी आवृति या फ्रेकवेंसी की यही परिभाषा है। यह तो मैं पिछली एक पोस्ट में बता भी रहा था कि यदि मस्तिष्क में चेतनामयी ऊर्जा की कमी है, तो अद्वैत का ध्यान करने पर कुंडलिनी चित्र नीचे के चक्रों पर बनता है, मतलब नीचे के कम ऊर्जा वाले चक्र क्रियाशील हो जाते हैं। साथ में बता रहा था कि अविकसित छोटे जीवों की कुंडलिनी नीचे के चक्रों में बसती है। इसका मतलब है कि उनके मस्तिष्क में चेतनामयी ऊर्जा की कमी होती है। जैसे-जैसे मस्तिष्क का विकास होता है, वैसे-वैसे कुंडलिनी ऊपर की ओर चढ़ती जाती है।

चक्र नाड़ी में बहने वाले प्राण से वैसे ही घूमते हैं, जैसे नदी में बहने वाले पानी से पनचक्की के चरखे घूमते हैं

सम्भवतः चक्र इसलिए कहा जाता है, क्योंकि जैसे पानी की छोटी नदी या नाली के बीचोंबीच आटा पीसने वाली पनचक्की की पानी से घूमने वाली चरखी घूमती है, उसी तरह सुषुम्ना नाड़ी के बीच में चक्र घूमते हैं। नाड़ी शब्द नदी से ही बना है। ये चक्र भी सुषुम्ना में ऊपर चढ़ रही ऊर्जा से टरबाइन की तरह पीछे से आगे की तरफ घूमते हैं। आज्ञा चक्र से नीचे जाने वाली नाड़ी के प्रवाह से वह फिर पीछे की तरफ घूमते हैं। पीछे से फिर आगे की ओर, आगे से फिर पीछे की ओर, इस तरह से यह चक्र चलता रहता है। आपको विशुद्धि चक्र का उदाहरण देकर समझाता हूँ। गर्दन के बीचोंबीच वह चक्ररूपी टरबाइन है। समझ लो कि इसमें नाड़ी के ऊर्जा प्रवाह को अपनी घूर्णन गति में बदलने के लिए प्रोपैलर जैसे ब्लेड लगे हैं। जब इस चक्र के साथ मूलाधार का ध्यान किया जाता है, तो गर्दन के पिछले भाग के बीच में कुंडलिनी चित्र बनता है। इसका मतलब है कि वहां प्रोपैलर ब्लेड पर दबाव पड़ता है। फिर जब उसके साथ आज्ञा चक्र का ध्यान किया जाता है, तो गर्दन के अगले भाग के बीचोंबीच एक सिकुड़न के साथ वह कुंडलिनी चित्र बनता है। मतलब कि पीछे से प्रोपैलर ब्लेड घूम कर आगे पहुंच गया, जिस पर आज्ञा चक्र से नीचे जा रहे ऊर्जा प्रवाह का अगला दबाव लगता है। फिर मूलाधार का ध्यान करने से वह फिर से गर्दन के पिछले वाले भाग में पहली स्थिति पर आ जाता है। आज्ञा चक्र के ध्यान से वह फिर आगे आ जाता है। इस तरह यह चक्र चलता रहता है। आप यह मान सकते हो कि उसमें एक ही प्रोपैलर ब्लेड लगा है, जो घूमते हुए आगे पीछे जाता रहता है। यह भी मान सकते हैं कि उस टरबाइन में बहुत सारे ब्लेड हैं, जैसे कि अक्सर होते हैं। यह कुछ-कुछ दार्शनिक जुगाली भी है। विशुद्धि चक्र, आज्ञा चक्र और मूलाधार चक्र का एकसाथ ध्यान करने से विशुद्धि चक्र तेजी से घूमने लगता है। हालांकि इसमें कुछ अभ्यास की आवश्यकता लगती है। आप समझ सकते हो कि नीचे से प्राण ऊर्जा उस चक्र को घुमाती है, और ऊपर से मनस ऊर्जा। चक्र पर दोनों प्रकार की ऊर्जाओं का अच्छा मिश्रण हो जाता है। चक्र पर जो सिकुड़न महसूस होती है, वह एकप्रकार से प्राण ऊर्जा से चक्र को लगने वाला धक्का है। चक्र पर जो कुंडलिनी चित्र महसूस होता है, वह चक्र पर मनस ऊर्जा से लगने वाला धक्का है। दरअसल आगे के चक्रों पर धक्का लगाने वाली शक्ति भी प्राण शक्ति ही है, मनस शक्ति नहीं। मनस शक्ति तो प्राण शक्ति के साथ तब मिश्रित होती है, जब वह मस्तिष्क से गुजर रही होती है। यह ऐसे ही होता है, जैसे किसी नदी के एक बगीचे के बीच से गुजरते समय उसके पानी में फूलों की सुगंध मिश्रित हो जाती है। अगले चक्रों में वह सुगन्धि या कुंडलिनी चित्र ज्यादा मजबूत होता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि आगे की नाड़ी में ऊर्जा नीचे जाते समय अपनी ज्यादातर खुशबू गवां देती है। मूलाधार से मुड़कर जब वह पीठ से ऊपर चढ़ती है, तब उसमें बहुत कम कुंडलिनी सुगन्धि बची होती है। मस्तिष्क में पहुंचते ही उसमें फिर से कुंडलिनी सुगंधि मिश्रित हो जाती है। वह फिर आगे से नीचे उतरते हुए चक्रों के माध्यम से चारों ओर कुंडलिनी सुगन्धि फैला देती है। इस तरह से यह चक्र चलता रहता है। सम्भवतः महामृत्युंजय मंत्र का "सुगंधिम पुष्टिम वर्धनम" इसी कुंडलिनी सुगंधि को इंगित करता है। एक पिछली पोस्ट में भी इसी तरह का अपना अनुभव साझा कर रहा था कि यदि सहस्रार को ऊपर वाले त्रिभुज का शिखर मान लिया जाए, आगे के और पीछे के चक्रों को जोड़ने वाली रेखा को त्रिभुज का आधार मान लिया जाए, उससे निचली उल्टी त्रिभुज का आधार जुड़ा हो, जिसका शिखर मूलाधार चक्र हो, तो बीच वाले चक्रों पर बड़ा अच्छा ध्यान लगता है। अब मैं अपने ही उस अनुभव को वैज्ञानिक रूप से समझ पा रहा हूँ कि ऐसा आखिर क्यों होता है। दरअसल ऊपर के त्रिभुज से मनस ऊर्जा ऊपर से नीचे आती है, और नीचे के त्रिभुज से प्राण ऊर्जा ऊपर जाती है। वे दोनों आधार रेखा पर स्थित चक्रों पर आपस में टकराकर एक ऊर्जा विस्फोट सा पैदा करती हैं, जिससे चक्र तेजी से घूमता है और कुंडलिनी जीवंत जैसी हो जाती है। पिरामिड आकृति में जो ऊर्जा का घनीभूत संग्रह होता है, वह इसी त्रिभुज सिद्धांत से होता है। जो यह कहा जाता है कि शरीर के चक्र शरीर के ऊर्जा केंद्र हैं, उसका मतलब यही है कि उन पर कुंडलिनी चित्र मजबूत होता है। वह कुंडलिनी चित्र आदमी के जीवन में बहुत काम आता है। उसी से कुंडलिनी रोमांस सम्भव होता है। उसी से अनासक्ति और अद्वैत की प्राप्ति होती है, जिसे प्राप्त करके आदमी काम करते हुए थकता ही नहीं। दरअसल आदमी के विकास के लिए सिर्फ शारीरिक और मानसिक शक्ति ही पर्याप्त नहीं होती। यदि

ऐसा होता तो समृद्ध घर के रचे-पचे लोग ही दुनिया में तरक्की का परचम लहराया करते। पर हम देखते हैं कि अधिकांश मामलों में बुलंदियों को छूने वाले लोग गरीबी और समस्याओं से ऊपर उठे होते हैं। दरअसल सबसे ज़्यादा जरूरी आध्यात्मिक शक्ति होती है, जो कुंडलिनी से प्राप्त होती है। इससे आदमी अहंकार रूपी उस अंधेरे से बचा रहता है, जो काम करने से पैदा होता है, और तरक्की को रोकता है। एक बार मैं डॉक्टरों और हस्पतालों के चक्कर इसलिए लगाने लग गया था, क्योंकि मैं काम से थकता ही नहीं था। आम लोग तो इसलिए हॉस्पिटल जाते हैं क्योंकि वे काम से जल्दी थक जाते हैं। पर मेरे साथ उल्टा हो रहा था। कुंडलिनी मेरे ऊपर भूत बनकर सवार थी। कुंडलिनी शायद वह भूत है, जिसका वर्णन एक कहानी में आता है कि वह कभी खाली नहीं बैठता था, और पलक झपकते ही सब काम कर लेता था। जब उसे काम नहीं मिला तो वह आदमी को ही परेशान करने लगा। फिर किसी की सलाह से उसने उसे खम्बे को लगातार गाड़ते और उखाड़ते रहने का काम दिया। मतलब आदमी लगातार किसी न किसी काम में व्यस्त रहा। वैसे तो कुंडलिनी भली शक्ति है, कभी बुरा नहीं करती, होली घोस्ट की तरह। शायद होली घोस्ट नाम इसीसे पड़ा हो। फिर भी कुंडलिनी को हैंडल करना आना चाहिए। मुझे तो लगता है कि आजकल जो अंधी भौतिक तरक्की हो रही है, उसके लिए अनियंत्रित व मिसगाइडिड कुंडलिनी ही है।

अद्वैत का चिंतन कब करना चाहिए

किसी चक्र पर ध्यान देते हुए यदि अद्वैत की अवचेतन भावना भी की जाए, तो आनन्द व संकुचन के साथ कुंडलिनी उस चक्र पर प्रकट हो जाती है। यदि मस्तिष्क के विचारों या मस्तिष्क के प्रति ध्यान देते समय अद्वैत का ध्यान किया जाए, तो मस्तिष्क में दबाव व आनन्द के साथ कुंडलिनी प्रकट हो जाती है। इससे मस्तिष्क जल्दी ही थक जाता है।

योग में आसनों व प्राणायाम का क्रम

फिर कहते हैं कि पहले आसन करने चाहिए। उसके बाद प्राणायाम करना चाहिए। अंत में कुंडलिनी ध्यान करना चाहिए। प्राणायाम में भी सबसे पहले कपालभाति किया जाता है। मैं भी अपने अनुभव से बिल्कुल इसी क्रम में करता हूँ। आसनों से थोड़ा नाड़ियां खुल जाती हैं। इसलिए प्राणायाम से उनमें आसानी से कुंडलिनी ऊर्जा का प्रवाह प्रारम्भ हो जाता है। कपालभाति से भी नाड़ियों को खोलने के लिए भरपूर ताकत मिलती है, क्योंकि इसमें झटके से श्वास-प्रश्वास चलता है। लगभग 25-30 आसान हैं हठयोग प्रदीपिका में। कुछ मेरे द्वारा किए जाने वाले आसनों से मेल खाते हैं, कुछ नहीं। इससे फर्क नहीं पड़ता। ऐसे आसनों का मिश्रण होना चाहिए, जिससे लगभग पूरे शरीर का व्यायाम हो जाता हो। विशेष ध्यान पीठ और उसमें चलने वाली तीन मुख्य नाड़ियों पर होना चाहिए। मैं भी अपने हिसाब के 15-20 प्रकार के आसन कर ही लेता हूँ। मैं कुर्सी पर ही प्राणायाम करता हूँ। सिद्धासन आदि में ज्यादा देर बैठने से घुटने थक जाते हैं। कुर्सी में आर्म रेस्ट न हो तो अच्छा है, क्योंकि वे ढंग से नहीं बैठने देते। कुर्सी पर गद्दी भी रख सकते हैं। कुर्सी उचित ऊंचाई की होनी चाहिए।

नाड़ीशोधन प्राणायाम मूल प्राणायाम के बीच में खुद ही होता रहता है

प्राणायाम में कपालभाति के बाद कुछ देर बाएं नाक से सांस भरना और दाएं नाक से छोड़ना और फिर साँसों की घुटन दूर करने के लिए नाड़ी शोधन प्राणायाम करना मतलब हर सांस के साथ नथुने को बदलते रहना जैसे कि बाएं नाक से सांस लेना और दाएं से छोड़ना, फिर दाएं से लेना और बाएं से छोड़ना, और इसी तरह कुछ देर के लिए करना जब तक थकान दूर नहीँ हो जाती। फिर कुछ देर विपरीत क्रम में साँसे लेना, और विपरीत क्रम में नाड़ी शोधन प्राणायाम करना मतलब दाएं नथुने से शुरु करना। फिर दोनों नाकों से एकसाथ सांसें लेना और छोड़ना। फिर से साँसों की घुटन दूर करने के लिए कुछ देर एक तरफ से और कुछ देर दूसरी तरफ से नाड़ी शोधन प्राणायाम शुरु करना। इसी तरह, कुंडलिनी ध्यान करते समय जब साँसों को रोका जाता है, उससे साँस फूलने पर भी नाड़ी शोधन प्राणायाम करते रहना चाहिए। इस तरह से नाड़ी शोधन प्राणायाम खुद ही होता रहता है। अलग से उसके लिए समय देने की जरूरत नहीं।

कुंडलिनी के लिए किए गए प्रयास के प्रति भी अहंकार के नष्ट होने से ही कुंडलिनी जागरण होता है

मनरूपी आँख को ही तीसरी आँख कहते हैं

जब हमें नींद आ रही हो लेटे-लेटे और उस समय हम खड़े हो जाएं तो एकदम नींद भाग जाती है। दरअसल खड़े होने से व तनिक हिलने-डुलने से पीठ से ऊर्जा ऊपर चढ़ती है। मैं पिछली पोस्ट में कुंडलिनी से पैदा हुई अति संवेदनशीलता के कारण अजीबोगरीब घटनाओं की संभावनाओं के बारे में बात कर रहा था।जब कुंडलिनी मस्तिष्क में क्रियाशील या जागृत होती है, तब मस्तिष्क की संवेदनशीलता बहुत बढ़ जाती है। इंद्रियों के सारे अनुभव तीव्र महसूस होते हैं। उदाहरण के लिए, खाने में स्वाद कई गुना बढ़ जाता है। सुगन्धि भी कई गुना मजबूत महसूस होती है। वास्तव में जिस प्राण ऊर्जा से इन्द्रियातीत कुंडलिनी उजागर हो सकती है, उससे अन्य इन्द्रियातीत अनुभव भी प्रकट हो सकते हैं, जैसे कि उड़ने का अनुभव, पानी पर चलने का अनुभव। इन्हें ही योगसिद्धियाँ कहते हैं। दरअसल ये अनुभव शरीर से नहीं, केवल मन से होते हैं। यह ऐसे ही होता है, जैसे कुंडलिनी के दर्शन आँखों से नहीं, बल्कि मन से होते हैं। इसी जागृत मन को ही तीसरी आँख का खुलना कहा गया है। क्योंकि मन से ही सारा संसार है, इसीलिए प्राचीन योग पुस्तकों में ऐसे मानसिक अनुभवों को शारीरिक अनुभवों की तरह लिखा गया है, ताकि आम आदमी को समझने में आसानी हो। पर अधिकांश लोग इन्हें शारीरिक या असल के भौतिक अनुभव समझने लगते हैं। समर्पित कुंडलिनी योगी अधिकांशतः कुंडलिनी से ही जीवन का महान आनन्द प्राप्त करता रहता है। वह जीवन के आनंद के लिए भौतिक वस्तुओं के अधीन नहीं रहता। इसलिए स्वाभाविक है कि यदि किन्हीं सांसारिक क्लेशों से उसकी कुंडलिनी क्षतिग्रस्त या कमजोर हो जाए, तो वह अवसाद रूपी अंधेरे से घिर जाएगा। ऐसा इसलिए होगा क्योंकि उसे आनन्द प्राप्ति का दुनियादारी वाला तरीका एकदम से समझ नहीं आएगा, और न ही रास आएगा। इसीलिए कहते हैं कि मध्यमार्ग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है, क्योंकि इसमें अध्यात्म और दुनियादारी साथ-साथ चलते हैं, ताकि किसी की भी कमी से हानि न उठानी पड़े।

सीडेंटरी लाइफस्टाइल भौतिकता और आध्यात्मिकता दोनों का दुश्मन है

योग करते समय अद्वैत चिंतन ज्यादा सफल होता है, क्योंकि अद्वैत का सदप्रभाव कुंडलिनी के माध्यम से ही प्राप्त होता है। योग करते समय सभी नाड़ियाँ मुख्यतः सुषुम्ना नाड़ी और चक्र खुले हुए रहते हैं। इससे अद्वैत से उजागर होती हुई कुंडलिनी आसानी से उपयुक्त चक्र पर काबिज हो जाती है। यदि मानसिक ऊर्जा का स्तर कम हो, तो कुंडलिनी नीचे के चक्रों पर काबिज होती है, और अगर मानसिक ऊर्जा अधिक हो, तो कुंडलिनी ऊपर के चक्रों की तरफ भागती है। इसी तरह अन्य किसी भी प्रकार की शारीरिक क्रियाशीलता के समय अद्वैत का ध्यान करने से भी इसी वजह से ज्यादा कुंडलिनी लाभ मिलता है। सुस्ती और शिथिलता के मौकों पर नाड़ियाँ और चक्र सोए जैसे रहते हैं, जिससे उनमें कुंडलिनी आसानी से संचरण नहीं कर सकती। इसी वजह से आदमी के बीमार पड़ने का डर भी बना रहता है। इसी वजह से सीडेंटरी लाइफस्टाइल वाले लोग न तो भौतिक रूप से और न ही आध्यात्मिक रूप से समृद्ध होते हैं।

सद्‌प्रयास कभी विफल नहीं होता

जितने भी विश्वप्रसिद्ध, कलाकार व समृद्ध व्यक्ति हैं, उनसे मुझे अपना गहरा रिश्ता महसूस होता है। वे मुझे अपने बचपन के दोस्तों व परिजनों के जैसे महसूस होते हैं। हो सकता है कि मैं पिछले जन्म में सम्भवतः उन्हीं की तरह भौतिक तरक्की के चरम तक पहुंच गया था। फिर मुझे कुंडलिनी जागरण की इच्छा महसूस हुई होगी और मैंने उसके लिए प्रयत्न भी किया होगा, पर मुझे सफलता न मिली होगी। उसीके प्रभाव से मुझे इस जन्म में पिछले जन्म के सम्पन्न, जगत्प्रसिद्ध व आध्यात्मिक व्यक्तित्वों के बीच में जन्म मिला होगा। क्षणिक कुंडलिनी जागरण की अनुभूति भी उसी के प्रभाव से मिली होगी। मेरे संपर्क के दायरे में आने वाले व्यक्ति भी पिछले जन्म के महान लोग रहे होंगे, और उन्हें कुंडलिनी का भी कुछ न कुछ साथ जरूर मिला होगा। उसी कुंडलिनी प्रभाव से वे मेरे संपर्क के दायरे में आए होंगे। इसका मतलब है कि सद्‌प्रयास कभी विफल नहीं जाता। वैसे भी स्वाभाविक रूप से कुंडलिनी जागरण की इच्छा भौतिकता का चरम छू लेने पर ही होती है। मनोवैज्ञानिक रूप से ऐसा भी हो सकता है कि कुंडलिनी जागरण की शक्ति से ही मुझे शक्तिशाली व्यक्तियों व वस्तुओं से अपनापन लगता हो, क्योंकि सभी शक्तियों का खजाना कुंडलिनी जागरण ही तो है।

प्रयास के बिना या अपने आप कुछ भी प्राप्त नहीं होता

रहस्यमय दृष्टिकोण ने मनुष्य को लापरवाह बना दिया है। इससे वह चमत्कार होने की प्रतीक्षा करता है। यह ब्लॉग इस रहस्यवाद को तोड़ रहा है। कुंडलिनी जागरण सहित सब कुछ वैज्ञानिक है और इसके लिए भी भौतिक चीजों की तरह लंबे समय तक एक निरंतर तार्किक दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। इस ब्लॉग व वेबसाइट में किताबों सहित मेरी तथाकथित स्वतःस्फूर्त जागृति की घटना के बारे में पढ़ने के लिए सब कुछ है। मुख्य रूप से, किताब लव स्टोरी

ऑफ ए योगी, फिर कुंडलिनी विज्ञान~ एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान, भाग १ और २। इसके अलावा, इस ब्लॉग का अनुसरण करने से हर हफ्ते ताज़ा सामग्री भी मिलेगी। मेरे बारे में कई लोग सोचते हैं कि मुझे अपनेआप या बिना किसी प्रयास के उच्च आध्यात्मिक अनुभव हुए। काफी हद तक बात भी सही है, क्योंकि मैंने इनके लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए। मुझे अनुकूल परिस्थितियां मिलती गईं, और सब कुछ खुद से होता रहा। पर मेरे पूर्वजों की जो मेहनत इसमें छुपी हुई है, वह किसी को नहीं दिखाई देती। कम से कम मेरी तीन पीढ़ियों से मेरे परिवार में आध्यात्मिकता और उच्च कोटि के आदर्शवाद का बोलबाला था। इस वजह से समाज में दूर-दूर तक मेरे परिवार का नाम और मान-सम्मान होता था। मेरी दो पीढ़ियों से मेरा परिवार ब्राह्मण पुरोहिताई का काम करता आ रहा है। इस काम में वैदिक कर्मकांड किया जाता है। वैदिक कर्मकांड दरअसल कुंडलिनी योग का प्रथम अध्याय ही है, क्योंकि यह आदमी का कुंडलिनी से परिचय करवाता है, और उसे आसान व दुनियादारी वाले तरीक़े से मन में मजबूती प्रदान करता है। ऐसे आध्यात्मिक परिवार की संगति से ही मेरे मन में कुंडलिनी ने अनायास ही अपना पक्का डेरा जमाया। इसका मतलब है कि मेरे परिवार की सैकड़ों सालों की मेहनत का फल मेरे अंदर प्रकट हुआ। मुझे अपनेआप कुछ नहीं मिला। अपनेआप कुछ नहीं मिलता। यदि हम आध्यात्मिकता के रास्ते पर चलते रहेंगे, तो हमारे बच्चों, पौत्रों, प्रपौत्रों आदि को उसका फल मिलेगा। उन्हें अपनेआप कुछ नहीं मिलेगा। इसका मतलब है कि कुंडलिनी के लिए किया गया प्रयास कभी विफल नहीं होता। यदि प्रयास करने वाले को एकदम से फल मिलता न दिखे, तो समाज व दुनिया को अवश्य मिलता है। कालांतर में प्रयास करने वाले को भी फल मिल ही जाता है।

जागरण के लिए ध्यान या योग करने का अहंकार भी त्याग देना चाहिए

कुंडलिनी जागरण एक दुर्लभ घटना है। इसके लिए शायद ही कभी जोरदार प्रयास की आवश्यकता होती है। हां, जबरदस्त प्रयासों से मानसिक और शारीरिक रूप से इसके लिए तैयार हुआ जा सकता है। बलपूर्वक प्रयास मनुष्य में उपलब्ध प्राण ऊर्जा के स्तर पर होना चाहिए अन्यथा अत्यधिक बलपूर्वक प्रयास शरीर और मन को नुकसान पहुंचा सकता है। मैंने ऐसी ही संतुलित कोशिश की थी। मैं 15 वर्षों तक दुनिया के साथ बहता रहा, हालांकि मेरे अपने स्वयं के अनूठे दर्शन के माध्यम से मेरा हमेशा अद्वैतवादी रवैया बना रहता था। फिर मैंने प्राण शक्ति की अधिकता होने पर एक वर्ष तक बलपूर्वक हठयोग और फिर अगले एक मास तक तांत्रिक योग किया। फिर मैंने अपना यह अहंकार भी त्याग दिया, और मैं फिर से संसार के साथ बहने लगा। योग यथावत चलता रहा। योग आदि करने के इस अहंकार के त्यागने से ही मुझे अंततः कुण्डलिनी जागरण की सहजता से एक झलक मिली। फिर भी कोई बड़ा तीर नहीं चला लिया, क्योंकि जागृति से कहीं ज्यादा महत्त्व तो जागृत जीवनचर्या का ही है। संक्षेप में कहूँ तो केवल झलक इसलिए, क्योंकि मेरा उद्देश्य कोई ज्ञानप्राप्ति नहीं था, बल्कि मैं कुंडलिनी जागरण को वैज्ञानिक रूप में अनुभव करना चाहता था, और लोगों को बताकर उन्हें गुमराही से बचाना चाहता था। आखिर इच्छा पूरी हो ही जाती है। इसका मतलब है कि जागरण के लिए ध्यान या योग या अन्य पुण्य कर्म करने का अहंकार भी त्याग देना चाहिए। यह शास्त्रों में एक प्रसिद्ध उपदेशात्मक वाक्य द्वारा बताया गया है कि सतोगुण से आध्यात्मिकता बढ़ती है और उस सतोगुण के प्रति भी अहंकार को नष्ट करने से ही जागृति प्राप्त होती है। सतोगुण का मतलब है, योगसाधना के प्रभाव से मन व शरीर में प्रकाशमान दैवीय गुणों का प्रकट होना। इससे पहले मैं भी इस उपदेश के रहस्य को नहीं समझता था, परन्तु अब ही मुझे इसका मतलब स्पष्ट, व्यावहारिक व अनुभवात्मक रूप से समझ आया है। मुझे जागृति काल के दौरान न तो यह और न ही वह भावना या इमोशन, किसी विशेष रूप में अनुभव हुई। कोई विशेष संवेदना भी महसूस नहीं हुई, जैसे कि लोग अजीबोगरीब दावे करते रहते हैं। यह सब सिर्फ शक्ति का खेल ही तो है। जानबूझकर जागृति के लिए, लोग अक्सर अहंकार से भरे विभिन्न रास्ते अपनाते हैं, और इसी वजह से इसे कभी हासिल नहीं कर पाते हैं। कुछ अन्य लोग शांत रहते हैं, और सामान्य दुनियावी नदी के बीच बहते रहते हैं, हालांकि अपने अहंकार को मिटा कर रखते हैं। वे इसे विशेष व जानबूझकर किए जाने वाले प्रयास के बिना भी प्राप्त कर लेते हैं। कई दोनों के संतुलन वाला मध्यमार्ग अपनाते हैं, जिससे सबसे जल्दी सफलता मिलती है। मेरे साथ भी सम्भवतः यही मध्यमार्ग चरितार्थ हुआ लगता है।

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) Love story of a Yogi- what Patanjali says

2) Kundalini demystified- what Premyogi vajra says

3) कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तक 1,2,3 और 4)

4) The art of self publishing and website creation

5) स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला

6) कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है

7) बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी

8) ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट

9) My kundalini website on e-reader

10) शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)

11) श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम

12) सोलन की सर्वहित साधना

13) योगोपनिषदों में राजयोग

14) क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव

15) देवभूमि सोलन

16) मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र

17) बघाटेश्वरी माँ शूलिनी

18) म्हारा बघाट

19) भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस

20) Kundalini science~a spiritual psychology (books 1,2,3, and 4)

21) Dance of Unity

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज “शॉप (लाईब्रेरी)” पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,“https://demystifyingkundalini.com/” को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु